

# “वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन”



महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय  
के अन्तर्गत

“विद्या वारिधि” (पी०एच०डी०)

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2014

शोध निर्देशक  
डॉ० निलिम्प त्रिपाठी

अनुसंधित्सु  
प्रज्ञा त्रिपाठी

महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय







22629







22629







# “वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन”



महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय  
के अन्तर्गत

“विद्या वारिधि” (पी०एच०डी०)

उपाधि हेतु प्रस्तुत

यह पुस्तक देय नहीं है।

सन्दर्भ पुस्तक

शोध-प्रबन्ध

2014



शोध निर्देशक  
डॉ० निलिम्प त्रिपाठी

अनुसंधित्सु  
प्रज्ञा त्रिपाठी

महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय







# महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय

## मध्य प्रदेश

### शोध प्रबन्ध — प्रस्तुति

#### प्रमाण — पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कुलसचिव महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय मध्य प्रदेश के पत्रांक मेमो/शैक्षणिक/2010 दिनांक 18/1/10 के अनुसार श्रीमती प्रज्ञा त्रिपाठी को महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय मध्य प्रदेश केन्द्र से “विद्या वारिधि” (पी0एच0डी0) (संस्कृत) उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में “ वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन” शीर्षक को शोधार्थ स्वीकृत एवं पंजीकृत किया गया है। श्रीमती प्रज्ञा त्रिपाठी ने उक्त विषयक शोध —प्रबन्ध पूर्ण कर लिया है। यह शोध—प्रबन्ध — मौलिक तथा इन्हीं के द्वारा पूर्ण किया गया है।

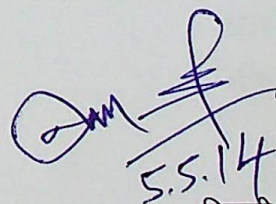
अतः उल्लिखित शोध प्रबन्ध को मूल्यांकन हेतु विश्वविद्यालय कार्यालय में प्रस्तुत किये जाने की संस्तुति की जाती है।

दिनांक

विभागाध्यक्ष (संस्कृत)

महर्षि महेश योगी वैदिक

विश्वविद्यालय (म0प्र0)



शोध निर्देशक

(डॉ0 निलिम्प त्रिपाठी)

निवासी— सी0190 ,न्यू मिनाल रेजीडेन्सी

जे0 के0 रोड भोपाल

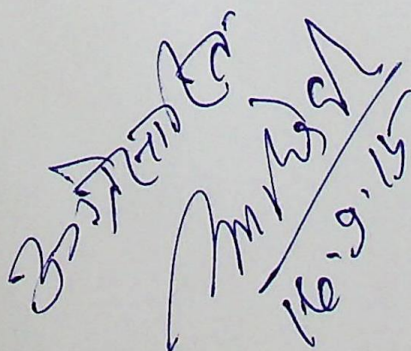
फोन — 0755— 2684064

मो0— 09424466697

प्राचार्य

महर्षि महेश योगी वैदिक

विश्वविद्यालय (म0प्र0)









### घोषणापत्र

मैं यह शपथ पूर्वक घोषित करता हूँ कि प्रस्तुत शोधप्रबन्ध जिसका शीर्षक “ वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् का समीक्षात्मक अध्ययन” है, संदर्भ ग्रन्थ पर आधारित मेरा मौलिक शोध कार्य है। मैं यह भी घोषित करती हूँ कि यह शोधकार्य मैंने किसी भी विश्वविद्यालय या संस्थान में किसी भी उपाधि आदि की प्राप्ति हेतु प्रस्तुत नहीं किया है।

प्रज्ञा त्रिपाठी

प्रज्ञा त्रिपाठी

शोधकर्त्री का नाम







### प्राक्कथन

कभी —कभी ऐसी घटनाएँ होती हैं जो जीवन को एक नयी दिशा की ओर मोड़ देती हैं अनचाहे भी कुछ ऐसे अवसर आ जाते हैं, जो मानव हृदय में एक ऐसी तरंग उत्पन्न कर देते हैं, जो अभिव्यक्ति के रूप में एक सागर का रूप ले लेती हैं। यही कारण था कि क्रौंच पक्षी के वियोग ने वाल्मीकि के हृदय में भी एक ऐसी धारा प्रवाहित हुई जो आदिकाव्य रामायण का आदि स्त्रोत बन गयी।

अपने अध्ययन काल में मुझे भी बी०ए० तृतीय वर्ष की कक्षा में कुछ ऐसा ही हुआ। जब मुझको साकेतसौरभम् महाकाव्य पढ़ने को मिला। इस काव्य की कथावस्तु तो संस्कारगत हमारी ही है। साथ ही इसके पद्यानुवाद की शैली एवं संस्कृत छन्दों के नवीन रूपों में मुझे इस ग्रन्थ को अद्यान्त पढ़ने के लिए विवश किया। यही कुतूहल था। जिसने शोधार्थिनी के भीतर शोध कार्य को जिज्ञासा का स्फुरण किया।

स्नाकोत्तर कक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् हमारे हृदय के भीतर सुकबुगाती हुई कामना मूर्त रूप लेने के लिए छटपटाने लगी, और कार्य को मूर्त रूप देने के लिए अनेक उपायों एवं साधनों के लिए प्रयत्न प्रारब्ध किया। इस सम्बंध में हमारे पूज्य पिता श्री दिनेश मिश्र जी ने विशेष उत्साहित किया, और इसी का परिणाम था, राम कथाकाव्य काव्य धारा के इस काव्य “साकेतसौरभम्” में निहित तथ्यों को अन्वेषित करने के लिए मैंने इसे शोध कार्य का विषय बनाया।

इस कार्य को अन्तिम सोपान तक पहुँचाने के लिए शोध निर्देशक डॉ० निलिम्प त्रिपाठी की सहर्ष स्वीकृत प्राप्त हुई और उनके परामर्श से “वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन” शीर्षक विषय को पी० एच० डी० (संस्कृत) उपाधि हेतु शोधार्थ “महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय म० प्र० में अपने शोध







संक्षिप्ति को प्रस्तुत की जो विश्वविद्यालय की शोध समिति के विद्वानों द्वारा उसे स्वीकार करके मुझे अनुगृहीत किया।

उल्लिखित दोनों ग्रन्थों के कथा संयोजन साहित्य सौष्ठव एवं रामकथा काव्य धारा के प्रवाहित प्रवाह को सुगति देने के लिए यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत है। वस्तुतः इस कार्य में अनेक विद्वानों एवं आत्मीय जनों का अकथनीय सहयोग प्राप्त हुआ है, जिनके प्रति हम कृतज्ञ है। वस्तुतः इन लोगों के सहयोग एवं ज्ञान भण्डार की अपार राशि के प्रवाह से मुझे अपना शोध प्रबन्ध पूर्ण करने में बड़ी सहायता मिली है। इनका सहयोग हमारी इस शोध यात्रा में पाथेय रहा है।

जहाँ तक शोध प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण का प्रश्न है। इसे छः अध्यायों में विभक्त करके अनुशीलन किया गया है।

इस प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् महाकाव्यों का परिचयांकन एवं कवियों के व्यक्तित्व का परीक्षण किया गया है।

द्वितीय अध्याय में रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों का संक्षिप्त परिचय और उनमें साकेतसौरभम् की क्या स्थिति है, बताया गया है और उसका अन्य आधुनिक रामकथा परक महाकाव्यों से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। संस्कृत व्याख्या एवं उसके स्वरूप का वर्णन भी इसी अध्याय में किया गया है।

तृतीय अध्याय में साकेतसौरभम् की विलक्षणता दर्शायी गयी है। इस अध्याय में मूल रामकथा से विविध कथा प्रसंगों के सन्दर्भों में कितना अनुकरण है और कितना कवि की कल्पना पर आधारित है बताया गया है।

चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत 'साकेतसौरभम्' की भाषा, शैली, छन्द, अलंकार निरूपण, रस, भाव सम्पदाओं के विवेचन का वर्णन किया गया है।







पंचम अध्याय में वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के भाव पक्ष एवं शिल्प पक्ष का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

षष्ठम अध्याय में वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के रामकथा की वर्तमान में क्या प्रासंगिकता एवं आवश्यकता हैं इसे विश्लेषित किया गया है। अन्य रामकथा परक महाकाव्यों में प्रयुक्त नवीन सन्दर्भों की समाज में क्या आवश्यकता है इसे भी इसी अध्याय में विवेचित किया गया है।

अन्तिम अध्याय शोध-प्रबन्ध का उपसंहार है, इसमें प्रबन्ध की सम्पूर्ण उपलब्धियों का लेखा-जोखा प्रस्तुत करके प्रबन्धस्तर को उपसंस्कृत किया गया है।

वस्तुतः यह शोध प्रबन्ध कार्य का मार्ग दर्शन करने के लिए महर्षि तुल्य निर्देशक आचार्य प्रवर डॉ० निलिम्प त्रिपाठी जी प्रभु-कृपा की सजीव मूर्ति के रूप में मुझे प्राप्त हुए। इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में सबसे अधिक सहयोग डॉ० मनमोहन शुक्ल जी का प्राप्त हुआ जो अत्यन्त व्यस्त एवं गहन अध्ययन में लीन रहते हुए अपने सहज वात्सल्य पूर्ण व्यवहार से मेरे उत्साह को गति देकर अपेक्षित सुविधाएं एवं सहयोग प्रदान किये। इसके अतिरिक्त डॉ० गिरिजाशंकर मिश्र, डॉ० गायत्री शुक्ला, डॉ० राममुनि पाण्डेय, डॉ० जनार्दन पाण्डेय (मणि) डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी के अतिरिक्त के महर्षि महेश योगी विश्वविद्यालय के सभी गुरुजनों के प्रति आभार व्यक्त करना अपना पुनीत कर्तव्य समझती हूँ। जिनके उत्साहवर्धन एवं ज्ञानकोष से शोध प्रबन्ध के लेखन का कार्य पूर्ण हो सका।

मैं अपने पूज्यनीय माता-पिता श्री दिनेश मिश्र एवं माता श्रीमती निर्मला देवी तथा श्वसुर विद्याशंकर त्रिपाठी सास सरोज त्रिपाठी के चरण कमलों की वन्दना करती हूँ जिन्होंने मुझे सदैव प्रगति के पथ पर चलने का आशीर्वाद दिया तथा जिनकी उच्च शिक्षा की प्रेरणा एवं अभिलाषा से







शुद्ध कार्य को सम्पादित करने में समर्थ हो सकी। इस अवसर पर मैं अपने पति दुर्गा प्रसाद मणि त्रिपाठी जी के प्रति मैं विशेष रूप से आभारी हूँ जिनके अतुलनीय सहयोग से मैं यह शोध प्रबन्ध पूर्ण कर सकीं। इस शोध प्रबन्ध में मेरे मामा प्रमोद त्रिपाठी का भी अतुलनीय सहयोग प्राप्त हुआ है।

इसके लिए मैं इन गुरुजनों की आभारी हूँ और कृतकृत्य भी।

अन्य में मैं माँ दुर्गा के प्रति श्रद्धा से प्रणाम करती हूँ, जिनकी असीम अनुकम्पा से मैं यह शोध प्रबन्ध पूर्ण कर सकी। शोध प्रबन्ध कैसा बन पड़ा है, यह निर्णय, विद्वज्जनों पर छोड़ते हुए माँ शारदा के प्रति नतमस्तक हूँ।

प्रज्ञा त्रिपाठी





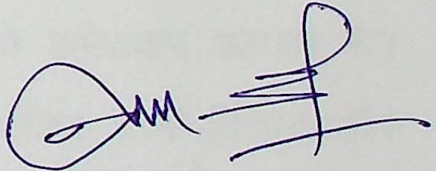


महर्षि महेश योगी वैदिक विश्वविद्यालय  
मध्य प्रदेश

शोध प्रबन्ध का शीर्षक—

वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् महाकाव्य  
का समीक्षात्मक अध्ययन  
की सारांशिका

प्रज्ञा त्रिपाठी  
5.5.14  
शोधार्थिनी  
प्रज्ञा त्रिपाठी

  
शोध-निर्देशक  
डॉ० निलिम्प त्रिपाठी



पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि उद्घृत विभाग

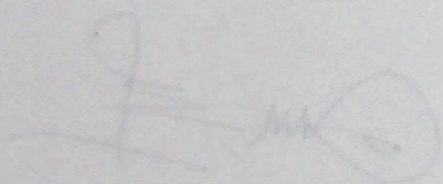
सन् १९३७

—कृष्ण वि. उद्घृत विभाग

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि उद्घृत विभाग

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि



कृष्ण वि. उद्घृत विभाग

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि  
५१.२.२

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि

पञ्चाङ्गनिर्णयनी कर्तव्य विधि



## भूमिका

महर्षि वाल्मीकि संस्कृत के आदिकवि है तथा उनका रामायण आदिकाव्य है। आदिकवि वाल्मीकि जी की कविता देश तथा काल की अवधि के द्वारा परिच्छिन्न नहीं की जा सकती है। वे उन विश्व कवियों में अग्रणी हैं जिनकी वाणी एक देश विशेष के प्राणियों का ही मंगल साधन नहीं करती और न किसी काल-विशेष के जीवों का मनोरंजन करती है। काल गणना के अनुसार संस्कृत साहित्य के विकास में आदिम होने पर भी वाल्मीकि की अमृतमयी वाणी में सौन्दर्य-सृष्टि का चरम उत्कर्ष है तथा महनीय काव्य कला का परम औदात्य है।

कवि कुल कमल दिवाकर आदिकवि वाल्मीकि और डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने अपने महाकाव्यों में एक ओर भक्ति ज्ञान और वैराग्य का दिव्य प्रवाह हैं तो दूसरी ओर नीति की निर्मल धारा भी प्रवाहित हो रही है। इन कवियों ने अपनी अनवरत तपश्चर्या एवं सतत् साधना के बल पर विश्व को संजीवनी औषधि प्रदान की है, जो रुग्ण मानवता के उपचार के लिए सदैव उपादेय सिद्ध होंगी।

नव्य संस्कृत साहित्य प्राक्तन वैश्विक साहित्य को समेटकर अग्रसर है। 'संस्कार-साम्राज्य' की राज्ञी 'संस्कृत भारती' विविध ज्ञान-विज्ञान और साहित्य विधाओं की साम्राज्ञी है, विविध ज्ञानानुशासनों और अनुसन्धानों के साथ कवियों की अन्तश्चेतना से आप्लावित रमणीय काव्य सर्जन अनेकधा प्रवर्तमान है। वाल्मीकि, व्यास और कालिदासादि कवियों द्वारा प्रवर्तमान काव्यधारा आज भी अविरलरूप में प्रवाहमान हैं। अनेक प्रशस्त रचनाएं विविध विधाओं में प्राचीन परम्परा और विश्व साहित्य के प्रभाव का मणिकाञ्चन संयोग दिखाई देता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तीन सौ से अधिक महाकाव्य जैसी विशालकाय विधाओं की रचना हुई है। अनेक नई







विधाओं में आज भी संस्कृत कवि रचनाएँ कर रहे हैं और इन्हीं नवीन कवियों में डॉ० भास्कराचार्यकृत साकेतसौरभम् आज चतुर्दिक प्रकाशित है।

संस्कृत साहित्य का अध्ययन करते हुए कतिपय राम कथाश्रित महाकाव्य यथा कालिदासकृत रघुवंशम्, रामचरितमानस तुलसीदासकृत रावणवध अथवा सेतुबन्ध , भट्टिकाव्य अथवा रावणवध, जानकीहरण, अभिनन्दनकृत रामचरित, रामायणमञ्जरी तथा दशावतार चरित, उदारराघव , जानकी परिणय, रामलिंगामृत, राघवोल्लास अभिराजकृत डॉ० राजेन्द्र मिश्र, प्रणीत जानकी जीवनम् , आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी, 'सनातन, ' रचित सीताचरितम् , डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी प्रणीत 'साकेतसौरभम्' वाल्मीकि कृत 'रामायण' इत्यादि महाकाव्यों का अवलोकन कर विशेषतः वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की भावभङ्गिगमा और इन कवियों का 'वागवैदुष्य' इतना प्रभावित किया कि वाल्मीकि रामायण एवं साकेत—सौरभम् पर अपने शोध प्रबन्ध लिखने की उत्कृष्ट इच्छा जागृत हुई और इसी को अपने शोध प्रबन्ध का विषय बनाना चाहा विश्वविद्यालय द्वारा पंजीयन भी हो गया, अतः मैंने वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् की समीक्षा करने का प्रयास प्रारम्भ किया। इसे आज अपने सुधीजनों के हाथों में सौंपते हुए हर्ष का अनुभव हो रहा है। वाल्मीकि रामायण एवं साकेत—सौरभम् में उदात्त मानव मूल्यों की दिव्यता और अपूर्व साहस सन्देश अवश्य ही सहृदयहृदयसंवेद्य है। इन्हीं रचनाओं की समीक्षा इस शोध प्रबन्ध में करने का विनम्र प्रयास किया गया है।

वैदिक काल से लेकर आज तक संस्कृत भाषा की धारा अक्षुण्य है, प्रायः विद्वानों ने यह माना है कि भारत का समस्त प्राचीन ज्ञान भण्डार संस्कृत में ही है भारतीयों के धर्मग्रन्थ पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृति ग्रन्थ, दर्शन , धर्मशास्त्र, महाकाव्य काव्य नाटक, गद्यकाव्य, गीतिकाव्य , आख्यान, काव्यशास्त्र , गणित ज्योतिष, नीतिशास्त्र, कामशास्त्र , आयुर्वेद,







धनुर्वेद , वास्तुकला, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, इतिहास, छन्दशास्त्र और कोश—ग्रन्थ तक संस्कृत में ही हैं। ज्ञान विज्ञान का ऐसा कोई अंग नहीं है जो संस्कृत भाषा में उपलब्ध नहीं है। यह प्राचीन ऋषि, महर्षियों, कवियों, और तत्त्वज्ञों के अथक परिश्रम का ही फल है कि इतना विस्तृत वाङ्मय संस्कृत में उपलब्ध हैं।

रामकथा काव्यों में प्रायः वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण तथा रामचरितमानस की कथा वस्तुओं को आधार बनाया गया है। राम सम्बन्धी महाकाव्यों की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता हैं। रामायण एवं रामकथा ने भारतीय जन जीवन को इतना प्रभावित किया है कि कवित्व में गौरव प्राप्ति के लिए मुख्य राम—कथा या उससे सम्बद्ध कथानक का आश्रय लेना आवश्यक सा हो गया है। वाल्मीकि की प्रौढ़ शैली एवं रामकथा का समन्वय मणिकाञ्जन संयोग सा हो गया है। अतः परवर्ती कवियों, नाटककारों और चम्पूकारों ने रामायण को अपना उपजीव्य काव्य माना है तथा अपने दृष्टिकोण से सम्बद्ध अंशों का संकलन किया हैं।

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् में आर्यों का आचार शास्त्र एवं धर्मशास्त्र हैं। यह मानव जीवन का सर्वांगीण आदर्श प्रस्तुत करता है। धार्मिक दृष्टि से प्राचीन संस्कृति आचार, सत्य, धर्म, व्रत, —पालन ,विविध यज्ञों का महत्व आदि का पूरा इतिहास प्रस्तुत करता है। सामाजिक दृष्टि से यह पति पत्नी के सम्बन्ध , पिता —पुत्र के कर्तव्य, गुरु—शिष्य का पारस्परिक व्यवहार, भाई का भाई के प्रति व्यवहार, व्यक्ति का समाज के प्रति उत्तरदायित्व , आदर्श पिता—माता —पुत्र—भाई , पति एवंपत्नी का चित्रण तथा आदर्श गृहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति करता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से यह राम राज्य का आदर्श , पाप पर पुण्य की विजय लोभ पर त्याग का प्राबल्य, अत्याचार और अनाचार पर सदाचार की विजय वानरों में आर्य संस्कृति का प्रसार, यज्ञादि का महत्व ,जीवन में नैतिकता



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.



सत्यनिष्ठा और कर्तव्य के लिए बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता हैं। राजनीतिक दृष्टि से ये ही राजा के कर्तव्य एवं अधिकार , राजा-प्रजा सम्बंध उच्च नागरिकता , उत्तराधिकार विधान, शत्रुसंहार , पाप विनाशन, सैन्य संचालन आदि विषयों पर महत्व पूर्ण प्रकाश डालता हैं।

रामकथा काव्यधारा में साकेतसौरभम् एक विलक्षण महाकाव्य है इसकी विलक्षणता, भाव एवं शिल्प दोनों पक्षों में दिखायी पड़ती हैं। डॉ० भास्कराचार्य द्वारा विरचित इस महाकाव्य में भारतीय सभ्यता झलकती है इसकी रचनाओं में हमारी संस्कृति का विश्व रंगमञ्च पर भव्य रूप दिखलायी पड़ता है। इस काव्य की वाणी राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है। राष्ट्रमंडल तथा विश्व कल्याण का मंजुल सामंजस्य त्रिपाठी जी के काव्यों में दृष्टिगत होता है इस महाकवि की वाणी में जिस प्रकार आदिकवि वाल्मीकि की रसमयी धारा प्रवाहित होती है, उसी प्रकार उपनिषदों तथा गीता का अध्यात्म भी मंजुल रूप में अपनी अभिव्यक्ति पा रहा है। भारतीय ऋषियों के द्वारा प्रचारित चिरन्तन तथ्यों को मनोभिराम शब्दों में भारतीय जगत के हृदय में उतारने का काम त्रिपाठी जी की कविता ने सुचारु रूप से किया । कविता का प्रणयन मानव हृदय की शाश्वत प्रवृत्तियों तथा भावों का आलम्बन कर दिया गया है। यही कारण है कि इनके भीतर ऐसी उदात्त भावना विद्यमान है जो भारतीयों को ही नहीं, प्रत्युत मानव मात्र के सदा प्रेरणा तथा स्फूर्ति देती रहेंगी। यही इस महाकाव्य की विलक्षण स्थिति है।

महाकव्य की दृष्टि से साकेतसौरभम् का वस्तुविधान भी प्रायः परम्परा से चले आते हुए रामकथा काव्यों तथा वाल्मीकि के अनुसार ही हैं। इस काव्य के प्रासंगिक एवं आधिकारिक प्रसंगों का स्वरूप पूर्ववर्ती रामकथा धाराओं से अलग नहीं है। विषय सम्बंधी कथानक , वर्णन सम्बंधी कथानक के नवीन रूप अवश्य दिखाई पड़ते हैं। इसी कारण साकेतसौरभम् के कथानक में एक नयापन अवश्य दिखाई पड़ता है।







साकेतसौरभम् के शिल्प विधान पर अगर हम दृष्टि पात करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि इसकी भाषा, अत्यन्त सरल, सहज एवं प्राञ्जल है। भाव प्रवणता की दृष्टि से साकेतसौरभम् में देवविषयकरति से अनुप्रमाणित 'भक्तिरस' ही अंगी रस में स्वीकारा जा सकता है। कवि ने अपने काव्य में रसों एवं भावों का विविध चित्रण किया है। चरित्रों के अतिरिक्त प्रकृति चित्रण में भी कवि ने भाव, विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों की ऐसे विलक्षण सृष्टि की है जो देखते ही बनती हैं।

इस प्रकार जब हम वाल्मीकि रामायण और साकेतसौरभम् की तुलना करते हैं तो वाल्मीकि रामायण स्वयं में एक उपजीव्य सिद्ध होता है यह महकाव्य बाद के कवियों के लिए निःसन्देह रूप से एक आधार प्रस्तुत करता है। वाल्मीकि रामायण में जितने भी प्रसंग आये हैं। चाहे वह सौन्दर्य चित्रण हो, प्रकृति चित्रण हो अथवा भिन्न भिन्न रसों एवं भावों को व्यक्त करने वाले विशद चित्रण हो वे सभी बाद के कवियों के लिए भाव चित्रण का एक आधार बनते हैं।

रामकाव्य परम्परा अन्यान्य काव्यों के समान 'साकेतसौरभम्' के प्रणेता "डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी" ने "वाल्मीकि रामायण" के भावचित्र वाले प्रसंगों को अपने काव्य में स्थान दिया है, इतना अवश्य है कि प्रसंगानुकूल कथ्य चित्रण में अपनी भाव प्रवणता एवं कल्पनाशीलता के द्वारा साकेत—सौरभम् के अनेक प्रसंग कवि द्वारा चमत्कारिक रूप से मार्मिक बना दिये गये हैं। कवि की यही प्रसंगानुकूलता कवि के भावपक्ष के चित्रांकन को सफल बना देती है।

वाल्मीकि रामायण के साथ जब हम शिल्प दृष्टि से तुलना करते हैं तो देखते हैं कि कवियों का शब्द विधान, भाषा की मञ्जुलता, शैलीका लालित्य, अलंकार विधान, प्रसंगानुकूल, छन्द योजना के द्वारा ये काव्य एक विलक्षण काव्य बन गये हैं।







वर्तमान में प्रासंगिकता की दृष्टि से सम्पूर्ण रामकाव्य धारा आज भी प्रासंगिक है। चाहे वाल्मीकि रामायण के चरित्र हो, चाहे अध्यात्म रामायण के, चरित्र हो, रामचरित मानस के चरित्र हो या साकेतसौरभम् के सभी अपने कथा चरित्र को सर्वथा निर्वाहन करने में सफल है। आज हमारे समाज एवं

विश्व की मानवता का चरम विकास राम के सार्वभौम नीतियों के सम्यक निर्वाह से सम्भव है। आज हमारे समाज में राम, लक्ष्मण, भरत, सीता जैसे चरित्रों का आदर्श हनुमान जैसे वीर का कथा चरित्र तथा रावण और कुम्भकर्ण जैसे अनैतिक आचरण की कथा चरित्रों की तुलना करने के लिए हमारे यहाँ भिन्न भिन्न कार्यों का आयोजन होता रहता है तथा उसके माध्यम से हमारे धर्म, हमारी संस्कृति तथा भावी पीढ़ी का आचार-विचार भी परिष्कृत होता रहता है, इसीलिए इस प्रकार के रामकथा काव्य हमारे देश, धर्म एवं संस्कृति के लिए सर्वथा उपादेय है और रहेंगे।

अतः हम कह सकते हैं कि आदि काव्य रामायण में रामकथा का जो भाव निकल पड़ा था, उसकी धारा कभी क्षीण और कभी स्मृति होती हुई आज तक अजस्र स्रोतस्विनी के समान प्रवाहित है। डॉ० त्रिपाठी का "साकेतसौरभम्" भी इसी कड़ी का विशिष्ट अवदान कहा जा सकता है।

प्रज्ञा त्रिपाठी







## विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

## प्रथम अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् एक परिचयांकन 07

## द्वितीय अध्याय

रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेतसौरभम् की स्थिति..79

## तृतीय अध्याय

साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—.

114

## चतुर्थ अध्याय

साकेतसौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता 178

## पंचम अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् तुलनात्मक समीक्षा 216

## षष्ठम् अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान  
में प्रासंगिकता 269

## सप्तम् अध्याय

उपलब्धि एवं उपसंहार 286

परिशिष्ट —संदर्भ ग्रन्थ सूची संलग्न..... 296



संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

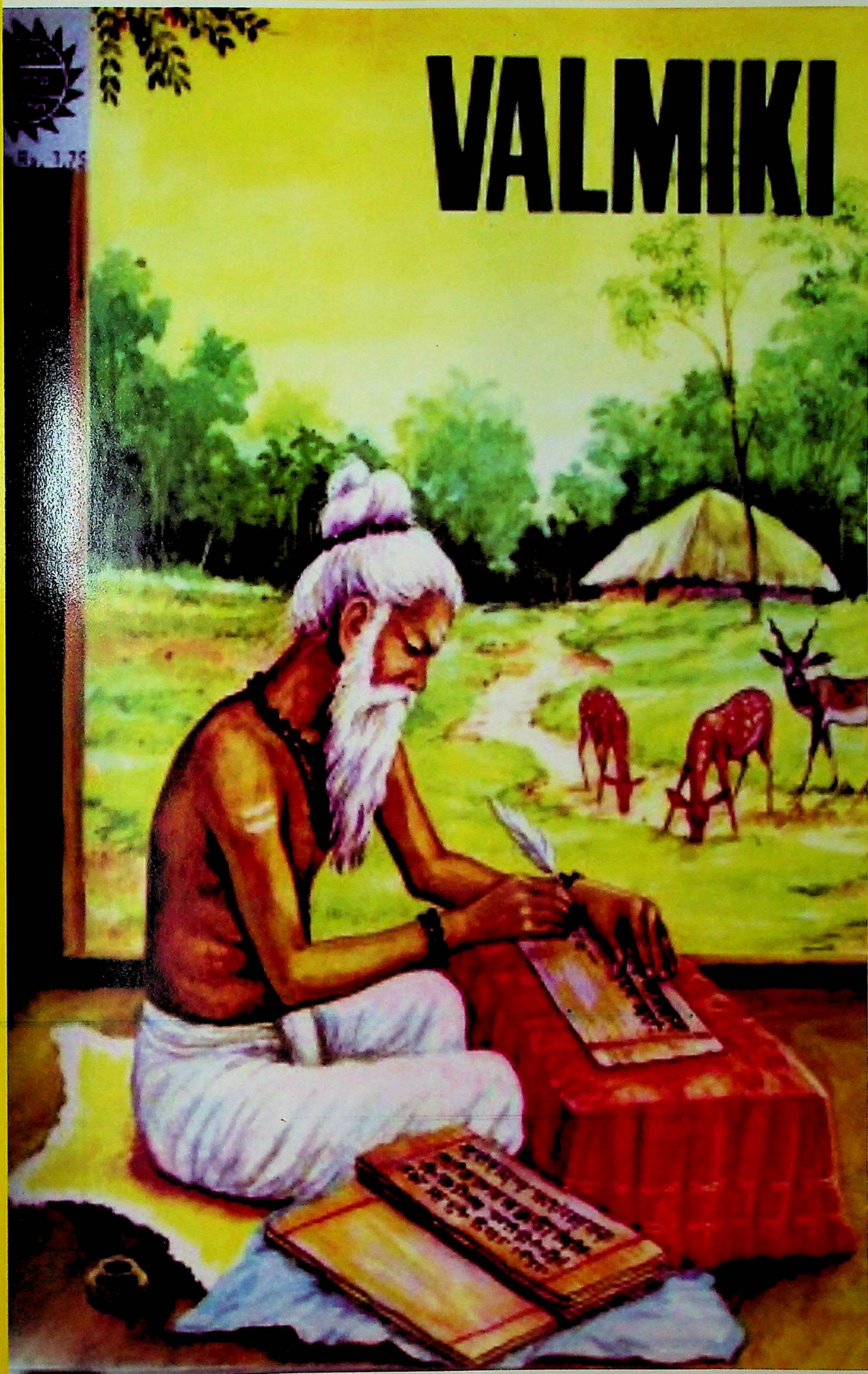
संस्कृत-सामान्य

संस्कृत-सामान्य

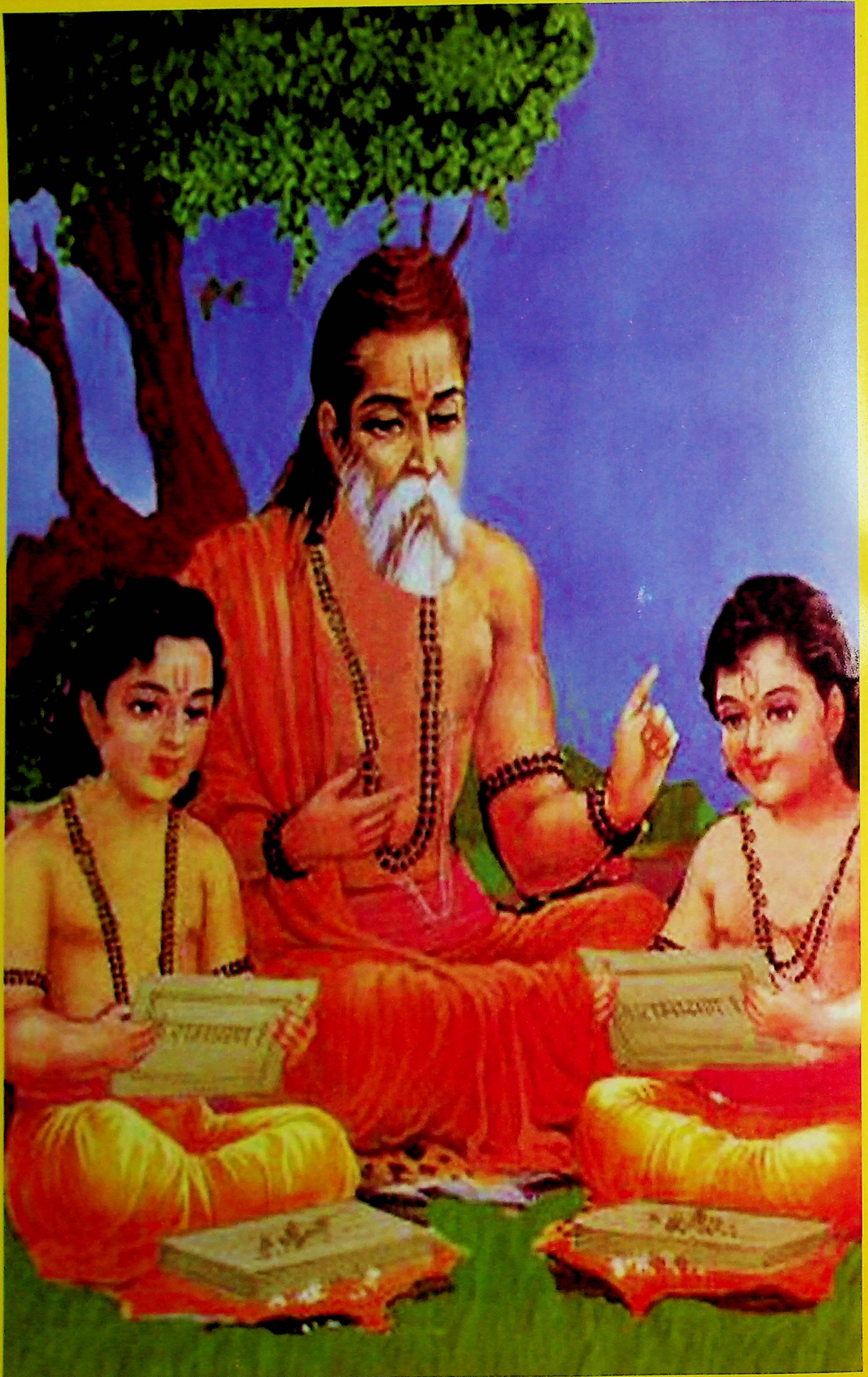
संस्कृत-सामान्य



# VALMIKI









## प्रथम अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् महाकाव्य का  
समीक्षात्मक अध्ययन

विषय प्रवेश— वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् एक  
परिचयांकन

- (क) वाल्मीकि रामायण प्रणयन एवं व्यक्तित्व परीक्षण
- (ख) साकेतसौरभम् प्रणयन एवं व्यक्तित्व परीक्षण
- (ग) समीक्षण —एक मूल्यांकन प्रविधि







## प्रथमः अध्याय —

विषय प्रवेश— वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम एक परिचयांकन

(क) वाल्मीकि रामायण प्रणयन एवं व्यक्तित्व परीक्षण :—

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण की रचना एक घटनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति है । इस महाकाव्य को आदिकाव्य माना जाता है और इसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि को आदिकवि माना जाता है। इस रचना के सम्बंध में व्याध के बाण से क्रौंच मिथुन में से एक नर की मृत्यु के बाद क्रौञ्ची के विलाप के करुण शब्दों से महर्षि का हृदय द्रवित हो गया और उनके मुख से अचानक जो छन्द फूटा। (1) उस अभिव्यक्ति को प्रथम छन्द के रूप में स्वीकार किया जाता है। यह एक जिज्ञासा बलवती होती है कि ऋषि के मन में निषाद के द्वारा बाण से बिधे हुए क्रौंच को देखकर उसे सदा के लिए प्रतिष्ठा न प्राप्त करने की बात क्यों उदभूत हुई ।

वस्तुतः कवि की लोकमंगल वाणी में इस अनुष्टुप् छन्द के उत्पन्न होने के मूल में राम और सीता के वियोग की कहानी पूर्व में ही थी, जिसके फलस्वरूप महर्षि के अनुभूति की ऐसी अभिव्यक्ति हुई, उनकी इस कल्याणमयी वाणी को सुनकर स्वयं ब्रह्मा जी उपस्थित हुए और कहा जाता है कि उन्होंने महर्षि को रामचरित लिखने के लिए प्रेरित किया। रामायण की रचना इसी प्रेरणा का फल है। यहाँ यह भी उल्लेख है कि उल्लिखित छन्द अनुष्टुप् छन्द है और इसीलिए वाल्मीकि इस छन्द के आविष्कारक माने जाते हैं।

(1) मा निषाद प्रतिष्ठाम् त्वमगमः शाश्वती समाः ।

यत् कौंच मिथुनादेकम् वधीःकाममोहितम् ॥ बा० रा० (बालकाण्ड-2-15)







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

आचार्य बलदेव के अनुसार उपनिषदों में भी अनुष्टुप छन्द है परन्तु लौकिक छन्द में व्यहृत होने वाले सम् अक्षर से युक्त होने वाले अनुष्टुप छन्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकि ने ही किया जिसमें लघुगुरु का निवेश नियमबद्ध था। (1)

वस्तुतः रामायण , महाभारत, श्रीमद्भागवत् काव्य ग्रन्थों के प्रायः उपजीव्य रहे हैं। इन ग्रन्थों में उपजीव्यता तथा काव्य की दृष्टि से समानता होने पर भी स्वरूपगत तथा कालगत विषमता स्पष्ट होती है। रामायण महाकाव्य है, महाभारत इतिहास है तथा श्रीमद्भागवत पुराण है। वाल्मीकि ने मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र के आदर्श चरित्र का अंकन रसात्मिका शैली के द्वारा किया है, जिसमें केवल श्रोत सुख देने वाले वर्णों का विन्यास न होकर सहृदयों के हृदयों को मुग्ध करने वाले वाग्विलास ही अधिक है। महाभारत शान्त रस—प्रधान सुहृत्सम्मित काव्य है, जिसमें व्यासदेव ने भारतीय संस्कृति के ग्राह्य आध्यात्मिक तथा व्यवहारिक रूप का अंकन पाण्डव—कौरव के संघर्ष के ब्याज से लिया है। इसी से यह मानवों के लिए सदाचार की सौम्य शिक्षा का एक विराट् कोश है।

श्रीमद्भागवत चरित — प्रधान होने से पुराण है, जिसमें मानवों के कल्याण के निमित्त धराधाम पर अवतीर्ण होने वाले भगवान के नाना चरित्रों , अवतारों तथा तत्सम्बद्ध कथाओं का मुख्यतया विवरण विन्यस्त है। स्वरूपगत विभेद के अतिरिक्त एक और भी भेद दृष्टिगोचर होता है कि वाल्मीकि रामायण रामचन्द्र के कार्यों का ही मुख्यतया प्रतिपादन होने से कर्म प्रधान है, महाभारत आचार, नीति तथा लोकव्यवहार का विशाल भंडार होने के कारण तथा श्रीमद्भागवतगीता जैसे अध्यात्म प्रधान ग्रन्थ के हेतु स्फुटतया ज्ञान—प्रधान है।

(1) आचार्य बलदेव उपाध्याय — संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ —24







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

भागवत लोक में न्याय-अन्याय , राग द्वेष, मैत्री-कलह के समस्त जागरुक संघर्ष को मिटाने तथा सरस सामंजस्य को स्थापित करने वाली भगवान् की मधुर लीलाओं का आगार होने के कारण नितान्त भक्ति प्रधान है। इस प्रकार रामायण, महाभारत तथा भागवत कर्मकालिन्दी, ज्ञान सरस्वती तथा भक्ति-गंगा की भव्य त्रिवेणी है जिसका अवगाहन काव्य के साधकों के कर्म ज्ञान तथा भक्ति की भावना को दृढ़ तथा युद्ध करने के लिए नितान्त आवश्यक है।(1)

बहुत से विद्वान लोग उत्तरकाण्ड को तथा बालकाण्ड के कतिपय अंश को एकदम प्रक्षिप्त बतलाते हैं। उनका कहना है कि बालकाण्ड के प्रथम और तृतीय सर्ग में जो विषय सूची दी गई हैं उसमें उत्तरकाण्ड का निर्देश नहीं है। जर्मन विद्वान याकोबी मूल रामायण में अयोध्या काण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक मानते हैं। लंकाकाण्ड के अन्त में ग्रन्थ होने की सूचना सी प्रतीत होती है, इसीलिए उत्तरकाण्ड को पीछे से जोड़ा गया हुआ माना जाता है। इस काण्ड में कुछ ऐसे आख्यानों की चर्चा है जिनका संकेत पहले के काण्डों में नहीं मिलता है। फिर भी हम यह नहीं कह सकते कि वह बहुत पीछे जोड़ा गया है।

बौद्धों में एक प्रसिद्ध जातक है— दशरथ जातक, जिसमें रामायण का वर्णन संक्षेप रूप में उपलब्ध होता है। इसमें पालि-भाषा में रुपान्तरित उत्तरकाण्ड का एक श्लोक हुबहु मिलता है। इस जातक का समय विक्रम पूर्व तृतीयशतक माना जाता है। अतः मानना पड़ेगा कि उत्तरकाण्ड की रचना, उक्त शतक से पहले की है।

(1)आचार्यबलदेव उपाध्याय — संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ-23







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

इस आदिकाव्य को चतुर्विंशति साहस्री संहिता कहते हैं, अर्थात् इसमें 24 हजार श्लोक हैं। ठीक उतने ही हजार जितने की गायत्री के अक्षर हैं। प्रत्येक हजार श्लोक का पहला श्लोक गायत्री मंत्र के अक्षर से ही क्रमशः आरम्भ होता है, यह विद्वान का कहना है कि अनुष्टुप छन्दों के अतिरिक्त अन्य छन्दों में भी पद्य मिलते हैं। विद्वान लोग इस ग्रन्थ में स्थान-स्थान पर क्षेपक भी मानते हैं, परन्तु काव्य में एकता का कहीं पर अभाव नहीं दीख पड़ा। ग्रन्थ में पाठ भेद भी कम नहीं है।

उत्तरी भारत, बंगाल, कश्मीर और दक्षिण भारत में रामायण के जो भी संस्करण उपलब्ध होते हैं उनमें पाठभेद बहुत ही अधिक हैं। उनमें एक दूसरे से श्लोकों का ही अन्तर नहीं है, प्रत्युत कहीं-कहीं तो सर्ग के सर्ग भिन्न दिखाई पड़ते हैं। वाल्मीकि का पाठ एक रूप नहीं है। आजकल इसके तीन पाठ प्रचलित हैं।

(1) दाक्षिणात्य पाठ: गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस (बम्बई) निर्णय सागर प्रेस (बम्बई) तथा दक्षिण के संस्करण । यह पाठ अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित तथा व्यापक है।

(2) गौडीय मठ :- गौरसिया (पेरिस) तथा कलकत्ता संस्कृत कालेज के संस्करण ।

(3) पश्चिमोत्तरीय पाठ- दयानन्द महाविद्यालय (लाहौर) का संस्करण।

इन पाठों की समीक्षा करने से गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठ अपेक्षाकृत बहुत निकट प्रतीत होते हैं। इन दोनों पाठों में दाक्षिणात्य पाठ आर्ष प्रयोग एक समान ही सुधारे गये हैं। फलतः दाक्षिणात्य पाठ अपेक्षाकृत मौलिक एवं प्राचीन माना जाना चाहिए । प्रतीत होता है कि ईस्वी पूर्व की शताब्दियों में आदि रामायण के दो पाठ धीरे-धीरे भिन्न होने लगे थे







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

उदीच्य पाठ तथा दाक्षिणात्य पाठ। गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठों में विभिन्नता होने पर भी मूलतः समानता है। अतः इन दोनों का सामान्य पाठ उदीच्य पाठ का प्रतिनिधि माना जाए, तो किसी प्रकार की विमति न होनी चाहिए। भारत के पश्चिमोत्तर तथा पूर्वी अंचल में प्रचलित होने से मूलतः एक होने वाला भी उदीच्य पाठ दो प्रकारों में विकसित हो गया।

डॉ० लेवि का अनुमान है कि कम से कम 500 ईस्वी से ये दोनों पाठ भिन्न होने लगे थे। इन समस्त विभिन्न पाठों की तुलना से बड़ौदा से रामायण का 'विमर्शात्मक संस्करण' प्रस्तुत किया जा रहा है, जो वाल्मीकि की मूल रचना का प्रामाणिक रूप उपस्थित करने वाला माना गया है। (1)

डॉ० कपिलदेव मानते हैं कि रामायण महर्षि वाल्मीकि की कृति है। इसमें राम-कथा आद्योपान्त वर्णित है। इसमें सात काण्ड हैं— बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड, और उत्तरकाण्ड। इसमें लगभग 24 सहस्र श्लोक हैं, अतः इसे 'चतुर्विंशति-साहस्री संहिता भी कहते हैं। यह मुख्यतः अनुष्टुप श्लोको में है। गायत्री मंत्र में 24 वर्ण होते हैं, अतः यह मान्यता है कि उसको आधार मानकर 24 हजार श्लोक बनाए गए हैं, और प्रत्येक एक हजार श्लोक के बाद गायत्री के नए वर्ण से नया श्लोक प्रारम्भ होता है। रामचरित का सर्वांगपूर्ण वर्णन होने के कारण यह धार्मिक ग्रन्थ एवं आचार-संहिता माना जाता है। यह परकालीन कवियों, नाटककारों और गद्य लेखकों का उपजीव्य (आधार) काव्य माना जाता है। भाव भाषा, शैली, परिष्कार और काव्यत्व के कारण रामायण का स्थान भारतीय काव्यों में सर्वोच्च माना जाता है। (2)

(1) आचार्य बलदेव उपाध्याय— संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ -24-25

(2) डॉ० कपिलदेव द्विवेदी संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 103-104

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले ।।

तावत् रामायण कथा लोकेषु प्रचरिष्यति ।। (रा० बा० 2-36)







संस्करण— (1) बम्बई संस्करण (देवनागरी संस्करण) निर्णय सागर प्रेस, बम्बई से 1902 ई० में प्रकाशित (सम्पादक के० पी० परब)। यह संस्करण उत्तर तथा दक्षिण भारत में सबसे अधिक प्रचलित एवं प्रामाणिक है। इसकी सबसे प्रसिद्ध टीका 'तिलक' है, जिस प्रसिद्ध वैयाकरण नागेश भट्ट ने अपने आश्रयदाता राजा 'राम' के नाम से की है।

(2) बंगाल संस्करण— यह संस्करण जी० गोरेशियो (G.Gorresio) ने (1843—1867ई०) में प्रकाशित किया था और उसका "इटैलियन भाषा" में अनुवाद किया था। यूरोप में सर्वप्रथम यही संस्करण छपा था। इसे गौडीय संस्करण भी कहते हैं।

(3) पश्चिमोत्तर संस्करण (काश्मीरी संस्करण) यह संस्करण रिसर्च विभाग, डी०ए०वी० कालेज लाहौर से 1813 में प्रकाशित संस्करण है। इसके टीकाकार का नाम 'कटक' है।

(4) दाक्षिणात्य संस्करण —कुम्भकोणम (मद्रास) से 1929—30 ई० में प्रकाशित। बम्बई संस्करण से इसमें बहुम कम पाठभेद है। बंगला और पश्चिमोत्तर संस्करणों में बहुत पाठभेद है। पाठभेद का मुख्य कारण रामायण की मौखिक परम्परा है। अतएव प्रान्तीय भेद के कारण बहुत पाठ भेद हो गये हैं। डॉ० द्विवेदी रामायण के मौलिक अंश के सम्बन्ध में लिखते हैं कि डॉ० विन्टरनिट्स ने अपने पूर्ववर्ती प्रो० बेबर तथा याकोबी आदि आलोचकों के मतों का संग्रह करते हुए रामायण के मौलिक एवं

---

(1) संस्करण बम्बई संस्करण (देवनागरी संस्करण)

(2) संस्करण—बंगाल संस्करण—यह संस्करण जी० गोरेशियो ने (1843—1867ई०) में प्रकाशित किया था।

(3) पश्चिमोत्तर संस्करण (काश्मीरी संस्करण) यह संस्करण रिसर्च विभाग डी०ए०वी० कालेज, लाहौर से 1813 में प्रकाशित हुआ।

(4) दाक्षिणात्य संस्करण —कुम्भकोणम (मद्रास) से 1929—30 ई० में प्रकाशित







प्रक्षिप्त अंशों की सारपूर्ण विवेचना की है। उन्होंने यह मन्तव्य उपस्थित किया है कि मूलरामायण में केवल कांड दूसरा (अयोध्याकाण्ड) से कांड छठा (युद्धकाण्ड) तक ही थे। बाल काण्ड पहला (कालकाण्ड) और काण्ड सातवाँ (उत्तरकाण्ड) परकालीन मिश्रण है। इसके लिए उन्होंने निम्नलिखित तर्क उपस्थित किए हैं :—

(1) काण्ड 1 और 7 की कथा का मूलकथा से सम्बन्ध नहीं है। मूलकथा काण्ड 2 से प्ररम्भ होकर काण्ड 6 पर समाप्त हो जाती है।

(2) भाषा और शैली की दृष्टि से काण्ड 1 से 7 समकक्ष है, परन्तु मूलग्रन्थ (काण्ड 2 से 6) से इसकी भाषा आदि निम्न कोटि की है।

(3) काण्ड 1 और 7 की कथाएँ मूलग्रन्थ की कथा से परस्पर विरुद्ध हैं।

(4) काण्ड 2 से 6 तक राम मर्यादा पुरुषोत्तम और आदर्श पुरुष माने गये हैं, किन्तु कांड 1 से 7 में उन्हें विष्णु का अवतार बताया गया है, जो कि बाद की कल्पना है।

(5) काण्ड 1 और 7 में पुनरुक्ति दोष तथा मूलग्रन्थ से विरोधी घटनाएँ वर्णित यथा (क) काण्ड (1) में लक्ष्मण विवाहित है, अरण्यकाण्ड में उन्हें अविवाहित बताया गया है। (ख) कांड 6 में सुग्रीव, विभीषण आदि के प्रस्थान का वर्णन है, किन्तु उत्तरकांड में पुनः इनके प्रस्थान का उल्लेख है।

(ग) उत्तरकांड (सर्ग 17) में सीता को पूर्वजन्म में वेदवती बताया गया है, परन्तु अन्यत्र सीता—जन्म प्रसंग में वेदवती का नामोल्लेख नहीं है।

(घ) महाभारत में रामोपाख्यान में तथा अन्य रामकाव्यों में उत्तरकांड की कथा का उल्लेख नहीं है।

(ङ0) उत्तरकांड में बहुत सी रामकथा से असम्बद्ध कथाएँ वर्णित हैं।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम एक परिचयांकन

जैसे— राक्षसों की उत्पत्ति और इन्द्र—रावण युद्ध (सर्ग 1 से 34) , हनुमान का बाल्यकाल (सर्ग 35), ययाति —नहुष (सर्ग 58 से ), इन्द्र द्वारा वृत्र —वध(सर्ग 84 से 87 ), उर्वशी —चरित(सर्ग 56 से), पुरुरवा (सर्ग 87—90) शम्बूक की तपस्या और उसका बध (सर्ग 73 से 81 ) आदि ।

(6) कांड 2 से 6 तक भी कुछ अंश प्रक्षिप्त है, परन्तु ऐसे अंशों की संख्या कम है। (1)

श्री वी० वरदाचार्य ने मूलग्रन्थ और प्रक्षिप्त अंश के विषय में पर्याप्त विवेचन किया है और सारांश दिया है कि रामायण के सातों काण्ड मौलिक है, प्रायः सभी कथाएं उचित स्थान पर है। कांड 1 और 7 में कुछ अंश अवश्य प्रक्षिप्त है, अतएव टीकाकारों ने उन अंशों की टीका नहीं की हैं। (2)

विन्टरनिट्स आदि ने जो मन्तव्य उपस्थित किया है, वह आपाततः पुष्ट और परिपक्व प्रतीत होती है, परन्तु इस मन्तव्य में कुछ त्रुटियां रह गई है, जो विचारणीय हैं।

(1) रामायण के चारों ही संस्करणों में 7 कांड हैं किसी भी संस्करण में कांड 1 से 7 को छोड़ा गया है। यदि उपर्युक्त मन्तव्य में थोड़ी भी सत्यता होती तो संस्कृत—टीकाकारों के तुल्य कोई न कोई संस्करण इन दोनों काण्डों का अवश्य छोड़ देता।

(2) बालकाण्ड का मूलकथा से साक्षात् सम्बन्ध है। इसमें इच्छाकु—वंश का वर्णन दशरथ की सन्तान हीनता, पुत्रेष्टि यज्ञ, चार पुत्रों का जन्म , बाल चरित, ताडका बध, सीता—जन्म, सीता स्वयंवर, राम—विवाह आदि प्रसंग रामायण के अविभाज्य अंग है। अतः समस्त बालकाण्ड को प्रक्षेप कहना असंगत है।

(1) Indian Literature , Vol.1, 1927 पृष्ठ 495—500 ।

(2) वरदाचार्य संस्कृत साहित्य का इतिहास (हिन्दी) 1962 पृष्ठ 56 से 62 ।







(3) उत्तरकांड में सीता निर्वासन, वाल्मीकि के आश्रम में सीता का निवास, लव-कुश जन्म, अश्वमेध-यज्ञ, लव-कुश द्वारा घोड़े को पकड़ना, राम का सीता दर्शन, सीता की अग्नि-परीक्षा, सीता का भूमि में विलय आदि रामकथा के मौलिक अंश हैं।

(4) भाषा और शैली की दृष्टि से बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड को निम्नकोटि का कहना बहुत अंश तक हास्यापद है। किसी भी आलोचक ने अपने कथन की पृष्टि में सुसंगत प्रमाण नहीं दिये हैं।

(5) राम के अवतार को लेकर कांड 1 से 7 को प्रक्षिप्त कहना भी अनुचित है। वस्तुतः पूरी रामायण में राम कही भी अवतार नहीं हैं वे लोकनायक और आदर्श पुरुष हैं। अवतारवाद के विकास के साथ रामायण में ये अंश बाद में जोड़े गये हैं।

(6) वस्तुतः तथा कथित मूल ग्रन्थ (कांड 2 से 6) में भी पर्याप्त प्रक्षिप्त अंश मिलते हैं।

(7) कांड 1 और 7 में पुनरुक्ति का समावेश है, उनके विषय में संक्षेप में निम्नलिखित वक्तव्य है :—

(क) लक्ष्मण का विवाह वस्तुतः उर्मिला से हुआ था। उन्हें —अकृतदारः' कहने वाला अरण्यकांड का अंश ही प्रक्षिप्त है। अथवा यह भी सम्भव है कि शूर्पणखा से विनोदार्थ लक्ष्मण को 'अकृतदार कहना उसकी उत्सुकता बढ़ाई गयी है।

(ख) कवि के लिए यह आवश्यक नहीं है कि सीता जन्म का प्रसंग आने पर सर्वत्र 'वेदवती' का प्रकरण सुनाया जाए।

(ग) महाभारत में रामकथा संक्षिप्त रूप में है। उसमें राम-कथा सांगोपांग







वर्णित नहीं है। अतएव राम—राज्याभिषेक के साथ कथा समाप्त कर दी जाती है। काव्यों , नाटकों आदि में उत्तरकांड की कथा का न होना , हास्यास्पद युक्ति है। कालिदास के रघुवंश, भवभूति के उत्तररामचरितम् , दिङ्गनाग की कुन्दमाल, बौद्ध एवं जैन कथा —ग्रन्थों में सीता —परित्याग आदि का वर्णन विस्तृत रूप में प्राप्त होता है।

(घ) राम कथा से असंबद्ध कथानक वस्तुतः प्रक्षिप्त अंश है। इस कथन में एक स्पष्टीकरण अवश्य प्राप्त होता है कि वस्तुतः कांड 1 और 7 में पर्याप्त अंश प्रक्षिप्त है। इस कारण यह है कि लोक रंजन के लिए देवी—देवता , ऋषि —मुनि आदि से सम्बद्ध रोचक प्रसंग ग्रन्थ को आकर्षक बनाने के लिए जोड़े गए हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि रामायण के टीकाकारों ने भी ऐसे अंशों को प्रक्षिप्त मानकर उनकी टीका नहीं की है। (1)

(8) प्रसिद्ध समालोचक आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक में सीता —परित्याग तक की कथा को मूल रामायण की कथा माना है।(2)

वेद जिस परमतत्त्व का वर्णन करते हैं वही श्रीमन्न नारायणतत्त्व श्री मद्वाल्मीकीय रामायण में श्री रामरूप से निरूपित है। वेदवेद्य के परमपुरुषोत्तम के दशरथनन्दन श्री राम के रूप में अवतीर्ण होने पर साक्षात् वेद ही श्री वाल्मीकि के श्रीमुख से श्री रामायण रूप में प्रकट हुए। ऐसी आस्तिकों की चिरकाल से मान्यता है इसीलिए श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण की वेदतुल्य ही प्रतिष्ठा है। ये ही वाल्मीकि आदि कवि हैं अतः विश्व के समस्त कवियों के गुरु हैं। उनका आदिकाव्य श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण भूतल का प्रथम काव्य है। वह सभी के लिए पूज्य वस्तु है। भारत के लिए तो वह परमगौरव का विषय है और देश की सच्ची बहुमूल्य राष्ट्रीय निधि

(1)डॉ० कपिलदेव द्विवेदी—संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास—पृष्ठ104,105, 106

(2) रामयणे हि करुणो रसः स्वयमादिकविना सूत्रितः।

निर्व्यूढश्च स रामसीतात्यन्त वियोगपर्यन्तमेव स्वप्रबन्धमुपरचयता।

(ध्वन्यालोक, अध्याय—4)







है। इस नाते भी वह सबके लिए संग्रह, पठन मनन एवं श्रवण करने की वस्तु है। इसका एक एक अक्षर महापातक का नाश करने वाला है—

एकैकमक्षरं पुंसा महापातकनाशनम्।

यह समस्त काव्यों का बीज है। (1) श्री व्यास देवता आदि सभी कवियों ने इसी का अध्ययन कर पुराण महाभारत आदि का निर्माण किया। (2) बृहद्धर्म पुराण में यह बात विस्तार से प्रतिपादित है। श्री व्यास जी ने अनेक पुराणों में रामायण का माहात्म्य गाया है। स्कन्दपुराण का रामायण माहात्म्य तो इस ग्रन्थ के आरम्भ में दिया ही है। कई छिट-पुट माहात्म्य अलग भी है। यह भी प्रसिद्ध है कि व्यास जी ने युधिष्ठिर के अनुरोध से एक व्याख्या वाल्मीकि रामायण के विषय में लिखी और उसकी एक हस्तलिखित प्रतिलिपि आज भी प्राप्त है। (3) इनका नाम 'रामायण तात्पर्य दीपिका' है। इसका उल्लेख दीवानबहादुर रामशास्त्री ने अपनी पुस्तक 'स्टडीज इन रामायण के द्वितीय खण्ड में किया गया है। यह पुस्तक 1944 ई० में बड़ौदा से प्रकाशित है। द्रोणपर्व के 143 / 166 - 67 श्लोकों में महर्षि वाल्मीकि के युद्ध काण्ड के 81 / 28 को नामोल्लेख पूर्वक श्लोक दिया गया है। (4) अग्निपुराण के 5 से 13 तक के अध्यायों में वाल्मीकि के नामोल्लेख पूर्वक रामायणसार का वर्णन है। गरुणपुराण पूर्वखण्ड के 143 वें अध्याय में भी ठीक इन्हीं श्लोकों में रामायण सार कथन है। इसी प्रकार हरिवंश (विष्णुपर्व 93 / 6 - 33) में भी यदुवंसियों द्वारा वाल्मीकि रामायण के नाटक खेलने का उल्लेख है। भट्टिकाव्य 17 / 2 श्लोक भी इसी पर आधारित है।

(1) गीताप्रेस गोरखपुर की सं० 2066 के छत्तीसवां पुनर्मुद्रण के वाल्मीकि रामायण में पृष्ठ सं 3 'काव्यबीजम् सनातनमफ'।

(बृहद्धर्म० 1 / 30 / 47)

(2) पठ रामायण व्यास काव्यबीजम् सनातनम्।

यत्र रामचरित्रं स्यात् तदहं तत्र शक्तिमान्॥

( बृहद्धर्म पु० प्र० ख० 30 / 47 / 51)

(3) रामायण पाठितं में प्रसन्नोऽस्मि कृतस्त्वया॥

करिष्यामि पुराणानि महाभारतमेव च॥ ( बृहद्धर्मपुराण 1 / 30 / 5)

(4) यह श्लोक इस प्रकार है—

अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि।

न हन्तव्याः स्त्रियश्चेति यद् ब्रवीषिपपल्वङ्गम्!।.....

पीडाकरममित्राणां यत्स्यात् कर्तव्यमेव तत् ॥

(महा० उद्योग 143 / 67 / 68)







“रामायण महाकाव्यमुदिश्य नाटकं कृतम् ।।”

श्री व्यासदेव जी ने वाल्मीकि की जीवनी भी बड़ी श्रद्धा से स्कन्दपुराण वैष्णवखण्ड— वैशाख माहात्म्य 17 से 20 अध्यायों तक, कल्याण सं० स्कन्दपुराण पृ० 374 से 381 तक ) आवन्त्यखण्ड अवन्तीक्षेत्र माहात्म्य के 24 अध्याय में (कल्याण संप्रति स्कन्दपुराण पृष्ठ 708—9 ) प्रभासखण्ड के 278 वें अध्याय में (सं० स्कन्दपुराण पृ० 1025—26 ) तथा अध्यात्मरामायण के अयोध्याकांड में (6/64/92) वर्णन किया है। मत्स्यपुराण 12/69 में से वे इन्हें ‘भार्गवसत्तम्’ से स्मरण करते हैं।<sup>(1)</sup> और भागवत 5/18/5 में महायोगी से।

इसी प्रकार कविकुलतिलक कालिदास ने रघुवंश में आदिकवि को दो बार स्मरण किया है। एक तो कविः कुशेध्माहरणाय यातः। निषादविद्धाण्डजदर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः ।। (2) (14/70) इस श्लोक में दूसरे 2/4 के पूर्वसूरिभिः में भवभूति को करुण रस का आचार्य माना गया है, परन्तु हम देखते हैं कि इन्हें इसकी शिक्षा आदिकवि से ही मिली है। वे भी उत्तररामचरित के 2 अंक में “वाल्मीकिपार्श्वदिह पर्यटामि मुनयस्तमेव हि पुराणब्रह्मवादि नं प्राचेतसमृषिः.....उपासत” आदि से उन्हीं का स्मरण करते हैं। ‘सुभाषितपद्धति’ के निर्माता शाङ्.र्गधर उनके ऋण को स्पष्ट व्यक्त करते हुए लिखा है कि —

कवीन्दुं नौमि वाल्मीकिं यस्य रामायणीकथम् ।।

चन्द्रिकामिव चिन्वन्ति चकोरा इव साधवः ।।

(1) वाल्मीकीर्यस्य चरितं चक्रे भार्गवसत्तमः ।

2— आदिकवि वाल्मीकि उस समय कुश, समिधा, आदि लेने निकले थे, व्याध के द्वारा मारे गये कौञ्च को देखकर उन्हें बड़ा शोक हुआ, वही श्लोक के रूप में परिणत हो गया। ध्वन्यालोक कार श्री आनन्दवर्धन ने भी इसी से मिलते—जुलते शब्दों में कहा है—

कौञ्च द्वन्द्ववियोगात्थः शोकः श्लोकत्वमागतः । (ध्वन्यालोक 1/5)







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

इसी तरह महाकवि भारन आचार्य शंकर रामानुजादि सभी सम्प्रदायाचार्य ,  
राजा भोज आदि परवर्ती विद्वानों से लेकर हिन्दी साहित्य के प्राण

गोस्वामी तुलसीदास जी तक 'बंदऊँ मुनि पद कंजु रामायन जेहिं  
निरमयउ । ' ' जान आदिकवि नाम प्रतापू : वाल्मीकि भे ब्रह्म समाना  
'(रामचरितमानस )

'जहां वाल्मीकि भये ब्याधते मुनिंदु साधु

'मरा मरा जपे सिख सुनि रिषि सातकी'

वस्तुतः इन दोनों ही पद्यों का मूल स्वयं आदिकवि वाल्मीकि का ही श्लोक  
है जो इस प्रकार है—

“सोऽनुव्याहरणाद् भूयः शोकः श्लोकत्वमागतः” ।।

कवितावली उत्तरकांड 138 से 140 ) 'कहतमुनीस महेस महातम उलटे  
सीधे नाम को 'महिमा उलटे नाम की मुनि कियो किरातो।' (विनयपत्रिका  
151), 'उलटा जपत कोलते भए ऋषिराव' (बरवैरामायण 54) राम विहाइ  
मरा जपते बिगरी सुधरी कवि कोकिलहू की' (कवि -7/88) इत्यादि पदों  
से इनका बार बार श्रद्धापूर्वक स्मरण किया कृतज्ञता ज्ञापन की है। (1)

1. गीताप्रेस गोरखपुर की संख्या 206 उत्तीसवां पुनर्मुद्रण के वाल्मीकि रामायण के पृष्ठ सं० -4







## रचनाकाल

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण के समय में भी विद्वानों ने अपने अपने मत व्यक्त किये हैं। इसके लिए आलोचकों ने अन्तः साक्ष्य और बहिःसाक्ष्य दोनों को अपनाया है। डॉ० कपिल देव द्विवेदी ने रामायण की रचना के समय निर्धारण में मौलिक कठिनाइयों का उल्लेख करते हुए, कुछ मतों को प्रस्तुत किया है, जिन्हें अनुमान पर निर्भर बताया है। (1) क्योंकि ये मत पूर्व सीमा न बताकर अपर सीमा का संकेत करते हैं। उन्होंने संक्षेपतः निम्न कठिनाइयों का उल्लेख किया है। (2)

1. रामायण में रचना काल का अनिर्देश।
2. पाश्चात्य विद्वानों द्वारा राम की ऐतिहासिकता पर सन्देह।
3. पुष्ट अन्तरंग और बाह्यप्रमाणों का अभाव।
4. रामायण वैदिक काल के बाद की रचना है। परन्तु वैदिक काल स्वयं अनिर्धारित है। वैदिक साहित्य के रचना काल के विषय में सैकड़ों नही सहस्रों और लाखों वर्षों तक का मतभेद है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने इस विषय पर पर्याप्त विचार विनिमय किया है और सैकड़ों निबन्ध प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों के विषयों पर पर्याप्त विचार विनिमय के निष्कर्ष को प्रस्तुत करते हुए विद्वानों के मतों को कालक्रमानुसार प्रस्तुत किया है। जो निम्नवत् है—

1. वरदाचार्य (3) राम त्रेतायुग में हुए। त्रेतायुग ईसा से 8 लाख 67 हजार सौ वर्ष पूर्व समाप्त हुआ था। वाल्मीकि राम के समकालीन थे अतः रामायण की रचना का समय पूर्वोक्त है।

1. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 106—107
2. वही:— पृष्ठ 107
3. वरदाचार्य — सं० सा० का इतिहास (हिन्दी) पृष्ठ 66—67।







2. गोरेसियो (1) 1200 ई०पू० ।
3. श्लेगल(2) 1100 ई०पू० ।
4. याकोबी (3) 800 ई०पू० से 500 ई०पू० ।
5. कामिल बुल्के (4) 600 ई०पू०
6. मैकडानकल(5) 500 ई०पू० संशोधन 200 ई०पू० ।
7. काशीप्रसाद जायसवाल (6) 500 ई०पू० संशोधन 200 ई०पू०
8. जयचन्द्र विद्यालंकार (7) 500 ई०पू० संशोधन 200 ई०पू०
9. विन्टरनिट्स (8) 300 ई०पू०

उपर्युक्त उल्लेखों के साथ डॉ० द्विवेदी ने कुछ प्रश्न उठाये हैं जो निम्नवत् हैं—(9)

(क)रामायण में बुद्ध का उल्लेख न होना तथा बौद्ध धर्म के प्रभाव का अभाव ।

(ख) वैदिक काल का परवर्ती होना , (ग) कोसल की राजधानी अयोध्या न कि साकेत , (घ) पाटलिपुत्र का उल्लेख न होना, (ङ०) श्रावस्ती की राजधानी न होना (च) विशाला और मिथिला का स्वतंत्र राज्य के रूप में उल्लेख (छ) यूनानी प्रभाव का अभाव, (ज) मूलरामायण में राम को अवतार न मानना (झ) 500 ई०पू० की संस्कृति और सभ्यता के साम्य ।

1. रामायण भाग 10 भूमिका ।
2. जर्मन ओरियन्टल जर्नेल भाग 3 पृष्ठ 379 ।
3. डस रामायण पृष्ठ 101 से आगे ।
4. रामकथा पृष्ठ 101 से आगे 1950 ।
5. हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर पृष्ठ 306—309 ।
6. जे०बी० ओ० आर० एस० भाग 4 पृष्ठ 262 ।
7. भारतीय इतिहास की रुपरेखा भाग 1 पृष्ठ 432 —433 ।
- 8 हिस्ट्री ऑव इंडियन लिटरेचर भाग 1 पृष्ठ 501 —517 ।
9. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 108



संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

१. अक्षर-संज्ञा (१) अक्षर-संज्ञा

२. अक्षर-संज्ञा (२) अक्षर-संज्ञा

३. अक्षर-संज्ञा (३) अक्षर-संज्ञा

४. अक्षर-संज्ञा (४) अक्षर-संज्ञा

५. अक्षर-संज्ञा (५) अक्षर-संज्ञा

६. अक्षर-संज्ञा (६) अक्षर-संज्ञा

७. अक्षर-संज्ञा (७) अक्षर-संज्ञा

८. अक्षर-संज्ञा (८) अक्षर-संज्ञा

९. अक्षर-संज्ञा (९) अक्षर-संज्ञा

(१०) अक्षर-संज्ञा

११. अक्षर-संज्ञा (११) अक्षर-संज्ञा

१२. अक्षर-संज्ञा

१३. अक्षर-संज्ञा (१३) अक्षर-संज्ञा

१४. अक्षर-संज्ञा (१४) अक्षर-संज्ञा

१५. अक्षर-संज्ञा (१५) अक्षर-संज्ञा

१६. अक्षर-संज्ञा (१६) अक्षर-संज्ञा

१७. अक्षर-संज्ञा (१७) अक्षर-संज्ञा

१८. अक्षर-संज्ञा

१९. अक्षर-संज्ञा

२०. अक्षर-संज्ञा

२१. अक्षर-संज्ञा

२२. अक्षर-संज्ञा

२३. अक्षर-संज्ञा

२४. अक्षर-संज्ञा



संक्षेप में इस विषयों का प्रतिपादन इस प्रकार है :

1. मूल रामायण में बौद्ध धर्म का प्रभाव सर्वथा अदृश्य है। एक स्थान पर बुद्ध का नाम आया है और उन्हें चोर तथा नास्तिक कहा गया है। (1) सभी विद्वान इससे प्रक्षिप्त मानते हैं। यह श्लोक बुद्ध और बौद्ध धर्म के लिए बाद में जोड़ा गया है। विन्टरनिट्स भी रामायण में बौद्ध धर्म के प्रभाव का सर्वथा अभाव मानते हैं।

Whether traces of Buddhism can be proved in the Ramayana . It can probably be answered with an absolute negative. (2)

उपर्युक्त बुद्ध विषयक श्लोक सभी प्रतियों में नहीं पाया जाता है। अतः मूल रामायण बुद्ध (जन्म 563 ई०पू० , निर्वाण 483 ई०पू०) से पूर्ववर्ती है।

2. रामायण और महाभारत वैदिक साहित्य के बाद की रचनाएं हैं, अतः इनकी पूर्व सीमा वैदिक काल की समाप्ति है।

3. रामायण में कोसल राज्य की राजधानी अयोध्या है। (3) बौद्ध और जैन ग्रन्थों में अयोध्या का 'साकेत' नाम से उल्लेख है। अतः रामायणका रचना काल महावीर और बुद्ध से पूर्ववर्ती है। (4)

4. रामायण (बालकांड सर्ग 31 ) में उल्लेख है कि राम गंगा और सोन के संगम के पास से जाते हैं, परन्तु दोनों के संगम पर स्थिति वर्तमान (पाटलिपुत्र पटना) का उल्लेख नहीं है। बिम्बिसार के पुत्र अजातशत्रु (ई०पू० 491 से 459 तक ) ने पाटिल नामक ग्राम के चारों ओर सुरक्षार्थ एक प्रचीर(परकोटा) बनवाया था। वही ग्राम बाद में पाटलिपुत्र नगर हुआ। अतः रामायण की रचना 500 ई०पू० से पहले माननी चाहिए।

1. यथा हि चोर : स तथा हि बुद्धस्तथागतं नास्तिकमत्र विद्धि । (रामा० अयोध्या ०109 —34)

2. H.I.L भाग 1 पृष्ठ 503—510 ।

3. अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोक विश्रुता (बाल० 5—6)

4. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 108 ।







5. राम के पुत्र लव ने अपनी राजधानी श्रावस्ती में बनाई थी। (1) बुद्धकालीन राजा प्रसेनजित् की राजधानी श्रावस्ती थी। रामायण में कोसल की राजधानी अयोध्या ही है। अतः रामायण का बुद्ध से पूर्ववर्ती होना सिद्ध होता है।

6. बुद्ध से पहले विशाला और मिथिला स्वतंत्र राज्य थे बुद्ध के समय में दोनों एक होकर वैशाली राज्य हो गये। अंगुत्तरनिकाय में 16 गणराज्यों में वैशाली का उल्लेख वृजि या वृज्जि नाम से है रामायण में वैशाली का उल्लेख न होकर विशाला और मिथिला का प्रथम उल्लेख है (2) विशाला के राजा 'सुमति' है और मिथिला के सीरध्वजजनक । (3) इससे सिद्ध होता है कि रामायण की रचना बुद्ध पूर्व काल में हुई थी।

7. रामायण में केवल 2 स्थानों पर यवन शब्द का प्रयोग है, जिसके आधार पर डॉ० बेबर ने रामायण पर यूनानी सभ्यता का प्रभाव सिद्ध करने का प्रयत्न किया था। डॉ० याकोबी और डॉ० विन्टरनित्स ने उपर्युक्त दोनों स्थलों को प्रक्षिप्त माना है और रामायण पर यूनानी प्रभाव का खण्डन किया है। (4) अतः रामायण का समय यूनानियों के भारत में आगमन (326 ई०पू०) से बहुत पूर्व मानना चाहिए।

8. मूल रामायण में राम में अवतार नहीं माना गया है। अवतार की भावना का उदय बुद्ध के बाद हुआ है। इतिहास साक्षी है कि बुद्ध की प्रतिमाओं से ही प्रतिमापूजन का विकास हुआ। फारसी का बुत (मूर्तिवाचक) शब्द बुद्ध शब्द का ही अपभ्रंश है, जो स्पष्ट रूप से सूचित करता है कि मूर्ति पूजा का सम्बंध बुद्ध (बुद्ध —मूर्ति—पूजा) से रहा है।

1. श्रावस्तीति पुरारम्या श्राविता च लवस्य च (उत्तर 108 —4)
2. गंगाकूले निविष्टास्तेक विशालां ददृशुः पुरीम्। (बाल 045—8)
3. देखो — बालकांड सर्ग 50।
4. देखों — विन्टरनित्स H.I.L भाग 1 पृष्ठ 514—515।







महाभाष्यकार पतंजलि (150 ई०पू०) ने इसका इतिहास देते हुए बताया है कि मौर्य राजाओं ने राजकीय आय बढ़ाने के लिए मूर्ति पूजा की योजना प्रचलित की। सुन्दर मूर्तियों की नक्काशी आदि आदि की योजना भी उन्हीं की देन है। (1) इससे सिद्ध होता है कि मूलरामायण बुद्ध के जन्म से पूर्व लिखी गयी थी।

9. रामायण का अधिकांश चित्रण, विशेषकर उसका सामाजिक चित्र 5वीं शताब्दी ई०पू० का है। उसमें हमें 5 वीं शताब्दी ई०पू० के भारतीय समाज के आर्थिक राजनीतिक और धार्मिक जीवन का अच्छा चित्र मिलता है। (2)

10. विन्टरनिट्स ने यह सिद्ध किया कि वर्तमान परिवर्धित रामायण प्रथम या द्वितीय शताब्दी ई०पू० में इस रूप में आ चुकी थी।

उपर्युक्त विवेचना से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मूल रामायण 600 ई०पू० के बाद की रचना नहीं है। इससे पूर्व इसकी रचना माना भावी प्रमाणों की उपलब्धि पर निर्भर है। वर्तमान 24 सहस्र श्लोकों वाली रामायण प्रथम या द्वितीय शताब्दी ई० में निश्चित रूप से इस रूप में आ चुकी थी।

डॉ० बेबर ने वैदिक साहित्य में प्राप्त सीता (हाल की फाल) शब्द का राम (कृषक) या बलराम (हलभृत या हलधर राम) से संबंध जोड़कर राम कथा का विकास माना है। (3) यह असंगत एवं विलष्ट कल्पना है। इसके विषय में इतना कहना पर्याप्त है— “कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानुमती ने कुनबा जोड़ा।”

1(क) मौर्यहिरण्यार्थिभिरर्चाः प्रकल्पिताः (महाभाष्य 5-3-99)

(ख) मौर्याः विक्रेतु प्रतिमाशिल्पवन्तः (नागेश उद्योत 5-3-99)

2. देखो— जयचन्द्र विद्यालंकार भारतीय इतिहास की रुपरेखा भाग 1 पृष्ठ 432 -433।

3. History of Indian Literature पृष्ठ 192।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

डॉ० बेबर ने एक और मन्तव्य प्रस्तुत किया था कि रामायण बौद्ध ग्रन्थ 'दशरथ जातक' एवं होमर के ग्रन्थ पर आश्रित है, (1) परन्तु मोनियर विलियम्स याकोबी मैकडानल एवं के०टी० तैलंग आदि सभी पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने इस मत को अनुपयुक्त बताया है। (2)

वस्तुतः दशरथ जातक ही रामायण पर निर्भर हैं इस जातक का उद्देश्य है— मृत्यु पर दुःख न करना । दशरथ मृत्यु पर राम दुःखित नहीं होते हैं। अतएव रामायण की इतनी कथा देकर यह जातक समाप्त हो जाता है। उक्त विद्वानों ने ही होमर के आधार पर रामायण की रचना को असंगत बताया है। इसी प्रकार आचार्य बलदेव उपाध्याय का मत भी उल्लेख्य है वे रामायण की रचना के लिए अंतः एवं बाह्य साक्ष्यों में आधार पर निम्नांकित मत प्रस्तुत किये हैं।

वाल्मीकीय रामायण के निर्माण का समय बाहरी आन्तरिक प्रमाणों के आधार पर निश्चित किया जा सकता है। राम वैदिक बौद्ध तथा जैन धर्मों में समभाव से मर्यादा पुरुष माने जाते हैं बौद्ध साहित्य में तथा जैन साहित्य में रामकथा का निर्देश स्पष्ट तया किया गया है। बौद्ध कवि कुमारलात (100 ई०) की कल्पना मण्डतिका में रामायण के सर्वसाधारण में वाचन का उल्लेख हैं जैन कवि विमलसूरि ने इसकाव्य की रचना विमलसूरि ने इस काव्य की रचना महावीर की मृत्यु से 530 वर्ष के अन्तर (लगभग 62 ई०) में की।

यह काव्य वाल्मीकिय रामायण को आदर्श मानकर, जैनधर्मावलम्बियों को इस मर्यादा पुरुष के चरित्र से परिचय प्राप्त करने के लिए लिखा गया है। (3)

1. बेबर ऑन द रामायण पृष्ठ 11 आरम्भ ।

2. मोनियर विलियम्स इण्डियन विजडम, पृष्ठ 316, याकोबी उस रामायण पृष्ठ 94 आरम्भ, मैकडानल H.S.L पृष्ठ 308 के०टी० तैलंग वॉज रामायण कॉपीड फॉम होमर, बम्बई 1873।

3. आचार्य बलदेव उपाध्याय के संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ 25-26।







महाकवि अश्वघोष ने (78ई0) ने अपने बुद्धचरित में सुन्दरकाण्ड की अनेक रमणीय उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं को निबद्ध किया। बौद्धों के अनेक जातकों में रामकथा का स्पष्ट निर्देश है। दशरथ जातक तो रामायण का पूरा आख्यान नहीं है, जिसमें राम पण्डित बुद्ध के ही पूर्वकालीन प्रतिनिधि माने गये हैं। वाल्मीकि रामायण का एक श्लोक भी इस जातक में पालीरूप में उपलब्ध होता है। जातकों का समय निरूपण झमेले का विषय है। यद्यपि उनकी कथाएं प्राचीन काल में प्रचलित थी तथापि उनका समय तृतीय शतक ई0 पूर्व में साधारणतया माना जाता है। इन बाहरी प्रमाणों के आधार पर रामायण तृतीय शतक ई0पूर्व से भी पहले की रचना सिद्ध होती है।

वर्तमान महाभारत रामकथा से ही परिचित नहीं है, अपितु वह वाल्मीकि के रामायण से भी भली भाँति अवगत है। रामायण में महाभारत के पात्रों का कहीं भी उल्लेख नहीं है, परन्तु वनपर्व का रामोपाख्यान (अध्याय 273—93) वाल्मीकि में दी गई कथा का संक्षिप्त संस्करण है। रामचन्द्र से सम्बद्ध स्थान महाभारत में तीर्थ रूप में माने गये हैं। श्रृंगवेरपुर (सिगरौर, जिला प्रयाग वनपर्व 85/65 ) तथा गोप्रतार (फैजाबाद में गुप्तार घाट, वनपर्व 84/70) वन पर्व में तीर्थ माने गये हैं। अतः महाभारत के वर्तमान रूप होने से पहले ही रामायण प्राचीन ग्रन्थ माना जाता । महाभारत को वर्तमान रूप ईसवी के आरम्भ में प्राप्त हुआ है।, अतः रामायण की रचना इससे भी पहले ही अवश्य की गई होगी।

रामायण का अनुशीलन उसकी रचना के समय की भली भाँति प्रकट कर रहा है। रामायण के समय की राजनीतिक अवस्था का परिचय इस महाकाव्य के अध्ययन से भली भाँति मिलता है—







1. पाटलिपुत्र की स्थापना 500 ई० पूर्व० में मगध नरेश अजातशत्रु ने की। पहले यह एक साधारण ग्राम था जिसका नाम बौद्ध ग्रन्थों में पाटलिग्राम दिया है। अजातशत्रु ने शत्रु लोगों के आक्रमण से अपनी रक्षा करने के निमित्त गंगा सोन के संगम पर इस ग्राम में किला बनवाया। (1) इसके पिता बिम्बसार की राजधानी राजगृह या गिरिव्रज थी। रामायण में राम शोण और गंगा के संगम से होकर जाते हैं, पर पाटलिपुत्र का उल्लेख यहाँ नहीं मिलता। (2) इससे स्पष्ट है कि रामायण 500 ई० पहले लिखा गया।

2. कोशल जनपद की राजधानी रामायण में अयोध्या बतलाई गई है, (3) परन्तु जैन और बौद्ध ग्रन्थों में अयोध्या के स्थान पर वह साकेत नाम से प्रख्यात है। लव ने अपनी राजधानी श्रावस्ती में स्थिर की (4) रामायण की रचना तब की गई होगी, जब अयोध्या को छोड़कर श्रावस्ती में राजधानी नहीं लायी गई थी। बुद्ध के समय में कोशल के राजा प्रसेनजित् श्रावस्ती में ही राज्य करते थे। अतः रामायण की रचना बुद्ध से पूर्वकाल में हुई। (5)

3. गंगा पार करने पर राम विशाला में पहुँचे। इसके वर्तमान राजा का नाम 'सुमति' था। इक्ष्वाकु की 'अलम्बुसा' नामक रानी से उत्पन्न 'विशाला' नामक पुत्र ने इसी नगरी को बसाया था। इसीलिए यह 'विशाला' के नाम से विख्यात थी। रामायण में विशाला (6) और मिथिला (7) दो स्वतंत्र राजतंत्र राज्य थे। बुद्ध के समय में ये दोनों राज्य पृथक् और स्वतंत्र न होकर वैशाली राज्य के रूप में सम्मिलित कर दिये गये थे और शासन

1. राय चौधरी— पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया पृष्ठ—14

2. बालकांड सर्ग 31

3. अयोध्या नाम नगरी तत्रासीत् लोकविश्रुता। (बाल० 5/6)

4. श्रावस्तीति पुरी रम्या श्राविता च लवस्य च ।। (उत्तरकाण्ड 108/5)

5. आचार्य बलदेव उपाध्याय संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ 27

6. द्रव्यव्य —बालकांड , सर्ग 47, श्लोक 11—20।

7. मिथिला में जनकवंशी नरेशों का आधिपत्य था। उस समय मिथिला के राजा का नाम सीरध्वज जनक था (द्रव्यव्य बाल० सर्ग 50)







पद्धति भी स्वतंत्र राज्य के समान थी। अतः रामायण को बुद्ध से प्राचीन होना चाहिए।

4. बालकांड की सूचना के अनुसार उत्तरी भारत कोशल अंग कान्यकुब्ज मगध मिथिला आदि अनेक छोटे छोटे राज्यों में बँटा था यह राजनीतिक अवस्था बुद्ध पूर्व भारत में ही दृष्टिगोचर होती है।

5. सारे रामायण में केवल दो पद्यों में ही यवनों का नाम आता है। इसी सामान्य आधार पर जर्मन विद्वान् डाक्टर बेबर ने सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि यूनानी सभ्यता का प्रभाव पड़ा है, परन्तु डॉ० याकोबी ने इन्हें प्रक्षिप्त सिद्ध किया है। अतः यूनानी आक्रमण के अनन्तर ये पद्य रामायण में मिला दिये गये होंगे।

इन प्रमाणों के आधार पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि रामायण की रचना बुद्ध के जन्म से पहले ही हुई। अर्थात् रामायण को 500 ई०पू० से पहले की रचना मानना न्यायसंगत है।(1)

हम इसी क्रम में कामिलबुल्के के विचार उद्धृत करना समीचीन समझते हैं जो निम्नवत् है(2) एक शताब्दी के पूर्व रामायण पहले पहल पश्चिम में विख्यात होने लगा उस समय अनेक विद्वानों का मत था कि इसकी रचना अत्यन्त प्राचीनकाल में हुई थी—ए०श्लेगेल के अनुसार 11वी० श०ई० पू० तथा जी० गोरसियों के अनुसार लगभग 12 वी० श०ई०पू० (3) इस मत के प्रति क्रियास्वरूप जी०टी०हीलर तथा डॉ० बेबर ने रामायण पर यूनानी तथा बौद्ध प्रभावमानकर उसकी रचना अपेक्षाकृत अर्वाचीन समझी है।(4) इन दोनों के मत का खण्डन निबन्ध के द्वितीय भाग में किया जायेगा।

1. आचार्य बलदेव उपाध्याय संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ -27

2. रामकथा पृष्ठ संख्या-24—कामिल बुल्के

3. दे०ए०डब्लूश्लेगेल: जर्मन ओरियन्टल जर्नल भाग3, पृ० 379/जी गोरसियो:रामायण भाग 10 भूमिका

4. जी०टी० हीलर हिस्ट्री आव इंडिया भाग 2 (लंदन 1869) ए० बेबर : आन दि रामायण (बम्बई 1873)







आगे चलकर रामायण के रचनाकाल के विषय में लिखते हुए विद्वान प्रायः आदि रामायण (वाल्मीकि की प्रमाणिक रचना) तथा प्रचलित वाल्मीकि रामायण का अलग अलग रचना काल निर्धारित करते हैं। (1)

रामायण के भिन्न भिन्न पाठों की तुलना करने पर स्पष्ट है कि उत्तरकांड बाद का लिखा हुआ है वास्तव में उत्तरकांड तथा बालकांड दोनों वाल्मीकि कृत रचना में विद्यमान नहीं थे, इसके लिए द्वितीय भाग में प्रमाण दिये जायेंगे (दे 8 वॉ अध्याय ) वाल्मीकिकृत आदि रामायण (कांड 2'6) तथा प्रचलित वाल्मीकि रामायण में जो अन्तर पाया जाता है, इसके लिए बहुत काल की आवश्यकता है। छोटे मोंटे प्रेक्षकों को छोड़कर प्रस्तुत प्रचलित वाल्मीकि रामायण का वर्तमान स्वरूप (1-7 कांड कम से कम दूसरी शताब्दी ई० का है, यह बहुसंख्यक विद्वानों का मत है।

एम० विन्टरनिट्स इस प्रश्न का विस्तृत विश्लेषण करने के बाद एच० याकोबी के परिणाम पर पहुँचते हैं। एच० याकोबी पहली अथवा दूसरी शताब्दी ई० को प्रचलित रामायण का काल मानते हैं, एम० विन्टरनिट्स दूसरी शताब्दी ई० अधिक समीचीन समझते हैं। (2) सी०वी० वैद्य (3) इसका काल दूसरी श० ई०पू० तथा दूसरी शताब्दी ई० के बीच में मानते हैं, यद्यपि वह पहली श० ई०पू० अधिक संभव समझते हैं कालिदास के समय में रामायण ने अपना प्रचलित रूप धारण कर लिया तथा महाभारत के अरण्य पर्व के रचना काल में बालकांड तथा उत्तरकाण्ड की कुछ सामग्री प्रचलित हो गई थी। अतः अधिक सम्भव है कि प्रचलित रामायण का रूप दूसरी श० ई० के बाद का नहीं है। (4) आदि रामायण प्रचलित रामायण से इतना भिन्न है कि इस महत्वपूर्ण विकास के लिए कई

1. कामिल बुल्के 'रामकथा " पृष्ठ -24।

2. एच० साकोबी : इस रामायण पृ० 100। एम० विन्टरनिट्स हि०इ०लि० भाग 1 पृ० 500 ,517।

3. सी०वी० वैद्य : - दि रिडिल ऑव दि रामायण , पृ० 20 और 57।

4. किन्तु इसके बाद भी पौराणिक कथाओं तथा अन्य प्रेक्षकों का सम्मिश्रण हुआ होगा। अतः इन अर्वाचीन अंशों के कारण समस्त बालकांड का समय चौथीषः ई० निर्धारित करना तर्कसांगत नहीं है। दे० डब्लू० किर्फल :- रामायण बालकांड उण्ड पुराण।







शताब्दियों की आवश्यकता प्रतीत होती है। अतः वाल्मीकिकृत रचना कम से कम तीसरी शताब्दी ई०पू० की होगी। कई विद्वान वाल्मीकि का काल और प्राचीन मानते हैं।

प्रामाणिक वाल्मीकि रामायण में बौद्ध धर्म की ओर निर्देश नहीं मिलता। अतः इसकी रचना बुद्ध के पूर्व ही अथवा पांचवी श०ई०पू० में हुई होगी। यह एम० मोनियेर विलियम्स तथा सी०वी० बैद्य का प्रधान तर्क प्रतीत होता है। (1) लेकिन बौद्ध साहित्य तथा जातकों की सामग्री के विश्लेषण के स्पष्ट हैं कि तिपिटक के रचनाकाल में रामकथा सम्बन्धी स्फुट आख्यान काव्य प्रचलित हो चुका था, लेकिन रामायण की रचना नहीं हो पाई थी (दे० नीचे अनु 82 ) (2)

डा० याकोबी रामायण का रचनाकाल पांचवी श०ई०पू० छठीं और आठवीं श०ई०पू० के बीच मानते हैं। (3) ए०ए० मैकडोनेल ने अपने संस्कृत साहित्य का इतिहास (लंदन 1905 पृष्ठ 309 ) में याकोबी के तर्क स्वीकार कर रामायण को बुद्ध के पूर्व माना था। बाद में उन्होंने छन्दशास्त्र की दृष्टि से पाली गाथाओं तथा रामायण के श्लोकों की तुलना के आधार पर माना है कि वाल्मीकि रामायण की रचना चौथी शताब्दी ई०पू० के मध्य में हुई थी। उनके अनुसार रामायण दूसरी शताब्दी ई० के अंत तक अपना स्वरूप धारण कर चुका था (दे० इन रि० ए० भाग 10, पृ० 575)। ए०बी० कीथ डॉ० याकोबी के ग्रन्थ के 20 वर्ष बाद उनके तर्कों का विस्तृत विश्लेषण तथा खण्डन करके आदि रामायण की रचना चौथी शताब्दी ई० पूर्व० में रखते हैं। (4) एम० विन्टरनिट्स प्रायः ए०बी० कीथ के मत से सहमत है, लेकिन वे वाल्मीकि को तीसरी श० ई०पू० मानते हैं (5) ।

1. एम०एम०विलियम्स : इण्डियन एपिक पोइट्री (लंदन 1863 ) पृ० 3।
2. कामिल बुल्के: रामकथा पृष्ठ 25
3. दे० एच० याकोबी : इस रामायण पृ० 101 आदि
4. दे० ज० रा० ए० सो० 1915 (पृ० 318 -28) दि एज ऑव दि रामायण



संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी

संस्कृत-विश्वकोश-प्रकाशक-संस्थान-वाराणसी



अतः अधिक सम्भव प्रतीत होता है कि वाल्मीकि ने लगभग 300 ई० पू० अपनी अमर रचना की सृष्टि की है। इस निर्णय की पुष्टि इससे भी होती है कि पाणिनि में रामायण वाल्मीकि अथवा रामायण के प्रमुख पात्रों दशरथ राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न हनुमान सुग्रीव विभीषण आदि का उल्लेख नहीं होता। लेकिन उनके समय में रामकथा प्रचलित रही होगी क्योंकि सूत्रों में कैकेयी (7,3,2), कौशल्या (5,1,/55) तथा शूर्पणखा (6, 2, 222) की ओर संकेत मिलते हैं। (1)

गणपाठ में परिवर्द्धन होता रहा, अतः गणपाठ के उल्लेखों पर तर्क आधारित नहीं किया जा सकता है, इसमें रामकथा के प्रमुख पात्रों के नाम (राम, लक्ष्मण, भरत, रावण आदि ) आये हैं। वाल्मीकि रामायण के संस्करणों के सम्बंध में भी भिन्न भिन्न विद्वानों के भिन्न भिन्न मत हैं किन्तु सभी ने मुख्य रूप से इसके चार संस्करणों को मान्यता दी है— डॉ० कपिलदेव के अनुसार चार संस्करण हैं। (2)

संस्करण (1) बम्बई संस्करण (देवनागरी संस्करण) निर्णय सागर प्रेस, बम्बई से 1902 ई० में प्रकाशित (सम्पादक के०पी० परब) । यह संस्करण उत्तर तथा दक्षिण भारत में सबसे अधिक प्रचलित एवं प्रामाणिक है। इसकी सबसे प्रसिद्ध टीका 'तिलक' है, जिसे प्रसिद्ध वैयाकरण नागेश भट्ट ने अपने आश्रय दाता राजा 'राम' के नाम से की है।

2. बंगाल संस्करण— यह संस्करण जी० गोरेशियों ने (1843—1867ई०) में प्रकाशित किया था और उसका इटैलियन भाषा में अनुवाद किया था। यूरोप में सर्वप्रथम यही संस्करण छपा था। इसे गौडीय संस्करण भी कहते हैं।

1. कामिल बुल्के : रामकथा पृष्ठ -25।

2. आचार्य कपिल देव — संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास पृष्ठ 103—104।







3. पश्चिमोत्तर संस्करण (काश्मीरी संस्करण ) यह संस्करण रिसर्च विभाग, डी०ए० वी० कालेज, लाहौर से 1813 में प्रकाशित हुआ। इसके टीकाकार का नाम 'कटक' है।

4. दाक्षिणात्य संस्करण— कुम्भकोणम (मद्रास ) से 1929 –30 ई० में प्रकाशित । बम्बई संस्करण से इसमें बहुत कम पाठ भेद है। बंगाल और पश्चिमोत्तर संस्करणों में बहुत पाठभेद हैं पाठभेद का मुख्य कारण रामायण की मौखिक परम्परा है अतएव प्रान्तीय भेद आदि के कारण बहुत मतभेद हो गये।

आचार्य बलदेव उपाध्याय जी ने वाल्मीकि के सम्बंध में लिखा है। (1) कि उत्तरी बंगाल काश्मीर तथा दक्षिण भारत से रामायण के जो संस्करण उपलब्ध होते हैं उनमें पाठभेद बहुत ही अधिक है। उनमें एक दूसरे से श्लोकों का ही अन्तर नहीं हैं, प्रत्युत कहीं-कहीं तो सर्ग के सर्ग भिन्न दिखाई पड़ते हैं। वाल्मीकि रामायण का पाठ एक रूप नहीं है उनमें 3 पाठभेद हैं।

(1) दाक्षिणात्य पाठ: गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस (बम्बई) निर्णय सागर प्रेस (बम्बई) तथा दक्षिण के संस्करण यह पाठ अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित तथा व्यापक है।

(2) गौडीय पाठ— गौरेसियो (पेरिस) तथा कलकत्ता संस्कृत कालेज के संस्करण।

(3) पश्चिमोत्तरीय पाठ— दयानन्द महाविद्यालय (लाहौर) का संस्करण । इन पाठों की समीक्षा करने से गौडीय एवं पश्चिमोत्तरीय पाठ अपेक्षाकृत बहुत निकट प्रतीत होते हैं। इन दोनों पाठों में दाक्षिणात्य पाठ के आर्ष प्रयोग एक समान ही सुधारे गये हैं। फलतः दाक्षिणात्य पाठ अपेक्षाकृत मौलिक एवं प्राचीन माना जाना चाहिए। प्रतीत होता है कि ईस्वी पूर्व की शताब्दियों में आदि रामायण के दो पाठ धीरे-धीरे भिन्न होने लगे थे— उदीच्य पाठ तथा दाक्षिणात्य पाठ। गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठों में विभिन्नता होने पर भी मूलतः समानता है। अतः इन दोनों का सामान्य पाठ उदीच्य पाठ का प्रतिनिधि माना जाए, तो किसी प्रकार की विमति न होना चाहिए।







भारत के पश्चिमोत्तर तथा पूर्वी अंचल में प्रचलित होने से मूलतः एक होने वाला भी उदीच्य पाठ दो प्रकारों में विकसित हो गया। डॉ० लेची का अनुमान है कि कम से कम 500 ईस्वी से ये दोनों पाठ भिन्न होने लगे थे। इन समस्त विभिन्न पाठों की तुलना से बड़ौदा से रामायण का विमर्शात्मक संस्करण (1) प्रस्तुत किया जा रहा है, जो वाल्मीकि की मूल रचना का प्रामाणिक रूप उपस्थित करने वाला माना गया है।

वाल्मीकिकृत रामायण का पाठ एकरूप नहीं है। आजकल इस रचना के तीन पाठ प्रचलित हैं:

1. दक्षिणात्य पाठ: गुजराती प्रिंटिंग प्रेस (बम्बई) निर्णय सागर प्रेस (बम्बई) तथा दक्षिण के संस्करण। यह पाठ अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित और व्यापक है।

2. गौडीय पाठ— गोरेसियों (पैरिस ) तथा कलकत्ता संस्कृत सीरीज के संस्करण ।

3. पश्चिमोत्तरीय पाठ: दयानन्द महाविद्यालय (लाहौर) संस्करण जो आजकल साधु आश्रम होशियारपुर (पंजाब ) से प्राप्त है। (2)

प्रत्येक पाठ में बहुत से श्लोक ऐसे मिलते हैं जो अन्य पाठों में नहीं पाये जाते । दक्षिणात्य तथा गौडीय पाठों की तुलना करने पर देखा जाता है कि प्रत्येक पाठ में श्लोकों की एक तिहाई संख्या केवल एक ही पाठ में एक नहीं है और इनका क्रम भी बहुत स्थलों पर भिन्न हैं। (3)

इन पाठान्तरों का कारण यह है कि वाल्मीकिकृत रामायण प्रारम्भ में मौखिक रूप से प्रचलित था और बहुत काल के बाद भिन्न —भिन्न परम्पराओं के आधार स्थायी लिखित रूप धारण कर सका।

1. रामायण का विमर्शात्मक संस्करण— बड़ौदा विश्वविद्यालय से प्रकाशित

2. कामिल बुल्के — रामकथा पृष्ठ—20

3. दे० एच० याकोबी : इस रामायण पृ० 3







फिर भी कथानक के दृष्टिकोणों से तीनों पाठों की तुलना करने पर सिद्ध होता है कि कथावस्तु में जो अंतर पाए जाते हैं वे गौण हैं मैंने इस दृष्टिकोण से तीनों पाठों की विस्तृत तुलना की हैं। (1)

इस तुलना से स्पष्ट है कि उत्तरकांड की रचना बहुत बाद में हुई थी। इस कांड में तीनों पाठों में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं मिलता। केवल दाक्षिणात्य पाठ में सीता त्याग का कारण यह बताया जाता है कि भृगु ने अपनी पत्नी की हत्या के कारण विष्णु को शाप दिया था। यदि उत्तरकांड प्रारम्भ से रामायण का एक अंग होता तो अन्य कांडों की तरह इस कांड के तीन पाठों में भी अंतर पाये जाते हैं। (2)

उपर्युक्त तीन पाठों की प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर बड़ौदा विश्वविद्यालय के ओरियेंटल इन्स्टिट्यूट द्वारा रामायण का एक वैज्ञानिक (क्रिटिकल)संस्करण सन् 1960 ई० से प्रकाशित हो रहा है। वह अब तक समाप्त नहीं है। अतः प्रस्तुत प्रबन्ध में रामायण के संदर्भ निम्नलिखित संकेताक्षरों द्वारा प्रचलित संस्करणों के अनुसार दिये गये हैं— रा० अथवा दा०रा० अर्थात् दाक्षिणात्य पाठ (गुजराती प्रिंटिंग प्रेस) गौ० रा० अर्थात् गौडीय पाठ (कलकत्ता संस्कृत सिरीज) तथा पं० रा० अर्थात् पश्चिमोत्तरीय पाठ (लाहौर संस्करण)।

उदीच्य पाठ— पाठों की तुलना से एक परिणाम यह भी निकलता है कि गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठ अपेक्षाकृत अधिक निकट प्रतीत होते हैं। इन दोनों में दाक्षिणात्य पाठ के बहुत से आर्ष प्रयोग एक ही तरह से सुधारे गये हैं और बहुत से अन्य स्थलों पर भी दोनों का पाठ दाक्षिणात्य संस्करण से भिन्न होते हुए भी एक है। अतः जो श्लोक तीनों में पाये जाते हैं, वहाँ दाक्षिणात्य पाठ से भिन्न होते हुए भी आपस में समान हैं वहाँ उदीच्य पाठ मानना अनुचित न होगा। आर्ष प्रयोगों की अपेक्षाकृत कमी के अतिरिक्त निम्नलिखित विषय उदीच्य पाठ के अपने ही प्रतीत होते हैं। (ये केवल गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठों में पाये जाते हैं) :

1. दे०सी० बुल्के : दि जनेसिस ऑव दि वाल्मीकि रामायण रिसेन्शन्स। ज० ऑ० अं० भाग 5 पृ० 66—94।
2. कामिल बुल्के रामकथा — पृष्ठ 20—22।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

1. एक तीसरी अनुक्रमणिका, जिसमें कांडो की सामग्री का उल्लेख मिलता है (दे० गौ० रा० 1, 4 तथा प० रा० 1, 3) दाक्षिणात्य पाठ में केवल दो अनुक्रमणिकाएं दी गई हैं।
2. शांता दशरथ की पुत्री का स्पष्ट उल्लेख (दे० गौ० रा 1, 10 तथा प० रा० 1, 9)।
3. भरत तथा शत्रुघ्न की यात्रा तथा राजगृह के निवास दो सर्गों में वर्णित हैं (दे० गौ० रा० 1, 79 –80 तथा प० रा० 2, 1, 2)। दाक्षिणात्य पाठ में इसका उल्लेख मात्र किया गया है।
4. ब्राह्मण कैकेयी को शाप देता है। (दे० गौ० रा० 2, 8, 33 आदि तथा प० रा० 2, 11, 37 आदि )
5. सीता जनक तथा मेनका की पुत्री है। (दे० गौ० रा० 3, 4 तथा प० रा० 3, 2)।
6. सम्पाति का अपने पुत्र सुपार्श्व को बुलाना (दे० गौ० रा० 4, 62 तथा प० रा० 4, 55)।
7. केशरी का दिग्गज धवल का बध करना और वरस्वरूप हनुमान को प्राप्त करना (दे० गौ० रा० 5, 3 तथा प० रा० 4, 58)।
8. राम के प्रति तारा का शाप। (दे० गौ० रा० 4, 20, 15, 16 प० रा० 4, 16, 39, 40)
9. निकषा का विभीषण से अनुरोध करना कि वह रावण को समझावे (दे० गौ० रा० 5, 76, तथा प० रा० 5, 75)।
10. दशरथ तथा सागर की मैत्री (दे० गौ० रा० 5, 94 21–22 तथा प० रा० 5, 96, 46, 68)।



संस्कृत-संज्ञा-सूत्र-संग्रहः

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( २ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ३ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ४ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ५ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ६ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ७ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ८ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ९ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १० )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( ११ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १२ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १३ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १४ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १५ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १६ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १७ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १८ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( १९ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( २० )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( २१ )

संज्ञा-सूत्र-संग्रहः ( २२ )



11. कुम्भकर्ण रावण से कहता है कि नारद ने मुझसे कहा था कि देवताओं ने विष्णु के एक अवतार द्वारा रावण —वध की आयोजना की थी। (दे० गौ० रा० 6, 40, 41, प० रा० 6, 41—42)।

12. हनुमान कालनेमि का वृत्तान्त तथा हनुमान का गन्धर्वों से युद्ध करना । (दे० गौ० रा० 6, 82—83 तथा प० रा० 6—81)(1)

उदीच्य पाठ जो सम्भवतः पहली शताब्दी ई० से दाक्षिणात्य पाठ से भिन्न होने लगा था। बाद में पुनः जब दो पाठों में विभक्त होने लगा, अर्थात् गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय डॉ० लेवि का अनुमान है कि कम से कम 500 ई० से ये दोनों पाठ भिन्न होने लगे थे। (2)

गौडीय पाठ— गौडीय पाठ के निम्नलिखित वृत्तान्त अन्य दो पाठों में नहीं मिलते :

1. विभीषण रावण से अलग होने के बाद पहले कैलाश पर आने भाई वैश्रवण से मिलता है और बाद में राम की शरण लेता है (दे० गौ० रा० 5, 89)।

2. औषधि के लिए जाते समय भरत से हनुमान की भेंट (दे० गौ० रा० 6, 82, 90 आदि)।

3. सीताहरण के पूर्व जटायु राम से अपने सम्बंधियों के यहाँ जाने की आज्ञा लेकर घर जाता है (दे० गौ० रा० 3, 23, 3—10)।

1. कामिल बुल्के —रामकथा पृष्ठ 21—22।

2. जूर्नल ऐकिसएटिक पैरिस : 1918 पृ० 1 आदि।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

पश्चिमोत्तरीय पाठ— पश्चिमोत्तरीय पाठ तथा गौडीय पाठ बहुत निकट है, यह उपर्युक्त उदीच्य पाठ के विश्लेषण से स्पष्ट है इसका कारण यह होगा कि बाद में पश्चिमोत्तरीय पाठ को परिपूर्ण बनाने के उद्देश्य से प्रचलित तथा व्यापक दाक्षिणात्य पाठ का सहारा लिया गया है। इस तरह वर्षा ऋतु का एक विस्तृत वर्णन दाक्षिणात्य तथा पश्चिमोत्तरीय दोनों पाठों में मिलता है (दे० दा० रा० 4, 28, 14, 52 और प० रा० 4, 21) यह वर्णन त्रिष्टुप में है।

ब्रह्मस्त्र द्वारा द्रुमकुल्य का विनाश भी दाक्षिणात्य तथा पश्चिमोत्तरीय पाठ में मिलता है। (दे० दा० रा० 6, 2 तथा रा० 5, 96 )। अनेक वृत्तान्त केवल पश्चिमोत्तरीय पाठ में ही पाए जाते हैं। उदाहरणार्थ —

1. कैकेयी का एक ब्राह्मण से विद्याबल प्राप्त करना , जिसके द्वारा वह संगम में अपने पति की रक्षा करने में समर्थ हुई। (दे० प० रा० 2, 11 ,42 आदि)

2. हनुमन्मंगल : एक पूरा सर्ग जिसमें वानर हनुमान की वीरता की प्रशंसा करते हैं।

(दे० प० रा० 4, 59)

3. समुद्र का राम और लक्ष्मण को एक कवच और अस्त्र प्रदान करना । (दे० प० रा० 5, 99)

4. नागपाश के अवसर पर नारद का आना और राम को उनके नारायणत्व का स्मरण दिलाना। (दे० प० रा० 6, 27)

5. मन्दोदरी —केश —ग्रहण :— विभीषण द्वारा पता चलता है कि रावण होम कर रहा है। यदि यह यज्ञ पूर्ण हो सका तो रावण अजेय हो जायेगा। वानर रावण के यज्ञ स्थल पर पहुँच कर उसका ध्यान भंग करने में असमर्थ है। अन्त में अंगद मन्दोदरी के







केशों को खींचकर रावण के पास ले जाते हैं। इस पर रावण उत्तेजित हो जाता है और यज्ञ समाप्त नहीं हो पाता। (दे० प० रा० 6, 82)।

दाक्षिणात्य पाठ— जो श्लोक तीनों पाठों में मिलते हैं, उनके लिए दाक्षिणात्य पाठ साधारणतया अधिक प्राचीन माना जाना चाहिए। निम्नलिखित वृत्तान्त न तो गौडीय पाठ में मिलते हैं और न पश्चिमोत्तरीय पाठ में :—

1. रामादि की जन्मतिथि (चैत्र नावमिके तिथौ) तथा उसी अवसर पर राशियों के संगम । (दे० दा० रा० 1, 18, 8 आदि)।
2. बालकांड की अनेक पौराणिक कथाएं — कश्यप की तपस्या जिसके फलस्वरूप वह हरि को वामानावतार में पुत्र स्वरूप प्राप्त कर सका (29, 10, 17), जहनु का गंगा को पीना (43, 34, 41), विष्णु का मोहिनी रूप धारण कर अमृत ले जाना (45, 4—43), विष्णु का कूर्मावतार वर्णन (45, 27—32) इन्द्र का ब्राह्मण के रूप में विश्वामित्र से अन्न माँगना (65, 3—10), सागर के जन्म की कथा (70, 28—37)।
3. कैकेयी की माता के अपने पति द्वारा व्यक्त किये जाने की कथा (2, 35)।
4. सीता की यमुना से प्रार्थना (2, 5, 13, 29)
5. वाल्मीकि से राम, लक्ष्मण और सीता की भेंट (2, 56, 16—17)।
6. अकम्पन का रावण को जनस्थान की घटनाओं का हाल देना और रावण का मारीच के पास जाना (3, 31)।
7. राक्षसी अयोमुख का वृत्तान्त (3, 69, 11—18)।
8. सुग्रीव का लक्ष्मण को शांत करने के लिए तारा को उनके पास भेजना (4, 33, 24—62)।







9. लंका देवी से हनुमान का युद्ध (5, 3, 20—51)।
10. सुग्रीव —रावण युद्ध (6—40 तथा 6, 41 1—10)।
11. अगस्त्य का राम को समर्थस्तव देना(6, 105)।
12. तारा तथा अन्य वानर पत्नियों को अयोध्या ले जाने की राम से सीता की प्रार्थना (6, 123, 23, 38)(1)

इन सभी गुणों के कारण ही यह काव्य सर्वाधिक लोकप्रिय, अजर, अमर, दिव्य, तथा कल्याणकर हैं। (2)

संतो के शब्दों में यह रामायण श्री रामतनु हैं इसका पठन मनन अनुष्ठान साक्षात् प्रभु श्री राम का संनिधान प्राप्त करना है। (3) हनुमान जी की प्रसन्नता के लिए इस रामचरित के गान से बढ़कर दूसरा उपाय नहीं।(इसमें हनुमच्चरित्र भी निरुपम उज्ज्वल तथा दिव्य है।) इसलिए अनादिकाल से इसके श्रवण —पठन, अनुष्ठान आदि की परम्परा हैं रामलीला का भी पहले यही आधार रहा। हम पहले यदुवंशियों द्वारा हरिवंश में वर्णित रामायण नाटक खेलने का उल्लेख कर चुके हैं। वहाँ इसका बड़ा रोचक वर्णन हैं। जब सुपुर में इन्हें सफलता मिली तो ब्रजनाथ के ब्रजपुर में भी बुलाया गया। वहाँ इन्होंने लोभपाद द्वारा शृङ्गऋषि का आनयन, पुनः दशरथ —यज्ञ, गंगावतरण रम्भाभिसार आदि नाटक खेले।(4)

रामायणं महाकाव्यमुद्दिश्य नाटकं कृतम्।

लोमपादो दशरथ ऋष्यशृङ्गः महामुनिम्॥

शान्तामप्यानयामास गणिकाभिः सहानद्य। (2/93/8)

लयताल समं श्रुत्वा गंगावतरणं शुभं। (2/93/25)

1. कामिल बुल्के — रामकथा पृष्ठ 23

2. न ते वागनता काव्ये काचिदत्र भविष्यति।

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले॥

तावत् रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति। (बाल0 2/35 —36 —37)

3. वाल्मीकीय रामायण के पठन —श्रवण एवं अनुष्ठान से क्या लाभ है, इसे आगे के रामायणमाहृत्य, युद्धकांड के 128वें सर्ग के 104 से 122 श्लोको तक तथा बृहद्धर्मपुराण, पूर्वखण्ड के 25 से 30 अध्यायों तक देखना चाहिए।

4. गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित सं० 2066 छत्तीसवां पुनर्मुद्रण वाल्मीकि रामायण पृष्ठ—8







यहाँ प्रद्युम्न, गद एवं साम्ब नान्दी बाजा बजा रहे थे। (नगाड़ों की ध्वनि को ही यहाँ नान्दी कहाँ गया है।) शूर नाम के यादव ही रावण का नाटक खेल रहे थे। श्लोक 28। प्रद्युम्न नलकूबर बने और साम्ब विदूषक। इससे सिद्ध है कि भगवान श्रीकृष्ण के समय से ही सफल रामलीला कार्य आरम्भ था। “यो तो खेलऊँ तहाँ बालकन्ह मीला, करऊँ सदा रघुनायक लीला” से राम कथा की तरह रामलीला आदि की भी अनादित सिद्ध हैं, तथापि इतिहास के विद्वानों की उत्सुकता के लिए इस घटना का उल्लेख कर दिया गया। इसके बाद तो हनुमन्नाटक, प्रसन्नराघवनाटक, अनर्घराघव नाटक, महानाटक, बालरामायण नाटक आदि अंगणित रामलीला नाटक ग्रन्थ ही लिख डाले गये। इन सभी नाटक ग्रन्थों का एकमात्र आधार यह वाल्मीकीय रामायण ही रहा। इतना ही नहीं इस वाल्मीकीय रामायण एवं रामकथा का प्रचार विस्तार जावा, बाली आदि द्वीपों तक हुआ। भारत में इसके चार पाठ प्रचलित हैं। पश्चिमोत्तर शाखा(लाहौर का 1931 का संस्करण) बंगशाखीय (**Gorresios edition**. गोरशियों का संस्करण दक्षिणात्य संस्करण, गुजराती प्रिंटिंग प्रेस बम्बई का तीन टीका वाला संस्करण तथा मध्य विलास बुक डिपो, कुम्भ कोणम् का संस्करण) एवं उत्तर भारत का संस्करण (काश्मीरी संस्करण) (1)। इनमें दक्षिणात्य तथा औदीच्य संस्करण तो सर्वथा एक ही हैं। इनमें कहीं नाममात्र का भी अन्तर नहीं है।

पश्चिम — पूर्ववालों में अध्ययों का अन्तर है। पर उन पर कोई संस्कृतटीका नहीं मिलती। बंगशाखीय पर केवल एक लोकनाथ रचित मनोरमा टीका मिलती है। इसलिए दक्षिणात्य संस्करण (औदीच्य भी वही है ही) का ही सर्वत्र प्रचार तथा प्रामाण्य है।







वाल्मीकीय रामायण का महत्व केवल काव्यदृष्टि से ही नहीं है, प्रत्युत वह नाना वैष्णव सम्प्रदायों में एक उपासक धार्मिक ग्रन्थ भी है । इसलिए रामायण को आश्रय मानकर अनेक व्याख्याग्रन्थों की रचना भिन्न भिन्न युगों में की गई हैं, डॉ० ओफ़ेक्ट के अनुसार टीकाओं की संख्या 30 हैं। मध्ययुग में रामायण की लोकप्रियता इतनी अधिक थी कि पन्द्रहवीं , सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में कम से कम दस टीकायें लिखी गयी, जो व्याख्या की दृष्टि से बहुत ही असामान्यगुणों से सम्पन्न हैं। इन टीकाओं का सामान्य परिचय नीचे दिया जाता है। (1)

रामानुजीय— प्राचीन व्याख्याओं में रामानुज की (जो कोण्डा रामानुज के नाम से विशेष प्रसिद्ध है) यह व्याख्या नितान्त प्रसिद्ध है । ये बाधूल गोत्रीय वरदाचर्या के पुत्र थे। इस टीका को वैद्यनाथ दीक्षित तथा गोविन्दराज ने उल्लिखित किया है । समय 1400 ईस्वी के आस —पास।  
सर्वार्थसार— यह पाश्चाद्वर्ती है। हारीतगोत्रीय बेंकट कृष्णाध्वरी (उपनाम द्वारा वेंकटशयज्वा ) रचित टीका जिसे वैद्यनाथ दीक्षित ने निर्दिष्ट किया है। ये ही ' पितृमेघसार' नामक प्रख्यात धर्म निबन्ध के भी प्रणेता है। इनके गुरु थे आदि बन शठगोप (1460—1520)ई० और इसलिए बेंकटेश का समय 1475 ई०के आसपास प्रतीत होता है।

रामायणदीपिका — वैद्यनाथ दीक्षित (प्रख्यात धर्मग्रन्थ स्मृतिमुक्ताफल के रचयिता ) की यह विख्यात व्याख्या है। ये सर्वार्थसार को अपनी टीका में उद्धृत करते हैं और ईश्वर दीक्षित के द्वारा उल्लिखित किये गये हैं। इसीलिए इनका समय 15 वें शतक का अन्त माना जा सकता है। (1500 ई० लगभग) बृहद् विवरण लघु विवरण— ईश्वर दीक्षित ने रामायण के ऊपर इन टीकाओं का प्रणयन किया है, इनमें से प्रथम व्याख्या का काल 1518 ई० हैं फलतः इनका समय 16 वीं शती का प्राथमार्ध है (1525ई० लगभग) (2)

1.संस्कृत साहित्य का इतिहास आचार्य बलदेव उपाध्याय —पृष्ठ सं० —28

2.संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय पृष्ठ —28







तीर्थीय अथवा रामायण तत्वदीपिका (1) यह टीका अपने प्रणेता 'महेश्वरतीर्थ' के नाम पर तीर्थीय अभिहित की जाती है टीका के आरम्भ में ग्रन्थकार अपने गुरु नारायणतीर्थ को प्रणाम करता है। ये नारायण तीर्थ अपने युग के काशीस्थ संन्यासियों में अग्रणी माने जाते थे। इन्होंने मधुसूदन सरस्वती के प्रख्यात ग्रन्थ 'सिद्धान्त बिन्दु' के ऊपर टीकाद्वय (लघु तथा गुरु) का प्रणयन किया मधुसूदन (लगभग ई० 1550 —1625 ) के पश्चादवर्ती होने से इनका समय 17 वीं शती का उत्तरार्ध और इनके शिष्य महेश्वर तीर्थ का समय 1700 ई० के आस पास मानना उचित है।

यह टीका पाठों के संशोधन में तथा पदों की व्याख्या में बड़ी प्रामाणिक मानी जाती हैं गोविन्दराज ने इनके व्याख्यात अर्थ को अपनी टीका में सादर ग्रहण किया है। रामायण तिलक में भी ये समादृत है। रामायण युद्ध के दिवसों की गणना में तिलक ने इनके मत को कतक के साथ प्रमाणरूपेण उद्धृत किया है। (युद्धकांड 108 सर्ग की टीका )।

रामायण भूषण— (2) अपने रचयिता गोविन्दराज के नाम पर यह गोविन्द राजीय के नाम से भी प्रख्यात है। प्रत्येक कांड में व्याख्यान का नाम ग्रन्थकार ने भिन्न भिन्न दिये हैं, जो कांड क्रम से इस प्रकार हैं— मणिमञ्जरि , पीताम्बर, रत्नमेखल , मुक्ताहार, श्रृंगारतिलक, मणिमुकुट तथा रत्नकिरीट। गोविन्दराज श्री वैष्णव सम्प्रदाय के अनुनायी थे और इससे श्री वैष्णवों की मान्यता के अनुसार विरचित होने से उनमें यह व्याख्या मान्य तथा नितान्त प्रामाणिक मानी जाती है।। गोविन्दराज काँची के निवासी कौशिक गोत्रीय "वरदराज" के पुत्र थे। "शठगोपदेशिक" के वे शिष्य थे (3) युद्धकांड की टीका के अन्तिम पद्य से पता चलता है कि ये भावनाचार्य का समय विजयनगर के राजा कृष्णराय के राज्यकाल से सम्बद्ध है।

1. बेकटेश्वर प्रेस से पत्राचार में प्रकाशित।
2. कृष्णाचार्य के द्वारा कुम्भकोर्ण से 1911 में तथा बेकटेश्वर प्रेस बम्बई से भी प्रकाशित—
- 3 इत्थं कौशिक —वंश मौक्तिक —मणि गोविन्दराजमिधो।

वात्स्य श्री— शठकोपदेशिक पद्यद्वन्द्वैक —सेवारतः।। (ईस्वी 1403—1420ई०) (टीका का अन्त)







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

तिरुपति की यात्रा के समय श्री वेकटेंश का स्वप्न में आदेश पाकर इन्होंने इस टीका की रचना की। यह टीका बहुत प्रामाणिक और पाण्डित्यपूर्ण है। वाल्मीकि रामायण के भीतर विद्यमान वैष्णव सिद्धान्तों के विशद विवरण के लिए तो वह व्याख्या सचमुच अनुपम हैं। (1) गोविन्दराज के समय का निर्णय उनके द्वारा उद्धृत ग्रन्थकारों की सहायता से किया जा सकता है। इनके द्वारा उद्धृत ग्रन्थकारों की सहायता से किया जा सकता है इनके द्वारा उद्धृत "वेदान्तदेशिक" का मृत्यु संवत् 1369 ईस्वी है, तथा 'साहित्य चिन्तामणि राजा वेमभूपाल के द्वारा प्रणीत अलंकार ग्रन्थ है। तीर्थीय टीका के उद्धरण के हेतु समय है 18 शती का आरम्भ वैष्णव सिद्धान्तों की समीक्षा से प्रतीत होता है कि ये वेगलइ कुल में पैदा हुए थे। परन्तु उदारवृत्ति होने से ये बेगलइ मत की ओर आकृष्ट हुए और उस मत के मान्य आचार्य वेदान्तदेशिक के प्रति इनकी अगाध श्रद्धा की भावना इसी उदारवृत्ति में अन्तर्हित है। (2) ये तिरुपति में निवास करते थे वहीं रामायण का व्याख्यान सुनाया करते थे।

वाल्मीकि हृदय— यह अत्रिगोत्री अहोबल द्वारा रचित टीका है, जिसमें गोविन्द राज का मत अनेक स्थानों पर उद्धृत किया गया है। इनके गुरु थे अहोबिलमठ के षष्ठ आचार्य शठकोपदेशिक (उपनाम पशंकुष) जो विजयनगर के राजा रामराय (16 शतक) के समकालीन थे। मूलतः अहोबल आत्रेय का समय 17 वीं शती का आरम्भ मानना उचित होगा (15, 75 ई0से लेकर 1625 ई0 के आस-पास द्रष्टव्य ऐनल्स आफ भण्डारकर इन्सिटिट्यूट 1942, अमृत कतक अथवा कतक(3) इस प्रख्यात टीका के रचयिता का नाम — "माधवयोगी" इस टीका के आरम्भ काल हस्तीश्वर एकाग्रनाथ, (कांची में

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास आचार्य बलदेव उपाध्याय पृष्ठ— 29

2 पृष्ठ 30—54/इस लेख में ग्रन्थकार के समय, ग्रन्थ और मत का सर्वांगीण प्रामाणिक विवेचन है।

3. इस टीका के तीन कोड मैरूर विश्वविद्यालय के प्रकाशित हैं (1960-1971)।







विद्यमान प्रख्यात देवता) वेदगिरीश्वर ('तिरुक्कलुकुननरम् नाम प्रसिद्ध क्षेत्र के देवता) को प्रणाम किया है। टीका के अवसर पर द्राविडी भाषा के शब्दों का पर्याय रूप में दिया है। विशिष्ट वृक्षों के नाम द्राविडी में दिये गये हैं। 'पिपासा' के अर्थ में 'दाह' शब्द का तथा विवाह के लिए 'कल्याण' शब्द का प्रयोग जो इन्होंने किया है तमिल भाषा में ही होता है। फलतः यह द्राविड थे और कांची प्रान्त के। (1) इनके समय का निर्धारण भली भाँति किया जा सकता है। इन्होंने बिना नाम निर्देश किये महेश्वर तथा गोविन्दराज की टीका की आलोचना की हैं इन्होंने बिना नाम निर्देश किये महेश्वर तथा गोविन्दराज की टीका की आलोचना की हैं फलतः ये गोविन्दराज के पश्चादवर्ती टीकाकार हैं। अष्टादशशती के पूर्व भाग में स्थित (लगभग ई० 1650 — ई० 1725 ई०) रामायण तिलक में इनका बहुत उल्लेख इस काल निर्णय से असंगत नहीं होता। क्षेपक का भी विचार इन्होंने बड़े विवेक के साथ किया है। वेद वेदान्त मीमांसा व्याकरण आदि अनेक शास्त्रों में इनका पाण्डित्य श्लाघनीय है। उपनिषदमंगलाभरण नामक इनका वेदान्त विषयक ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित है।

रामायण टीका— यह सर्वाधिक लोकप्रिय टीका है। श्रृंगवेरपुर (आधुनिक सिगरौर, जिला इलाहाबाद) के विसेन वंशी राजा रामवर्मा ही इसके वास्तविक प्रणेता हैं। ये नागेश भट्ट के आश्रयदाता थे, जिसका उल्लेख स्वयं नागेश ने किया है। इन्होंने अध्यात्म रामायण की भी टीका लिखी है। फलतः दोनों रामायण अध्यात्म और वाल्मीकीय के टीकाकार राजा रामवर्मा हैं नागेश के ऊपर इस टीका का कर्तृत्व आरोप करना निरीभ्रान्ति है। समय 18 वीं शती का उत्तरार्ध (प्रकाशित)। टीकाकारों में बड़े आदर के साथ किया गया है इस मूल को समझने में विशेष उपयोगी यह 'रामीय टीका' पाठभेद की भी समीक्षा करती है। (2)

1. द्रष्टव्य प्रथम कांड की प्रस्तावना पृ० 14—17।

2. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बालदेव उपाध्याय पृ० 90







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

रामायण शिरोमणि — रामायण की यह व्याख्या वंशीधर तथा शिवसहाय की सम्मिलित रचना हैं आरम्भ के पद्यों से पता चलता है कि वंशीधर तोडिराम के पौत्र तथा सीताराम के पौत्र थे। रचना त्रिवेणी के तट पर प्रयाग में की गई थी। रचना काल 1921 सं० (1865ईस्वी) का उल्लेख टीका में किया गया है। कालक्रम से आधुनिक होने पर व्याख्या के विषय में विशेष प्रौढ़, पाण्डित्यपूर्ण तथा विस्तृत हैं।

मनोहरा—(1) इनके रचयिता बंगदेशीय (लोकनाथ चक्रवर्ती) हैं ये मूलतः पूर्व बंग के जसोहर जिले के निवासी थे तथा चैतन्यदेव के समकालीन थे। (2) वैष्णव धर्म में दीक्षित होकर नदियों में आकर रहने लगे थे। अतः इनका समय 16 वीं शती है। आज भी इनके वंशजों में पाण्डित्य की कमी नहीं है। इनकी टीका अल्पाक्षर है, जो वस्तुतः टिप्पणी ही कही जा सकती है, परन्तु पाठ संशोधन इसकी महती विशेषता है इन्होंने गौडीय रामायण के पाठ पर भी टीका लिखी है।

धर्माकूतम—(3) रामायण की आलोचनात्मक व्याख्या है, जिसमें ग्रन्थकार ने बड़े प्रमाणों को उपन्यस्त कर दिखलाया है कि रामायण वेद तथा धर्मशास्त्र की शिक्षा और उपदेशों का प्रतिपादक ग्रन्थरत्न है। पद व्याख्या की अपेक्षा तात्पर्य निर्देश की ही यहाँ महिमा विराजती है। ग्रन्थ का यह वैशिष्ट्य इस प्रकार उल्लिखित है। “कृतिरियं सकलश्रुतिसम्मता स्मृति पुराण वचोभिरलंकृता।” इसके रचयिता हैं। त्रयम्बक मखी, जो तंजोर के राज्य स्थापक एकोजी (1674 ई० — 1687 ई०) के मंत्री के पुत्र तथा नरसिंह के भ्राता हैं इनके पितामह त्रयम्बकामात्य भी तंजोर के राजाओं के दरबार के धर्माध्यक्ष थे। इस प्रकार इस व्याख्या का रचनाकाल 17 वीं शती का उत्तरार्ध है। (4)

1. गुजराती प्रिंटिंग प्रेस बम्बई के अनेक जिल्दों में तिलक तथा भूषण के साथ प्रकाशित।
2. कलकत्ता के बंगाक्षर में प्रकाशित 1951 ई०।
3. श्री वाणी विलास प्रेस, श्रीरंगम से कृतिपुर भागों में अंशतः प्रकाशित।  
DCC Mahatish Maneshi Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय पृष्ठ — 31







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

वाल्मीकि रामायण पर अगणित प्राचीन टीकाएं हैं यथा—1—कतक टीका (इसका नागोजीभट्ट तथा गोविन्दराजादि ने बहुत उल्लेख किया हैं) नागोजीभट्ट की तिलक या रामाभिरागी व्याख्या गोविन्दराज की भूषण टीका, शिवसहाय की रामायण शिरोमणि व्याख्या (ये पूर्वोक्त तीनों टीकाएँ गुजराती प्रिंटिंग प्रेस बम्बई में एक में ही छपी हैं।) माहेश्वरतीर्थ की तीर्थव्याख्या (1) ( ये टीकाएँ वेकटेश्वर प्रेस बम्बई में छपी हैं। वरदराज कृत विवेकतिलक , ऋम्बकराज मखानी की धर्माकूत व्याख्या (यह खण्डशः मद्रास एवं श्रीरंगम से छपी हैं) और रामानन्दतीर्थ की रामायण कूट व्याख्या। इसके अतिरिक्त चतुर्थदीपिका, रामायण विरोध, परिहार रामायण, सेतु तात्पर्य, तरणि श्रृंगारसुधाकर , रामायण सप्तबिम्ब , मनोरमा आदि अनेक टीकाएँ हैं। 'रीडिंग्स इन रामायण के अनुसार इतनी टीकाएं , उनके शिष्य की विरोधभजिनी टीका माधवाचार्य की भी इसी नाम की एक अन्य व्याख्या (जिसमें उन्होंने रामायण को शिवपरक सिद्ध किया है) प्रबाल मुकुन्द सूरि की रामायण भूषण व्याख्या एवं श्री रामभद्राश्रम की सुबोधिनी टीका डॉ० एम० कृष्णमाचारी ने अपनी पुस्तक (हिस्ट्री आफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर में कई ऐसी टीकाओं का उल्लेख किया है, जिनके लेखकों का पता नहीं है।

उदाहरणार्थ —अमृतकतक रामायणसार दीपिका , गुरुबाला चित्तरंजिनी , विद्वन्मनोरंजिनी आदि। उन्होंने वरदराजाचार्य के रामायण सारसंग्रह , देवरामभक्त की विषय पदार्थ व्याख्या नृपसिंह शास्त्री की कल्पवल्लिका वेंकटाचार्य की रामायणार्थ प्रकाशिका बेंकटाचार्य के रामायण कथा विमर्श आदि व्याख्या ग्रन्थों का भी उल्लेख किया है। (2) इसके अतिरिक्त कई टीकाएँ:मध्वविलास :’ वाली प्रति में संग्रहित हैं।’ ज्ञात ये सब संस्कृत व्याख्याएं हैं। अज्ञात संस्कृत व्याख्याओं में हिन्दी के अनेकानेक द्वैत, अद्वैत शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैतादि , मतावलम्बियों, आर्यसमाज की व्याख्याएं बंगला, मराठी।

1. गीताप्रेस गोरखपुर से 2066 छत्तीसवॉ पुनर्मुद्रण के वाल्मीकि रामायण पृष्ठ —43—48

2. गीताप्रेस गोरखपुर से 2066 छत्तीसवॉ पुनर्मुद्रण के वाल्मीकि रामायण पृष्ठ —5







गुजराती आदि विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं तथा फ्रेंच अंग्रेजी टीका टिप्पणियों की तो यहाँ कोई बात ही नहीं छेड़नी है, क्योंकि उनका अन्त ही नहीं होना है।

आदि वाल्मीकि का व्यक्तित्व एवं कृतित्व— संस्कृत साहित्य के आदिकवि वाल्मीकि है, यह सभी विद्वान स्वीकार करते हैं वाल्मीकि ने भगवान राम के आदर्श चरित्र को काव्यबद्ध किया है। स्कन्द पुराण और अध्यात्म पुराण के अनुसार यह अग्निशर्मा नाम के ब्राह्मण थे। पूर्वजन्मों के पाप के कारण लूटपात करना ही इनकी जीविका का साधन था। मार्ग में पथिकों के धन को लूटने में यदि इनको प्राण भी लेने पड़े तो यह हिचकते नहीं थे। एक बार उस मार्ग से एक मुनि जा रहे थे। इन्होंने उनसे जब धन की माँग की तो मुनि ने कहा मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। फिर मुनि ने इनसे कहा कि यह लूटपात पाप है तो वाल्मीकि जी ने कहा मैं भी जानता हूँ, लेकिन इसी धन से मैं अपने परिवार का पालन पोषण करता हूँ। यह मुनि को वही पेड़ पर बाँधकर अपने घर जाते हैं। इनके प्रश्न पर परिवार के लोग उन पर क्रुद्ध हुए और बोले — 'हमने आप को यह पाप कर्म करने को नहीं कहा हम क्या जाने आप क्या करते हैं और किस रीति से धन लाते हैं। हम आपके इस पाप में क्यों सहभागी बने। परिवार के लोगो का उत्तर सुनकर यह अत्यन्त दुःखी और आश्चर्यचकित होकर मुनि के पास लौट आये। मुनि ने इनका मन शान्त करने के लिए इन्हें राम नाम जपने को कहा। परन्तु वृत्ति के अनुसार यह 'मरा' जपते हुए तपस्या करने लगे।

इस प्रकार समाधि में लीन होकर बहुत वर्षों तक तपस्या करते रहें तपस्या में लीन इनके शरीर पर दीमकों ने जगह बना ली। इनका पूरा शरीर मिट्टी से ढक गया। तब वरुण की अनवरत जलधारा से मिट्टी बह गयी और इनका शरीर प्रकट हो गया। मुनियों के अनुरोध पर इन्होंने अपनी आँखे खोली। दीमकों की मिट्टी के ढेर से निकलने के कारण 'वाल्मीकि' और प्रचेता के द्वारा जलधारा से मिट्टी हटाकर बाहर निकाले







जाने के कारण —प्राचेतस इन दो नामों से प्रसिद्ध हुए।

स वः पुनातु वाल्मीकेः सूक्तामृत महोदधिः ।

ओंकार इव वर्णानां कवीनां प्रथमों मुनिः ॥ (रामायण मंजरी)

महर्षि वाल्मीकि को ब्रह्मा ने 'अद्यः कविरसि' (1) (आदि कवि हो) कहकर सम्बोधित किया है आज भी वही परम्परा बद्धमूल है। वाल्मीकि को संस्कृत साहित्य का आदिकवि कहना अत्यन्त सार्थक है। इसके पीछे एक इतिहास छिपा हुआ है। वाल्मीकि से पूर्व पद्यात्मक रचनाएँ हुई थी और हो रही थी। परन्तु उनका उद्देश्य देवस्तुति धर्म भावना देवार्चना या उपासना आदि ही था। वाल्मीकि ही वह प्रथम क्रान्तिकारी एवं प्रगतिशील मनीषी थे, जिन्होंने जनभावना को समझा, सोचा और उस पर मनन किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अब तक की कविता केवल धर्म प्रधान है और इनका जन जीवन से साक्षात् कोई सम्बंध नहीं है। यह विचारधारा उनके मस्तिष्क में विद्युत की भाँति दौड़ गई और उन्होंने एक क्रान्तिकारी पग उठाने पर दृढ़ निश्चय किया। (2) संयोगवश उन्होंने तमसा नदी के तट पर व्याध द्वारा हत नर कौंच पक्षी को देखा और उनके मुख से एक श्लोक निकल पड़ा। (3) महर्षि वाल्मीकि को कुछ लोग निम्न जाति का बतलाते हैं। परन्तु वाल्मीकि रामायण(4) तथा अध्यात्मरामायण(5) में इन्होंने स्वयं अपने को प्रचेता का पुत्र कहा है (6) मनु स्मृति में प्रचेता को वसिष्ठ नारद पुलस्त्य, कवि आदि का भाई लिखा है। (7) स्कन्दपुराण के वैशाखमाहात्म्य में इन्हें जन्मान्तर का व्याध बतलाया गया है। इससे सिद्ध है कि जन्मान्तर में ये व्याध थे। व्याध—जन्म के पहले भी स्तम्भ नाम के श्रीवत्सगोत्रीय ब्राह्मण थे।

1. उत्तररामचरित , अं० 2 वाक्य सं० 24, संस्करण क० दे० द्विवेदी 1968।
2. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास — डा० कपिल देव पृष्ठ —111
3. मा निषाद प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वतीः समाः।  
यत् कौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥ (वा०रा० बाल०)
4. वाल्मीकीय रामायण— 7/93—17
5. अध्यात्म रामायण— 7/96—19
6. 'प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन । (7/7/31) (बा०रा०)
7. प्रचेतस वसिष्ठ च भृगुं नारदमेव च (मनुस्मृति) (1/35)







व्याध जन्म में शुंगऋषि के सत्संग से, रामनाम के जप से ये दूसरे जन्म में 'अग्निशर्मा' (मतान्तर से रत्नाकर) हुए । वहाँ भी व्याधों के संग से कुछ दिन प्राक्तन संस्कारवश व्याध कर्म में लगें, फिर सप्तर्षियों के सत्संग से मरा-मरा जपकर बाँबी पड़ने से वाल्मीकि नाम से विख्यात हुए और वाल्मीकि रामायण की रचना की। (1) (कल्याण सं० स्कन्दपुराण (2) बंगला के कृतिवास रामायण मानस अध्यात्मरामा० (3) आनन्दरामायण राज्यकाण्ड (4) भविष्य पुराण प्रतिसर्ग (5) में भी यह कथा थोड़े हेर-फेर से स्पष्ट है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने वस्तुतः यह कथा निराधार नहीं लिखी। अतएव इन्हें नीच जाति का माना सर्वथा भ्रममूलक है।

यही उनके काव्य का प्रथम सूत्रपात था। उन्हें पुनः चिन्ता प्रारम्भ हुई कि नायक किसको बनाया जाय। उनका लक्ष्य था कि मेरा काव्य अमर हो, जनजीवन से साक्षात् संबद्ध हो, चतुर्वर्ग की प्राप्ति का साधन हो, भाव भाषा छन्द अलंकार आदि की दृष्टि से नवीनतम हो, लोक-मनोरंजन के साथ ही लोक-परलोक दोनों का साधक है। इन सभी लक्ष्यों की पूर्ति के लिए मर्यादा पुरुषोत्तम राम के अतिरिक्त और कोई नायक उन्हें न जँचा। नायक के निर्णय के साथ ही उनकी काव्य निर्धारिणी प्रवाहित हो गई और गायत्री के पावनत्व को सुरक्षित रखने के लिए 24 सहस्र श्लोकों के लिए मुक्तामयी माला गुँथी गई, जो आज भी पानी त्रिपथगा के सदृश जन मानस के पाप सन्ताप को संध्वस्त कर रही है। इससे ही लौकिक काव्य परम्परा प्रादुर्भूत हुई, जो प्रतिदिन पुष्पित एवं पल्लवित होती हुई आज विशाल साहित्य के रूप में समृद्ध है। इस क्रान्तिकारी नवीन धारा के प्रवर्तन के कारण वाल्मीकि को आदि कवि कहा गया।

1. वाल्मीकीय रामायण गीताप्रेस गोरखपुर सं० 2066 छत्तीसवीं पुनर्मुद्रण — पृ० सं० 4
2. कल्याण संस्करण —स्कन्दपुराण —पृ० 381—709, 1024
3. बंगाल के कृतिवास रामायण मानस अध्यात्मरामायण —2/6/64 से 92 तक
4. आनन्द रामायण राज्यकाण्ड —14/21, 49
5. भविष्य पुराण— प्रतिसर्ग —4/10







आदिकवि वाल्मीकि की कृति वाल्मीकीय रामायण आदि काव्य हुआ। वस्तुतः यह लौकिक काव्य माला का प्रथम गुच्छ है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें ऐतिहासिक महाकाव्य महाकाव्य एवं वीरकाव्य के सभी गुण समन्वित हैं। (1) एक ओर भाषा का लालित्य है तो दूसरी ओर भावों की मनोहर छटा एक ओर रस —परिपाक अद्वितीय है तो दूसरी ओर अलंकारों का सप्तरंगी आकर्षण । एक ओर नायक की उदारता है तो दूसरी ओर नैतिकता का चरमोत्कर्ष । एक ओर अंतः प्रकृति का मनोज्ञसंगुम्फन है तो दूसरी ओर बाह्य प्रकृति का सजीव चित्रण। वाल्मीकि की सशक्त लेखनी से प्रादुर्भूत यह काव्य न केवल महाकाव्य ही बना, अपितु ऐतिहासिक महाकाव्य वीर काव्य और आदर्श धर्मग्रन्थ बन गया।

वाल्मीकि की शैली को वैदर्भी शैली कह सकते हैं इसमें भाव भाषा का समन्वय सरलता सुबोध आदि सभी गुण सन्निहित हैं। इसमें शैली के तीनों गुण प्रसाद, ओज और माधुर्य हैं, इसकी भाषा सुन्दर, सरल, ललित प्रांजल एवं परिष्कृत हैं। रामायण में प्रायः सभी रस प्राप्त होते हैं। करुण —शृंगार और वीर इनमें मुख्य हैं। करुण रस अंगी है। अन्य रस अंग, शृंगार के दोनों पक्षों संभोग और विप्रलंभ का वर्णन प्राप्त होता है। वाल्मीकि का प्रिय छन्द अनुष्टुप है। अधिकांश छन्द अनुष्टुप में ही है। किन्तु स्थान स्थान पर मुख्यतः सर्ग के अन्त में इन्द्रवज्रा, उपजाति आदि छन्द भी आए हैं।







## (ख) साकेतसौरभम् का प्रणयन एवं व्यक्तित्व परीक्षण—

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी कृत साकेतसौरभम् एक महाकाव्य है जिसमें राम के आदर्श चरित्र का मनोहारी वर्णन किया गया है। राम काव्य अनेक है, परन्तु काव्य कला और सरलता का साकेतसौरभम् जैसा मणि कांचन संयोग अन्यत्र दुर्लभ है। रसानुकूल छन्द और गीतों की मनोहारी छटा इस संस्कृत महाकाव्य को एक अलग पहचान देती हैं। सभी आठ सर्गों के हिन्दी रूपान्तर रचनाकार द्वारा इस मनोयोग से किए गए हैं कि एक पुस्तक में संस्कृत महाकाव्य और हिन्दी कथा काव्य दोनों का आस्वाद मिलता है भारत के जाने-माने साहित्य हस्ताक्षरों ने इस प्रबन्ध की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

वाल्मीकि जी ने रामायण में उपमा, उत्प्रेक्षा अर्थान्तरन्यास आदि अलंकारों का विशेष प्रयोग किया है। वाल्मीकि जी न केवल वाह्य प्रकृति के विशद चित्रण में असाधारण पटु हैं, अपितु अन्तः प्रकृति के निरूपण में भी सिद्धहस्त हैं। इनके इस आदिकाव्य में अर्थगौरव की भी प्रधानता है।

साकेतसौरभम् महाकाव्य में कवि भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चतुर्दिक फैले हुए देदीव्यमान प्रकाश रूपी चरित्र को अपने काव्य में रूपान्तरित किये हैं।

तथापि सहजा प्रीतिः शाश्वती च मनोगतिः ।

न निवरयितुंशक्या स्फुरिता काव्यझङ्कृतिः ॥ (1)

साकेतसौरभम् में कवि कहते हैं कि इस लोक और परलोक में व्याप्त जो अपने कार्य कुशलता के विषय में श्रेष्ठ निरन्तर वात्सल्य रूपी प्रेम को प्रदर्शित करते हुए शब्दवेधि वाण को चलाने में चतुर धुरन्धुर सप्तम वैकुण्ठ में अवतार लेने वाले राजा जनक और चक्रवर्ती दशरथ आज भी मरे नहीं हैं न ही जीवित हैं इस संसार में व्याप्त कवित्व की चेतना ने रघुनन्दन की स्नेह और निर्लोभता का अन्नूठा आस्वादन इस काव्य में किया गया है (2) जैसा कि आगे कहा गया है कि श्रवण के पिता (अन्ध मुनि) के शापवश राम के पीछे भागते हुए (दिवगंत) राजा दशरथ के

1. साकेतसौरभम् —भूमिका

2. श्रवणस्य वितुः शापात् सद्यो राममनुद्रुताः ।







प्राण तपस्वी वाल्मीकि की साँसों में समा चुके थे जिस प्रकार वाल्मीकि ऋषि कौंच पक्षी की हत्या देखकर उनके मन में उसी प्रकार की संवेदनाएँ अंकुरित हुई । जिस प्रकार अंध मुनि के शाप से राजा दशरथ के मन में संवेदनाएँ अंकुरित हुई और वाल्मीकि उस संवेदनाओं की अनुभूति करते ही रघुवंश के सूक्ष्म से सूक्ष्म रहस्य को जानने लगे(1) आदिकवि वाल्मीकि द्वारा रचित वाल्मीकि रामायण में मानव मूल्यों का निरूपण और पवित्र मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है और इस अभिनव महाकाव्य साकेतसौरभम् में भी राम के चरित्रों का निरूपण किया गया है। इस साकेत सौरभम् में विशिष्ट लक्षणों युक्त आठ सर्गों में जैसे अवतार, संस्कार, संकल्प, सहकार, उद्योग, विक्रम, अभिषेक, दिग्विजय आदि नाम दिये हैं।

इस महाकाव्य में कुछ पुरानी कथाओं को परिवर्तित करके नयी संवेदनाओं को जन्म दिये हैं, पुष्पवाटिका में शोक से पीड़ित जानकी को लंकापति दशानन भयभीत करता है और कपिराज हनुमान सूक्ष्म एवं सावधान गवेषणकर्त्ता की दृष्टि से वहाँ का वातावरण समझते हैं । लंकापति जब सीता को भयभीत करने जाते हैं, तो वह अपनी महारानी मन्दोदरी को आगे करके और स्वयं दम्भ से चूर रावण स्वयं अशोक की बगिया में आया करते हैं। इस महाकाव्य में सीता को अग्निपरीक्षा का वृत्तान्त नहीं दिया गया है बल्कि यह बताया गया है कि प्रारम्भिक शिक्षा पर्याप्त हव्य सामग्री वाले किसी तपोवन के आध्यात्मिक वातावरण में सम्पन्न हो—(2)

1. कौंचघातं पुरो दृष्ट्वा क्षण — साधारणीकृतः।

रघुवंशरहस्यानां विज्ञः प्राचेतसोऽभवत्॥

साकेत सौरभम् (2,—46)(श्लोक)

2. ऐषीदपत्यसंस्कारं पावनं रघुपुगवः

क्वचित् प्राज्यपुरोडाशे चित्रकाशे तपोवने॥







इसके उपरान्त जानकी ने दो जुड़वे सन्तानों को जन्म दी जिनका स्वर राजहंस जैसा और बड़े का रंग नीलम जैसा और छोटे का रंग पुखराज जैसा था, और उनका व्यक्तित्व एवं आकृति राम के जैसी थी। और दोनों पुत्रों को दिव्यास्त्र जन्म से ही प्राप्त थे। और सीता मईया अपने दोनों पुत्र लव कुश को दृढ़ संकल्प करके घर में ही विभिन्न लय को सिखाकर श्लोक गायन में प्रवीण कर दिया और दोनों पुत्र इतने तीव्र बुद्धि वाले थे कि वाल्मीकि जी के मुख से बोले गये पद्य उनके कानों में पड़ते ही उनकी स्मृति पटल पर अमिट हो जाते थे। पके हुए मालपुए से वाल्मीकि के अमृत वचन उनके स्वर की चासनी पाकर अत्यधिक लुभावने बन जाते थे ।(1)

अब दोनों कुँवार 12 वर्ष की अवस्था में सभी विद्याओं में पारंगत हो गए और अयोध्या में राम अश्वमेध यज्ञ के लिए बायीं ओर स्वर्णमयी सीता की प्रतिमा रखे हुए थे और लक्ष्मण पुत्र को अश्व का प्रधान रक्षक बनाया गया था और अश्वमेधीय अश्व लवकुश कुमारों द्वारा पकड़ा गया अश्व प्राप्त करने के लिए सेना आगे बढ़ी तो शस्त्र और राम जी को साहित्य रस से मूर्छित कर दिये और मूर्छा हटते ही राम के सम्मुख वाल्मीकि , देवी सीता पुत्र सभी उपस्थित थे । राम पुनः अपनी पत्नी पुत्र सहित अयोध्या पहुँचे और नीतिपूर्वक राज्य संचालन करना प्रारम्भ कर दिये। प्रजाओं द्वारा अभिनन्दित देवी सीता और श्री राम त्रेतायुग में विश्व -वंदित भारतवर्ष का नीति पूर्वक संचालन करते रहे (2) और आज भी जनमानस की चेतना उत्कृष्ट रहे, और देश और विदेश के सभी कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का गुणगान अपने अपने काव्यों में किया है।

1. अपूपसन्निधं पक्वं वाल्मीकि वचनामृतम्  
स्वरफणित सयोगं तयोः प्राप्य परं बभौ ।। साकेतसौ0 -8/21 -पृष्ठ-201
2. सीतारामौ चिरं राज्ये प्रजाभिरभिनन्दितौ ।  
नयतोऽनयतां त्रेतां भारतं विश्वभारतम् ।। सा0सौ0 8/44 पृष्ठ संख्या -209







उसी प्रकार साकेतसौरभम् महाकाव्य में कवि ने रसानुकूलित छन्दों से परिपूर्ण, सुमनोहारिणी स्वर से परिपूर्ण है। सुख के भाव का बोधार्थ साकेत सौरभम् में प्रत्येक पद्यों का निर्माण राष्ट्रभाषा के शब्द विशेष से जोड़े गये हैं। इस काव्य में कुछ संवेद्य गीतों के समानान्तर गीतों के साथ प्रयोग करके उसी के भावानुवाद रूपी स्वरूप को प्रस्तुत किया है।

कवि ने कहा है कि इस महाकाव्य की सत्प्रेरणा उनके गुरु प्रयाग के विद्वान डॉ० चण्डिका प्रसाद शुक्ल के द्वारा मिली और उज्जयिनी के आचार्य श्री निवाससरथ, वाराणसी के सनातन महाकवि डॉ० रेवाप्रसाद द्विवेदी, प्रयाग के डॉ० चण्डिकाप्रसाद शुक्ल, मुरारनगर (गवालियर) म० प्र० के आचार्य रामस्वरूप, डा० आजाद मिश्र प्राचार्य राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान परिसर भोपाल, डॉ० रमेश प्रसाद त्रिपाठी अखिल भारतीय याज्ञिक भोपाल, कामता प्रसाद त्रिपाठी 'पीयूष' खैरागढ़ डॉ० बालकृष्ण शर्मा गोपाचल नगर, सनातन, अभिराज रमाकान्त शुक्ल, जनार्दन पाण्डेय, 'मणि' रामविनय सिंह आदि कवियों ने इस काव्य की मनोहारी छटों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

महामहोपाध्याय डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी कृत साकेतसौरभम् महाकाव्य की रामनवमी (2003) तिथि को पूर्ण हुआ और उसी समय इनको रीवा क्षेत्र के अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय और श्री रामराजा संस्कृत विद्यालय में निरीक्षण कार्य के लिए इन्हें बुलाया गया और उसी तिथि को निरीक्षण कार्य करने के लिए ओरछा नगर में ब्रह्ममुहूर्त के समय ही ओरछानगर के पास ही ओरछाधीश्वर मंदिर में स्थित अद्वितीय राघवप्रतिमा के दर्शन किये और दर्शन के उपरान्त ही विद्यालय निरीक्षण किये तब वहाँ के प्राचार्य ने कहा त्रिपाठी जी आज मध्याह्न के समय आप ओरछाधीश्वर मंदिर में भगवान के रसामृत प्रसाद लेने के लिए आप विशिष्ट अतिथि के रूप में निमंत्रित हैं और त्रिपाठी जी मन से पुलकित होकर रामरूपी प्रसाद का अमृतपान किया, और उसी समय रामरूपी प्रसाद का पान करके ही उनके घर में पौत्र ने जन्म लिया। इस राम रूपी कथा



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.



जो भी सत्जन मन कर्म और वचन से श्रवण करता है भगवान उसको अवश्य ही सफल बनाता हैं जो व्यक्ति सत्य के मार्ग का अनुसरण करता हुआ सत्पथ पर चलता है भगवान उसकी रक्षा स्वयं करते है। जब दशानन से युद्ध के समय जंगल के भालू, बन्दर, पशु-पक्षी, नल-नील सुग्रीव, हनुमान, विभीषण आदि सभी ने राम का साथ दिया और भगवान राम ने तुरन्त ही उसका प्रतिफल सभी को प्रदान किया । इसलिए जो भी व्यक्ति सद् विचारों के साथ राम की भक्ति उपासना आदि करते है भगवान उसकी स्वयं रक्षा करते है। वह भाग्यवान् मनुष्य ही होगा जो भगवान के नाम का स्मरण करता है और जीवन पर्यन्त सुख का उपयोग करता है, और उसी प्रकार त्रिपाठी जी को भी राम की कृपा से और माँ सरस्वती की कृपा से लेखन की विविध विधाओं कविता-नाटक, ध्वनि रुपक, कहानी, निबन्ध, समीक्षा आदि में सफलतापूर्वक अभिव्यक्ति के साथ सनातन उपलब्धियों , मूल्यों और प्रवृत्तियों को समझने की विलक्षण सूक्ष्म दृष्टि भी प्रदान की थी। वे जन्मजात शोध वृत्ति के धनी साहित्यिक व्यक्ति थे।

‘साकेतसौरभम् ’ आठ सर्गों का संस्कृत महाकाव्य है। इस महाकाव्य में महाकवि महामहोपाध्याय डॉ० भास्कराचार्य ने इसके प्रथम सर्ग के प्रथम श्लोक में गज मुखगणेश को गणतन्त्र का संरक्षक कहा है।

उत्तम संस्कार देकर विपदाएं दूर करने वाले गणतंत्र के संरक्षक गजमुख श्री गणेश को हृदय —मंदिर में प्रतिष्ठित करता हूँ।(1)

विद्वान संस्कृत कवि मनीषियों द्वारा सराहना प्राप्त इस महाकाव्य के सर्गों का नाम अवतार, संस्कार, संकल्प, सहकार , उद्योग, विक्रम , अभिषेक और दिग्विजय है। महाकवि महामहोपाध्याय ने अपनी विद्वता की सुरभि सर्वत्र विखेरी है। सहकार सर्ग का शुभारम्भ सूक्ति से हुआ है।

1. संस्कारकारणं व्यापद्वारणं वारणाननम्  
गणेश गणतन्त्रेणशं कलये हृदयगलये ।(1) (सा०सौ० 1 सर्ग 1श्लोक पृष्ठ सं० 1)







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

सज्जनों को सज्जन व्यक्ति सूने चौराहे पर भी मिल जाते हैं। (ऋष्यमूक के ) एक पर्वतीय अंचल में श्रीराम की भेंट पवन पुत्र हनुमान से हो गई।(1)

इसी सर्ग के सोलहवें और सत्रहवें श्लोको में महत्वपूर्ण सीख निहित है उन श्लोको में भी कवि ने अपने कवित्व का महान उद्गार व्यक्त किये हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में समयानुकूलित वातावरण की प्रेरणाओं को भी उल्लेख्य किये हैं। जैसा कि अहंकारी व्यक्ति संसार में दीर्घायु नहीं होता , (तभी तो) घर में निरंकुश दुराचरण करते बालि के तन पर राम —बाण लगा और राम के हाथों मृत्यु होने से परलोक में श्रेष्ठ संगति प्राप्त किये।

कवि ने अपनी इस रचना में वर्तमान अपेक्षाओं को दृष्टिगत रखते हुए अपनी रचनाओं के अन्तर्गत कहते हैं कि जो व्यक्ति अपने भाई की सम्पदा लेकर उसको घर से निर्वासित करता है, उसे राम के बाणों का लक्ष्य बनना पड़ता है। (2) उसे जन्म जन्मान्तर कष्ट का भोग भोगना पड़ता है और जो व्यक्ति सत्मार्ग पर चलता है उसे रामचन्द्र के कमलरूपी चरणों का आश्रय प्रदान होता है। जैसे जटायु और शबरी की निष्ठा से प्रसन्न होकर उन्हें अपने चरणों की सेवा का आर्शिर्वादन दिया । चिरंजीवी पवन कुमार ने अपनी सम्पूर्ण आयु समर्पित करके सीता पति के चरण कमलों की सेवा की थी। नवीन शैली के संस्कृत महाकाव्य 'साकेतसौरभम्' से इस तरह के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनमें सूक्तिमत्ता और तथ्य प्रस्तुतीकरण का वैशिष्ट्य निहित है। समस्या और संवेदना शीर्षकों के अन्तर्गत शोधपरक विद्वत्तापूर्ण संस्कृत गद्य और पद्य रचनाएं संजोयी गयी हैं।

1 संसज्यन्त सदा सन्तः सदिभ शून्येऽपि सञ्चरे

समीरसूनुना रामः शैलोत्संगे हि संगतः। (1) सा० सौ -4/1- पृष्ठ -97

2. अहंकार कृतस्नेहो नेह दीर्घायुराप्नुयात्

रामो दूषितगेहं वै नेहं विद्याध बालिनः । साकेत सौ० -4/16-पृष्ठ सं० -103

CC-0. Mahatma Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.







उल्लेखनीय अवदान के लिए महामहिम राष्ट्रपति सहित देश और राज्य को विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्मानित, देववाणी, संस्कृत तथा राजभाषा हिन्दी में विपुल साहित्य के सर्जक विभिन्न मंचों से विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान देने तथा विद्यार्थियों की अनेक पीढ़ियों का मार्गदर्शन करने वाले एक सनातन मूल्यों से रिक्त विद्वत्तापूर्ण साहित्यिक अवदान चिरकाल तक समाज और राष्ट्र का पथ आलोकित करता रहेगा।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य का अध्ययन करते हुए कतिपय राम कथाश्रित महाकाव्य यथा अभिराज डॉ० राजेन्द्र मिश्र प्रणीत, 'जानकीजीवनम्' आचार्य रेवा प्रसाद द्विवेदी, सनातन रचित 'सीताचरितम्' डा० भास्कराचार्य त्रिपाठी साकेत सौरभम् इत्यादि महाकाव्यों का अवलोकन कर विशेषतः 'साकेतसौरभम्' की 'भावभङ्गिगमा' और कवि को 'वागवैदुष्य' इतना प्रभावित किया है —

डा० भास्कराचार्य त्रिपाठी कृत साकेतसौरभम् महाकाव्य का प्रथम संस्करण 2003 में नाग पब्लिशर्स ।।ए०यू०ए० जवाहर नगर दिल्ली 110007 (भारत) में श्री सुरेन्द्र प्रताप के द्वारा प्रकाशित हुई तथा जी०प्रिन्ट प्रासेस, 308/2 शाहजादा बाग, दयावस्ती, दिल्ली 110035 द्वारा छपाई हुई है, मोहन कम्प्यूटर प्वाइन्ट 8 ए० यू०ए० /3 जवाहर नगर दिल्ली 110007 द्वारा टाइपिंग की गयी है। नई दिल्ली के राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान के वित्तीय सहयोग के द्वारा प्रकाशित की गयी है। इस महाकाव्य का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ है।

साकेत सौरभम् रामकथा पर आधारित भक्तिभाव पूर्ण संस्कृत महाकाव्य है अतः इसमें सर्गबद्ध एवं छन्दोबद्ध रचना हैं। महाकाव्य में 8 सर्गों में लोकपावनी रामकथा अन्नूठे ढंग से प्रस्तुत की गई है। इस प्रबन्ध में







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

विभिन्न गीतों एवं छन्दों की संख्या 495 है। कथानक के संवेदनशील स्थानों पर समानान्तर हिन्दी काव्यानुवाद के कारण इस प्रबन्ध के अत्यन्त लोकप्रिय होने में कोई संदेह नहीं है। इस प्रबन्ध की प्रशस्ति में डॉ० रमाकान्त शुक्ल की उक्ति है—

साकेत सौरभमिदं रचित सुकाव्यं

श्री भास्कराचार्य —कवीश्वरेण

श्री रामचन्द्रपद पंकज—षट्पदानां

मोदप्रदं भवतु मंगलदायि नित्यम्॥

वसुसर्गसन्नि वद्धैरभिराम पद्यगुम्फैः

श्री भास्करेण रचितं लोकम्पृणं सुकाव्यम्

हृदयस्य तन्त्रिकाया झड.कृति समानगीतैः

साकेतसौरभाख्यं सदलङ्कृत विजयते॥

साकेतसौरभम् रामकथा पर आधारित भक्ति भाव पूर्ण संस्कृत महाकाव्य है। आदिकवि वाल्मीकि रामायण में राम के काव्य की जो धारा प्रवाहित की वह आज भी प्रवाहमान है। रामकथा पर काव्य लिखने वाले प्राचीन कवियों में भास, भट्ट कुमार, दास, भवभूति, मुरारि, सुभाष, भोजराज तथा इसी श्रृंखला में हिन्दी के प्रशस्ति कवि गोस्वामी तुलसीदास हुए(1)। अर्वाचीन कवियों में डॉ० राजेन्द्र मिश्र, डॉ० रेवाप्रसाद द्विवेदी और श्री रामभद्राचार्य आदि प्रभृत विद्वान हैं, और इसी क्रम में डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी ने भी रामकथा के आधार पर साकेतसौरभम् की रचना की। यह महाकाव्य पाण्डित्यपूर्ण मौलिक उद्भावनाओं और उदान्त लेखन शैली से मण्डित होने के कारण गौरवपूर्ण पद का अधिकारी है। चतुर्विंशति सहस्त्री संहिता (रामायण) की सम्पूर्ण कथा को चार सौ पचाननवें श्लोकों में समेटना ही कवि की वर्णनाशक्ति का चरम निदर्शन है। महाकाव्य प्रमुखतः रस प्रधान होने के कारण सर्वथा मर्यादित और देवविषयारति से अनुप्राणित है। काव्य में प्राचीन छन्द (अश्वघाटी) एवं पाश्चात्य छन्द (रिंगो, हाइकु) का समावेश भी वैचित्य पूर्ण है। अर्वाचीन कवियों के तथाकथित वर्णनों से कहीं अधिक वर्णन करता हुआ कवि, उक्त कवियों से आगे कदम रखने में अपूर्व साहस और प्रतिभा का परिचय देता है।



100



वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

वर्णन की अपेक्षा संवेदना प्रवण होने के कारण इस महाकाव्य में राम की समग्र कथा का विन्यास सम्भव नहीं हो सका है तथापि संक्षिप्त एवं मधुर होने से आह्लादक और स्वगताई है। इसी परिप्रेक्ष्य में इसके महत्व को स्वीकारते हुए कतिपय अन्य विद्वानों की अभिव्यक्ति देना अनुचित न होगा—

अनुप्रासच्छटागुग्धस्निग्ध बन्धप्रबन्धिनाम्

गणनायां कनिष्ठागे राजते भास्करः कविः । (1)

डा० बालकृष्ण शर्मा जी ने साकेतसौरभम् और कवि की प्रशंसा करते हुए लिखा है—

1. बहवः कवयो जाता रामकाव्य विधायिनः

अभिरामकवित्वे तु प्रथते भास्करः कविः ॥ (2)

2. सीता राम कथाम्भो धिमन्थनोद्भूत मदभुतम्

रत्नमेकं महाकाव्यं नौमि साकेत सौरभम् ॥ (3)

इसी सन्दर्भ में कवि कामता प्रसाद त्रिपाठी 'पीयूष' जी कहते हैं कि सभी महाकाव्यों का एक अद्वितीय काव्य साकेतसौरभम् है जिसमें सीताराम की कथाओं का अद्भूत वर्णन किया गया है। डॉ० रमेश प्रसाद त्रिपाठी जो अखिल भारतीय याज्ञिक भोपाल में रहते हुए इस "साकेतसौरभम्" महाकाव्य के कृतित्व से प्रभावित होकर अपनी काव्यरूपी धारा में वर्णन करते हुए कहते हैं—

1. वही — श्लोकायनम् — 1 सनातन

2. वही. साकेत सौरभ प्रशस्तयः पृष्ठ —19

3. वही. सुरभिः पृष्ठ 1 कामता प्रसाद त्रिपाठी 'पीयूष खैरागढ़







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

साकेतसौरभम् लौकिक पुष्परूपं

बाभाति भारतभुवो महनीय कुंजे

अस्याति मंजुलसुगन्धकला नवीना

त्रैलोक्यवेल्लितविधानमुरी करोति ।।

साकेत सौरभम् दिव्यं नील नीरज सन्निभम्

निजामोदैरलड.कुर्यात् स्ववाणीमंदिरम् सदा ।। (1)

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान परिसर भोपाल में प्राचार्य के पद पर आसीन डॉ० आजाद मिश्र ने अपनी रचना अष्टसिद्धयः में साकेतसौरभम् जो कवि भास्कराचार्य द्वारा रचित इस महाकाव्य का अप्रतिम वर्णन करते हुए अपनी उक्ति में कहते हैं—

1. साकेत सौरभभरं चबकं निपीय

चेतश्चिरं चितसुधाब्धिसमाधिवासम्

काव्यं कविंच सकलं ननु में तदानीं

सौधाकरं नु मनुते न हि भास्करीयम् ।।(2)

इसके अतिरिक्त अन्य मनीषियों की साकेतसौरभम् सम्बंधी वैशिष्ट्यपरक उक्तियाँ हम तक हैं—

2. साकेत सौरभे भाति भास्कराचार्य भारती  
श्री रामचरणाम्भोज मधुधारा पयस्विनी ।।(3)

3. चरितं रामचन्द्रस्य महाकाव्यगुणैर्युतम्  
साकेत सौरभं नाम या तस्याभिनवा कृतिः ।। (4)

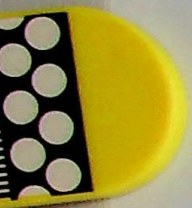
1. वही . कुसुमांजलि : (त्रिपाटी डॉ० रमेश प्रसादः अखिल भा० या० भोपाल पृष्ठ -16)

2. वही अष्टसिद्धय :- डॉ० आजाद मिश्र (पृष्ठ -15)

3. वही शुभाशंसा - आचार्य : श्री निवासरथः (उज्जयिनी ) पृ० -11

4. वही- धन्याकृति - शुक्ला डॉ० चण्डिकाप्रसादः (प्रयाग) पृ०-13







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

संस्कृत साहित्य के प्रख्यात महाकवि एवं विद्वान डा० रेवा प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है—

4. शास्त्रीय विलसन्ति यत्र विविधाः साकेत काव्ये विधाः

शोभन्ते खलु दर्शनानि निखिलान्यस्मिन् प्रबन्धे नवे

नानालङ्कृति —चारुवृत्तरचना भावाः समुद्यद्दरसा

आशीर्मंगलतो महाकविममुं सर्वेऽभिषिचन्ति वै । (1)

5. भास्करसूरेर्ललितां कवितामेतां प्रियाडर्थ संग्रथिताम् ।

रामचरितगाऽप्रियता निरीक्ष्य मुंचत्यहोऽश्रूणि । (2)

इसी प्रकार सभी श्रेष्ठ कवियों और विद्वानों ने इस महाकाव्य और महाकवि की भूरि-भूरि प्रशंसा की हैं। देश की स्वतंत्रता मिलने के साथ ही संस्कृत के साहित्यकार इन दिनों राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान के साथ प्रायः देश की समस्याओं पर ही लेखिनी चला रहे थे। डॉ० श्रीनिवास मिश्र के शब्दों में आधुनिककविगणैः पुराणमित्येव न साधु सर्वम् इत्यादि कालिदाससंरणिमनुकुर्वभिः पुराणयपराम्परामनपेक्ष्य , ' साहित्यं समाजस्य दर्पणं भवति ' इतिसिद्धान्तमनुसरिभः स्वकीयेषु काव्येषु आधुनिकाः विचाराः वर्तमान समस्याः , जनचेतनाः राष्ट्रीय भावनाः नारीजागरणं सर्वहारासंस्कृतिः देशभक्तिः भावत्मकैकता इत्यादयो विविधाः सामाजिक विषयाः समावेशिताः वर्तमानसमये देश विविधाः सामाजिक —आर्थिक—राष्ट्रीयसमस्या अहर्निशं समस्तमपि राष्ट्रं व्याप्य स्थिताः संतिष्ठन्ति । अतएव काव्यमपितत्परं कवयोऽपितद्विचारकाः इति नास्त्याश्चर्यम् । (3)

बीसवीं शताब्दी की बृहन्नयी मार्क्स, फ्रायड और आइंस्टाइन माने जाने लगे हैं। उनकी सतचेतना के अनुसार समता, स्वतन्त्रता और शोषणविहीन एवं मानव सहृदय समाज की एक लहर सी विश्वसाहित्य में चल पड़ी हैं। आज का समाज भी एक बाजार में बदल रहा है, जिस पर राजनीति और प्रकाशन का माध्यम हावी हो चुके हैं। ऐसी स्थिति में साहित्यकार हिमालय की कन्दरा में जाकर कविता नहीं कर सकता। उसे जों कुछ कहना या करना है, चौराहे पर करना होगा।

1. वही जयतात् कवीन्द्रः— आचार्य रामस्वरूप पृष्ठ—14

2. वही स्वस्ति — रेवाप्रसाद द्विवेदी पृष्ठ —12

3. आधुनिक संस्कृतकाव्य प्रगतिशीलतत्व देववाणी सुवासः— पृ० 5—287







फिर साहित्य की भी अपनी एक राजनीति होती है वह सत्ता एवं लाभ—पक्ष से जुड़कर क्षणजीवी बनता है, लोक एवं जीवन पक्ष से जुड़कर शाश्वत बन जाता है।

आधुनिक संस्कृत साहित्य में अन्य भाषा—साहित्य की प्रायः सभी विधाएँ दरीदृश्यमान हैं। देश—विदेश की विविध प्रभावकारिणी परिस्थितियों ने संस्कृत साहित्य में मुख्यतया काव्य के दृश्य और 'श्रव्य' दो भेद तथा इनमें भी दृश्य के दस और श्रव्य के तीन (गद्य, पद्य और चम्पू) भेद मिलते हैं। इनके प्रभेदों में गद्य के कथा और आख्यायिका पद्य के महाकाव्य, खण्डकाव्य और मुक्तकादि, चम्पू मात्र एक विधा के रूप में प्रचलित होता है। आधुनिक संस्कृत—साहित्य में ये समस्त विधाएँ आज भी पूर्णतः सुरक्षित हैं प्रायः इन सभी विधाओं के भेद प्रभेद हो गए हैं आज के वैज्ञानिक युग में 'रेडियोरूपक', 'रेडियोवार्ता', आदि संस्कृत की ऐसी नवीन विधाएँ वर्तमान हैं, जिनका प्राचीन साहित्य की किसी विधा में अन्तर्भाव नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त आलोचनाशास्त्र, जीवनी, कोशग्रन्थ, टीका, यात्रासाहित्य आदि आधुनिक विधाएँ भी विद्यमान हैं। संस्कृत की आधुनिक विधाएँ निम्नलिखित रूप में विकास हुआ है—

1. पद्यखण्ड :— इसमें महाकाव्य, सन्देशकाव्य, गीतिकाव्य, श्रृंगारकाव्य, मुक्तककाव्य, स्तुतिकाव्य, चरितकाव्य, प्रकृतिकाव्य, व्यङ्ग्यकाव्य, नीतिकाव्य, सुभाषित, संवाद काव्य आदि प्रमुख हैं।

संस्कृत कवि इन्हीं चुनौतियों के बीच रचना में संलग्न हैं। वह कविता के पारस्परिक प्रयोजना की उपेक्षा करके अपनी धरती के दुःख—दर्द सहेजने लगा है। (1) डॉ० रेवाप्रसाद द्विवेदी की परिवर्तित अवधारणा है—

1. संस्कृत परिवेश और मध्य प्रदेश (डॉ० निलिम्प त्रिपाठी)







न यशसे न धनाय शिवेतर

क्षतिकृतेऽपि चनैव कृतिर्मय

इयमिमां भरतावनिसंस्कृतिं

सुरगवीं च निषेवितुमुद्गता । (1)

महाकाव्य :- “महच्च तत्काव्यम्” अर्थात् बड़े परिणाम वाला काव्य महाकाव्य है। बीसवीं शब्तादी में महाकाव्यों का अनुमान 1961 से 1970 के बीच विरचित अर्वाचीन संस्कृत महाकाव्यों के अनुशीलन पर विद्यावाचस्पति उपाधि से सम्मानित डॉ० रहसबिहारी द्विवेदी की निम्नांकित अभ्युक्ति से हो जाता है—

सम्प्रति विविधविधासु संस्कृतकाव्यस्य भूयसी अभिसमृद्धिर्दृश्यते। तत्रापि महाकाव्य—समृद्धौ कश्चिद् विशेषः सुखावहो विस्मयः सुरभारती सुधारसरसिकानां चेतः प्रसादयति विंशशतकस्य सप्तमे दशके (1961—70) यावन्ति महाकाव्यानि प्रणीतानि नैतावन्ति संस्कृत—साहित्यस्यादिकालतोद्यवधि कस्मिन्नपि एतावति लघौ समय विभाग प्राप्तानि। (2) डॉ० द्विवेदी ने उक्त एक दशक में विरचित 52 मौलिक तथा 5 भाषान्तरित महाकाव्यों का परिचयात्मक विश्लेषण किया हैं। लगभग इसी अनुपात में समूची शताब्दी में संस्कृत महाकाव्यों का प्रणयन हुआ हैं। डॉ० द्विवेदी जी ने अर्वाचीन महाकाव्य की आधुनिक परिभाषा शास्त्रीय ढंग से दिए है। 19 आधुनिक महाकाव्यों में कुछ प्रारम्भिक दशकों में रामायण एवं महाभारत के आख्यान , शैव आदि सम्प्रदाय , स्थानीय शासक तथा

1. उत्तरसीतसचरितम् — मुकबन्ध पृ० सं०—10

2. अर्वाचीन संस्कृतमहाकाव्यअनुशीलम् प्रस्तावना पृष्ठ—7







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

अंग्रेज और आत्मचरित आदि को केन्द्र में रखकर शताधिक महाकाव्य लिखे गये, यथा रुक्मिणीपरिणयम् (विश्वनाथदेव वर्मा 1850—1920) उमाचरिताचित्तम (रामचरण भट्टाचार्य 1863—1928) आदि। इसके अतिरिक्त साठ के दशक के महाकाव्य गणपति सम्भवं, , रुक्मिणीहरणम् ,सीताचरित आदि महाकाव्य हैं। (1)

(ख)खण्डकाव्य तथा मुक्तककाव्य — महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य तथा मुक्त अर्थात् दूसरे पद्य से निरपेक्ष हो तो वह मुक्तक कहलाता है। (2)

बीसवी शताब्दी के कुछ खण्ड एवं मुक्तककाव्य निम्न हैं— भारत विलापः (के० कल्याणी 1908), भारतीमनोरथम् (1910) पवनदूतम् (जी०वी० पद्मनाभाचार्य) विच्छिन्ति वातायनी (जगन्नाथ पाठक) ध्रुवचरितम् , ताटकापरिणय (गणपतिशास्त्री )।

(ग) स्तुति एवं चरितकाव्य — ऋग्वैदिक काल से ही स्तुति एवं चरित्रकाव्यों की परम्परा चली आ रही हैं जो आज भी संस्कृत साहित्य में एक विधा के रूप में विद्यमान हैं इस तरह की रचनाओं में अतिशय भावप्रवणता और भक्ति रस की प्रधानता होती है, जो निम्न है— यथा—

इन्दिरा शतकम् (रामकृष्णशास्त्री 1981)

नव्यभारतशतकम् (डॉ० राजेन्द्र मिश्र 1984)

जार्जप्रशस्तिः(पं० लालमणि शर्मा 1911) शिवहृदयमकं (तपोवनस्वामी 1920 ) आदि।

1. द्रष्टव्य— संस्कृत महाकाव्यों का समालोचनात्मक अध्ययन।

2. साहित्य दर्पण — 6, 329 तथा 314



संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(1) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(2) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(3) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(4) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(5) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(6) संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका



3. गद्यखण्ड— गद्यखण्ड संस्कृत काव्य की एक विशिष्ट विधा है। इसीलिए दण्डी आदि काव्यशास्त्रियों और अमरकोशकार ने गद्य को “अपादः पदसन्तापः “(1) कहा है और इसको सर्वोत्तम काव्य की कसौटी तक माना गया है— “गद्य कवीनां निकषं वदन्ति “। बीसवी शताब्दी की प्रमुख गद्य विधाओं में उपन्यास, कथानिका, निबन्ध आदि प्रमुख हैं जो निम्नवत् हैं—

उपन्यास — संस्कृत साहित्य में उपन्यास लेखन की परम्परा बंगला उपन्यासों के अनुवाद से प्रारम्भ हुई। संस्कृत —गद्य काव्य का सर्वप्रथम एवं श्रेष्ठ ग्रन्थ बाणभट्ट की कादम्बरी मानी जाती है, लेकिन बाण की कादम्बरी और आधुनिक उपन्यास में सहस्राधिक वर्षों का अन्तर है। संस्कृत के प्रथम उपन्यासकार पं० अम्बिकादत्त व्यास ने गद्यकाव्य मीमांसा में उपन्यास के शैलीगत प्रमुख नौ भेद रेखांकित किए हैं— कथा, कथानिका, कथन आलाप, आख्यान, आख्यायिका, खण्डकथा, परिकथा, और संकीर्ण । उन्होंने रस, विषय तथा स्तर की दृष्टि से अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण करके इसे लगभग पाँच अरब तक भेद सम्भावित किए हैं। (2)

बीसवी शताब्दी के कुछ प्रमुख उपन्यास निम्न हैं—

शिवराजविजय, मदनलतिका(चिन्तामणि माधव गोले 1911) जयन्तिका (जगू बकुल भूषण 1918) आदर्श दम्पति (वृद्धिचन्द्रशर्मा 1935 ) सौदामिनी (नरसिंहाचार्य पुणेकर 1914) आदि।

कथानिका— कथानिका भी उपन्यास का एक रूप होता है । जो अपने में पूर्ण एवं लघु संस्करण होता है, इसे लघुकथा भी कहते हैं। परन्तु यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि बीसवी शताब्दी में उपन्यास से कहीं अधिक लघुकथाओं की महत्ता है और यही कारण है कि बीसवी शताब्दी में इस विधा का खूब पल्लवन हुआ है जो निम्न हैं डॉ० नलिनी शुक्ला का कथासंग्रह ‘कथा सप्तकम् मथुरानाथ शास्त्री (1889—1964) का कथानिकुङ्ज, पण्डिता क्षमादेवी राव (1890—1954) की पन्द्रह कहानियों का संग्रह , कथामुक्तावली और गुजराती ग्रामीणों के त्याग एवं बलिदान की तीन पद्यात्मक कथाएं (ग्राम ज्योतिः ) आदि।

1. अमरकोष 3, 4, 31 एवं काव्यादर्ष — 1, 23

2. गद्यकाव्य मीमांसा —पृ० 32—35 ।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

निबन्ध— पाश्चात्य साहित्य के चिन्तक का प्रयास और अभिधारणात्मक लेख के पर्याय क्रमशः निबन्ध (लघुकाय लेख) और प्रबन्ध (दीर्घकाय निबन्ध) माने जाते हैं (1) लघु रचनाओं की ओर उन्मुख वर्तमान साहित्य—प्रकल्पों में निबन्ध आत्माभिव्यक्ति का एक उत्तम साधन है। आधुनिक निबन्धकारों में — हृषीकेश भट्टाचार्य (प्रबन्धमंजरी) नारायणदत्त त्रिपाठी (पंचसायकम् मुमुक्षु सर्वस्व—सारसंग्रह, स्वरूप प्रकाशः, चिदम्बर—रहस्यम्, टी० के० गणपतिशास्त्री, सेतुयात्रावर्णनम्, विष्णुकान्त शुक्ल (पूर्णकुम्भः) सदाशिवमुसलगांवकर (धर्मशास्त्रीय व्याख्या सर्ग वेदान्ता विज्ञानम्) आदि प्रमुख हैं।

रूपक खंड— बीसवीं शताब्दी में भी देश के विभिन्न स्थलों से नवीन रूप में पांच सौ से अधिक रूपक प्रस्तुत किये गये। लेकिन आचार्य धनञ्जय ने दशरूपक में दसप्रकार के रूपकों को ही बताया है जैसे — नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, बीथी, अंक और ईहामृग। (2) यद्यपि बीसवीं शताब्दी में विशेष अवसरों पर प्रयोज्य एकांकी तथा आकाशवाणी के लिए ध्वनि रूपकों की बहुलता है, तथापि अनेक ऐतिहासिक एवं सामाजिक सन्दर्भों के गम्भीर नाटक, प्रकरण, प्रहसन, व्यायोग, समवकार, डिम, नाटिका और महानाटक हैं।

यथा—

प्रकरण— शार्दूलशकटम् (वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य 1917) आदिका व्यादयम् (महालिंगशास्त्री 1942) आदि।

भाण— पुरुषपुङ्गवः (जीवन्यायतीर्थ 1894) साक्षात्कारः (शिव प्रसाद भारद्वाज)

प्रहसन— तीर्थयात्रा प्रहसनम् (रामकुवेर मालवीय 1966) कर्मफलम् (रामनाथ वालासोर 1955) आदि।

व्यायोग — कैलासनाथ विजयम् और गिरिसंवर्धनम् (जीवन्याय तीर्थ)

विक्रमाश्वत्थानीयम् (नारायण विलुकुरी 1938) आदि।

1. संस्कृत परिवेश और मध्य प्रदेश —डॉ० निलिम त्रिपाठी पृ०सं० —189

2. दशरूपक — 1.11







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

समवकार— म0प्र0 के रेवा प्रसाद द्विवेदी का सप्तशिकाङ्ग सं 1977)

डिम— घोष यात्रा (लक्ष्मण सूरि)

नाटिका — उर्वशी (चन्द्रभानु त्रिपाठी 1984) विराजसरोजिनी (हरिदास सिद्धान्त वागीश 1904)

महानाटक— विवेकनन्द विजयम् (श्री धरभास्कर वर्णेकर 5 अंक ) आदि ।

नाटक— प्रकृति सौन्दर्यम् नाटक (मेधाव्रतशास्त्री 1893) कृतार्थ कौशिकम् सत्यसावित्रम् परशुराम चरितम् (श्रीकृष्ण जोशी 1882)

वीरप्रतापम् आदि सात नाटक (मथुरा प्रसाद दीक्षित 1878) ।

एकांकी — राज्याधिरोहणम् (गोविन्द जोशी पुष्पसेन तनय 1905) भूपो भिषकत्वं गतः (गणेश लोण्डे 1967) मार्कण्डेयविजयम् (सुन्दरार्य 1952 ) आदि ।

रेडियोरूपक— अजेयभारतम् (शिव प्रसाद भारद्वाज 1963 ) नाट्यसप्तकम् (रमाकान्त शुक्ल 1940) आदि

उपरूपक — भारतहृदयारविन्दम् (यतीन्द्रविमल चौधरी 1908 , 15 रूपक एवं उपरूपक) सरस्वती पूजनम् हेमन्त कुमार, पार्थपाथेयम् (प्रभुनारायण सिंह 1889) आदि । इससे यह स्पष्ट हो रहा है कि आज भी रूपक की सभी विधाओं पर रचनाएं हो रही हैं ।

पत्रकारिता— प्राचीन भारत से ही पत्रों को गद्य एवं पद्य में लिखने की परम्परा प्रचलित थी और ये पत्र भावाभिव्यक्ति के लिए होते थे । इसीलिए लार्ड मैकाले ने संस्कृत और संस्कृति विरोधी प्रस्ताव के कानून बना दिये थे (1) प्रेमचन्द्र तर्कालंकार नामक विद्वान ने अंग्रेजों का यह निर्णय बदलवाने के लिए श्रीमद्भागवत के अनुवादक विख्यात अंग्रेज संस्कृत विद् होरेस् विल्सन को स्रग्धरा छन्दोबद्ध संस्कृत पत्र भेजा था, यथा—

1. संस्कृत शिक्षण डॉ० रामकशल पाण्डेय पृ०—19







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

गोलश्रीदीर्घिकाया बहुविटपितटे कालिकातानगर्या निःसङ्गो वर्तते संस्कृत पठनगृहाख्यः कुरङ्ग कृशाङ्ग हन्तुं तं धीरचित्तं विधृतखरशरो मैकले व्याधराजः साशत्रु ब्रुते स भो-भो विलसन महीग मां रक्ष-रक्षं । विल्सन ने इसका उत्तर शार्दूलविक्रीडति छन्द में प्रेषित किया यथा—

निष्पीड्यापि परं पदाहतिशवैः शश्वद् बहुप्राणिनां सन्तप्तापिकरैः सहस्त्रकिरणेनाम्निस्फुलिङ्गोपमैः छागाद्यैश्च विचर्वितापि सततं भ्रष्टापि कुदालकैर्दूर्वा न म्रियते कृशापि नितरां धातुर्दया दुर्बले ।(1)

माना जात है कि इसी समय परम्पर विचारों के आदान प्रदान हेतु अनेक संस्कृत पत्र पत्रिकाओं का शुभारम्भ सम्भव हुआ । विशेषतया उल्लेखनीय पत्रिकाएं निम्नवत् है—

1. पण्डित (काशीविद्या —सुधानिधि ) पत्रिका वाराणसी जून 1866
2. विद्योदयः — संस्कृत मासिक पत्र , लाहौर 1869 ।
3. मंजुभारिषणी — मासिक पत्रिका कांची —1902 ।
4. संस्कृतरत्नाकरः — मासिक पत्रिका जयपुर 1904 ।
5. जयन्ती दैनिक पत्र 1906 ।
6. संस्कृत चन्द्रिका — मासिक पत्रिका कोल्हापुर 1897 ।
7. मित्र गोष्ठी (काशी)
8. शारदा प्रभात (प्रयाग)
9. पद्मवाणी (कलकत्ता )
10. दूर्वा (भोपाल )
11. अर्वाचीन संस्कृतम (दिल्ली) आदि प्रमुख पत्रिकाएं हैं ।



संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

(1) संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर

संस्कृत-भाषा-विश्वविद्यालय, जयपुर



वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

संस्कृत साहित्य की इन विधाओं के अतिरिक्त आलोचना, यात्रा-साहित्य, जीवनी, कोशग्रन्थ, प्राचीन संस्कृत कवियों पर आधारित शब्दानुक्रम कोश, टीकाएं, अभिभाषण, अभिनन्दन ग्रन्थ और अन्य भाषा के ग्रन्थों का संस्कृत अनुवाद आदि का भी अपना महत्व है और जो आज के परिवेश में भी ये विधाएं जीवित हैं।

### डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी का परिचयांकन—

भारतीय संस्कृत के अनद्यतन संस्कारों से परिपूर्ण प्रयाग चित्रकूट अंचल में श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराण की भास्वर ज्ञान परम्परा में जो परिवार अनादि काल से भारतीय मनीषा की ज्ञानगंगा का संवहन कर रहे हैं। उसी परिवार में पं० राम गुलाम त्रिपाठी जिन्होंने अपने वैदुष्य से सम्पूर्ण आर्यावर्त में कर्मकाण्ड और ज्योतिष की नई प्रतिष्ठापनाएं की। अठारहवीं शताब्दी में उनके द्वारा विरचित तन्त्र ग्रन्थ 'अरिनाशक दुर्गाशतकम्' ने अपार प्रतिष्ठा अर्जित की तान्त्रिक अनुष्ठानों के लिए आज भी लोग उनके सूत्रबद्ध किए वाङ्मय का अध्ययन एवं अभ्यास किया करते हैं। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में कुल परम्परा का वर्णन किया गया है, यथा—

“ अथ सामवेदकौथुमशाखानुसारिणो गोभिलसूत्र परायणा गान्धर्वोपवेदिनो भवन्ति विप्रेषु चतुर्विंशति ग्राम पट्टिकावन्तो विष्णुदैवताः शाण्डिल्य गोत्रीयास्त्रिपाठिनः । श्रुतवतंसे वंशेऽस्मिन् श्रीमद्सितिदेवलभास्कराचार्य गुखरुरामपुरस्सरा ऋषि प्रवराः समजायन्त । गुखरुरामात् कश्चिन्मणिनामा महर्षिमणिः प्रादुरासीत् । यदपत्ययुग्मामिधानाद् धतुरा सिरजमत्रिपाठिनः क्रमशेऽद्यापि व्याह्रियन्ते । धतुराह्वयेषु प्रयागमण्डले स्वनामधन्य श्री रामो (वीरपुर) लाक्षागृहाद् (जसरान्तिके) यश पाण्डरं पाण्डरमभ्यगात् । श्रीरामाद् उमरावः तस्मात् सुगन्धः, ततः सगरामः तस्मात् शिवगणेशो, रुक्मिणीशः







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

ततश्च रामगुलामो यशोदाजानिरिति व्यराजन्त। तदपत्यस्य श्रीमती राजमतीशस्य ज्योतिष वैदुष्यसम्भार भारस्वरयशसः श्री रामप्यारे त्रिपाठीनोज्येष्ठ तनू जन्मा विलसति सोऽयं सुरभारती सुकविः त्रिपाठी डॉ० भास्कराचार्य :। (1)

इसी परम्परा में डॉ० त्रिपाठी ने पिता पं० रामप्यारे त्रिपाठी ज्योतिष विद्या के विशिष्ट हस्ताक्षर थे। उनके मुख से निकली प्रत्येक वाणी सत्य हुआ करती थी। अपने घर भोजन कराकर वेद, कर्मकाण्ड , एवं शास्त्र पद्धतियाँ पढ़ाते हुए अनेक ब्राह्मण बालकों की रोजी रोटी का मार्ग प्रशस्त करते थे। पं० राम प्यारे त्रिपाठी कसौटा नरेश के दरबार में प्रधान ज्योतिषी तो थे ही अपनी उदान्त गुण गरिमा के कारण अत्यन्त लोकवन्दित थे। डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी ने उन्हें “जन्मतो ज्योतिषां व्योम्नि वेल्लतत्विषां कोविदो रामवत् सुप्रियः प्राणवद्” (2) कहकर स्मरण किया है।

ऐसी वैदुष्यपूर्ण कुल परम्परा में डॉ० त्रिपाठी का जन्म प्रयाग चित्रकूट अंचल (पाँडर ग्राम जसरा) इलाहाबाद में अनन्त चतुर्दशी, संवत् 1999 तदनुसार 23 सितम्बर सन् 1942 ई० को शाडिल्य गोत्र में हुआ था। ज्योतिष विद्या के विशिष्ट हस्ताक्षर पिता श्री रामप्यारे त्रिपाठी जी की सारस्वत छाया में इनका शैशव बीता। इनकी माता का नाम राजमती था। इनका बचपन बहुत ही संघर्षमय था। जब ये 5 वर्ष के थे तभी इनके पिता गोलोकवासी हो गये । और इनका पालन माता के संरक्षण में हुआ और इनका विवाह एक सुयोग्य सुशिक्षित कन्या प्रभावती के साथ सम्पन्न हुआ और उन्हीं से एक पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई जिसका नाम निलिम्प त्रिपाठी है जो एक सुशिक्षित एवं विलक्षण प्रतिभामण्डित साहित्यकार एवं वक्ता है।

1. अरिनाशक दुर्गाशतकम् —भूमिका (काव्यानुवाद)

2. साकेत सौरभम् 1-10







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी स्नातक उपाधि से दीक्षाएं “यूनिवर्सिटी ऑफ एलाहाबाद ” में (1960) प्राप्त की। वहीं से आचार्य डॉ० चण्डिका प्रसाद शुक्ल के निर्देशन में “राजशेखरीय बालरामायण का आलोचनात्मक एवं तुलनात्मक मूल्यांकन” विषय पर 1965 में डी०फिल० की उपाधि प्राप्त की।

मध्य प्रदेश की शासकीय शिक्षा सेवा से छतरपुर अम्बिकापुर तथा रीवा के स्नातकोत्तर महाविद्यालय कार्यस्थल रहे । देववाणी परिषद नई दिल्ली म०प्र० शिक्षा (उच्चस्तरीय संस्कृत विशेषज्ञ) समिति एवं केन्द्रीय अध्ययन मण्डल भोपाल की सदस्यता के अतिरिक्त इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़(दो बार) तथा हिमालयन इण्टर नेशनल इंस्टीट्यूट हॉन्सेडेल , पेंसिलवानिया (यू०एस०ए०) में अतिथि प्राध्यापक के रूप में कार्य, अमेरिका के सांस्कृतिक केन्द्र फिलाडेल्फिया में संयोजित षष्ठ विश्व संस्कृत सम्मेलन में ‘वीमेन आव् कालिदास विषय पर शोध व्याख्यान(1984), । म०प्र० संस्कृत अकादमी भोपाल में प्राचार्य पद पर कार्य , सम्प्रति विजिटर्स नामिनी पाण्डिचेरी केन्द्रीय विश्वविद्यालय , अध्यक्ष प्रबन्ध समिति श्री एकरसानन्द आदर्श संस्कृत महाविद्यालय मैनपुरी, उत्तर प्रदेश एवं सदस्य , संस्कृत डिक्शनरी प्रोजेक्ट डेकम रिसर्च इंस्टीट्यूट पूना का कार्यभार संभाला ।

समकालीन रचना धर्मिता से जुड़ी हुई प्रकाशित रचनाएँ गद्यद्वादशी , लक्ष्मीलौछनम्, सुतनुकालास्यम् , मृत्तकूटम् , निलिम्पकाव्यम्—निर्झरिणी , संस्कृतजीवनम् , स्नेहसौवीरम् , अजाशती, लघुरघु , कवि भवभूति और इनका नाट्यलोक (संयुक्त) साकेतसौरभम् (महाकाव्य) तौर्यत्रिकम् (रूपक) । सम्पादन कृष्णावतार ,मान, मधु, दूर्वा ,(24 अंक) भोजभारती । अनुवाद समीक्षा— बालरामायणम् (दो भाग) संस्कृत की पहचान। प्रकाशमान रचनाएं—अक्षरा , महाकवि भवभूति, अरिनाशक—दुर्गाशतकम् (काव्यानुवाद) मधुमती , ऋतुमाला तथा पंखे आदि इनकी कृतियाँ हैं।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी द्वारा प्राप्त पुरस्कार

| क्र० | संस्था                                | वर्ष |   |
|------|---------------------------------------|------|---|
| 1    | उ०प्र० संस्कृत अकादमी लखनऊ            | 1992 | मृत्कूटम् के लिए रु० 50,000 का विशेष पुरस्कार।  |
| 2    | म०प्र० संस्कृत अकादमी भोपाल           | 1995 | बालरामायण के लिए रु० 10,000 का भोज पुरस्कार   |
| 3    | सुरभारती सेवा संस्थान मैनपुरी, उ०प्र० | 1997 | समग्र अवदान हेतु विद्वत् सम्मान।  |
| 4    | उ०प्र० संस्कृत संस्थान लखनऊ           | 1997 | निर्झरिणी के लिए रु० 5,000 का बाल साहित्य विविध पुरस्कार।   |
| 5    | दिल्ली संस्कृत अकादमी                 | 1997 | निर्झरिणी के लिए रु० 7,000 का अखिल भारतीय पं० राजजगन्नाथ संस्कृत पद्य रचना प्रथम पुरस्कार।                      |
| 6    | दिल्ली संस्कृत अकादमी                 | 1997 | संस्कृत जीवनम् के लिए रु० 7,000 का अखिल भारतीय पं० चारुदेवशास्त्री गद्य रचना प्रथम पुरस्कार।                    |
| 7    | दिल्ली संस्कृत अकादमी                 | 1997 | स्नेहसौवीरम् के लिए रु० 3,000 का अखिल भारतीय डॉ० आदित्य नाथ झा संस्कृत नाट्य रचना प्रोत्साहन पुरस्कार।          |
| 8    | दिल्ली संस्कृत अकादमी                 | 2001 | संस्कृत की पहचान के लिए रु० 7,000 का अखिल भारतीय पं० दीनानाथ शास्त्री समालोचनात्मक साहित्य रचना प्रथम पुरस्कार। |
| 9    | उ०प्र० संस्कृत संस्थान लखनऊ           | 2002 | लघुरघु के लिए 11,000 का विशेष पुरस्कार  |
| 10   | उ०प्र० संस्कृत संस्थान लखनऊ           | 2003 | साकेत सौरभम् के लिए रु० 5,000 का विविध पुरस्कार।  |
| 11   | साहित्य अकादमी नई दिल्ली              | 2003 | निर्झरिणी के लिए रु० 50,000 का राष्ट्रीय पुरस्कार   |
| 12   | दिल्ली संस्कृत अकादमी                 | 2003 | साकेतसौरभम् महाकाव्य के लिए रु० 7,000 का अखिल भारतीय पं० राजजगन्नाथ पद्य रचना प्रथम पुरस्कार।                   |







डॉ० त्रिपाठी वैष्णव सम्प्रदाय से सम्बद्ध होकर भी अत्यन्त उदारमना तथा प्रगतिशील मान्यताओं के प्रतिष्ठित संस्कृत कवि थे। उनकी पारिवारिक परम्परा में भी यही उदारता दृष्टिगोचर होता है, इनके पितामह श्री रामगुलाम त्रिपाठी अपने समय के विख्यात कवि थे और साथ ही आपके पिता पं० रामप्यारे त्रिपाठी भी ज्योतिष पंचांग रचना तथा संस्कृत विद्या के विशिष्ट ज्ञाता थे। आपके दोनों अनुज डॉ० सुधाकराचार्य त्रिपाठी (आचार्य एवं अध्यक्ष संस्कृत विभाग मेरठ वि०वि०) एवं श्री दिवाकराचार्य त्रिपाठी (प्राचार्य श्री लालचन्द्र इ० का० जसरा, इला०) भी संस्कृत के विशिष्ट हस्ताक्षर हैं।

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी की विद्वत्ता का प्रमाण है कि मां सरस्वती ने उन्हें लेखन की विविध विधाओं (कविता, नाटक, ध्वनि, रूपक, कहानी निबन्ध समीक्षा आदि) में सफलता पूर्वक अभिव्यक्ति के साथ सनातन उपलब्धियों और मूल्यों और प्रवृत्तियों को समझने की विलक्षण सूक्ष्म दृष्टि भी प्रदान की थी। वे जन्मजात शोधवृत्ति के धनी साहित्यिक व्यक्तित्व के थे। उनमें सारस्वत सत् की पहचान कर उसे पाने की ललक और प्रतिभा प्रयोगों के प्रति स्वाभाविक आकर्षण था।

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी मूलरूप से संस्कृत के गद्यकार, कहानीकार और नाटककार थे। संस्कृत महत्ता और प्रतिष्ठा के प्रति उनकी आश्वस्ति दृढ़ थी।

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी 3 दिसम्बर 2008 को मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में ही पंचतत्व में विलीन हो गये। वे सशरीर आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन सनातन मूल्यों से सिक्त उनका विद्वत्तापूर्ण साहित्यिक अवदान चिरकाल तथा समाज और राष्ट्र का पथ आलोकित करता रहेगा।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

### समीक्षण —एक मूल्यांकन प्रविधि—

महर्षि वाल्मीकि संस्कृत के आदिकवि है तथा उनका रामायण आदिकाव्य है, उनकी कविता देश तथा काल की अवधि के द्वारा परिच्छिन्न नहीं की जा सकती। वे उन विश्व कवियों में अग्रणी है जिनकी वाणी एक देश विशेष के प्राणियों का ही मंगल साधन नहीं करती और न किसी काल—विशेष के जीवों का मनोरंजन करती हैं। कालक्रम से संस्कृत साहित्य के विकास में आदिम होने पर भी वाल्मीकि की अमृतमयी वाणी में सौन्दर्य—सृष्टि का चरम उत्कर्ष है तथा महनीय काव्य कला का परम औदात्य है। वाल्मीकि का रामायण 'महनीय कला' का सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है। इन्हीं के मनोवृत्ति का अनुकरण करते हुए डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने "साकेत सौरभम् महाकाव्य को शाश्वत काव्य का समुज्ज्वल निदर्शन दिया है क्योंकि इन्होंने इस काव्य में मानव—जीवन के स्थायी मूल्यवान तत्वों को लेकर निर्मित किए हैं त्रिपाठी जी अपनी विमल प्रतिभा से सम्पन्न दैवी गुणों से मण्डित, आर्षचक्षु रखने वाले एक महनीय कवि थे।

कवि के वास्तविक स्वरूप की झलक आलोचकों को इनके दृष्टान्त से ही मिलती है। कवि की कल्पना में दर्शन के साथ वर्णन का भी मंजुल सामरस्य रहता है। इनकी रचनाओं में स्थायित्व है, पीछे आने वाली पीढ़ियों को राह दिखाने की क्षमता है और यह सम्भव होता है महनीय शोभन गुणों के कारण, जैसे उदात्तता, अर्थ और काम की धर्मानुकूलता, संकट के समय दीन का संरक्षण विपत्ति के आघात से प्रताड़ित मानव को अपने बाहु—बल से बचाना, शरणागत का रक्षण आदि। इन्हीं गुणों की प्रतिष्ठा जीवन में स्थायित्व तथा महनीयता की जननी होती है। इसीलिए इस काव्य को शाश्वत काव्य का अभिधान दे सकते हैं। वाल्मीकि का रामायण 'महनीय कला' के लिए जिस आदर्श को काव्य—गोष्ठी में प्रस्तुत किया गया है वह वाल्मीकि के इस काव्य में सुचारु रूप से अपनी अभिव्यक्ति पा रहा है।







फलाउबेर की सम्मति में 'ग्रेट आर्ट (महान कला) इन वस्तुओं की साधन तथा प्रसारणा से मण्डित होती (1) 'मानव सौख्य की अभिवृद्धि, दीन-आर्त जनों का उद्धार, परस्पर में सहानुभूति का प्रसार, हमारे और संसार के बीच सम्बंध के विषय में नवीन या प्राचीन सत्यों का अनुसंधान, जिससे इस भूतल पर हमारा जीवन उदात्त तथा ओजस्वी बन जाये और ईश्वर की महिमा झलके।

यहीं लक्षण वाल्मीकि के रामायण के ऊपर अक्षरसः घटित होती है। जीवन को ओजस्वी तथा उदान्त बनाने के लिए रामायण में जिन आदर्शों को अपनी अमर तूलिका से चित्रित किया, वे भारतवर्ष के ही लिए मान्य और आदरणीय नहीं है, प्रत्युत वे मानव-मात्र के सामने उच्च नैतिक स्तर तथा सामाजिक उदात्तता की भावना को प्रस्तुत करते हैं। (2) संस्कृत की आलोचना-परम्परा में रामायण 'सिद्धरस' प्रबन्ध कहा गया है। कथावस्तु की विवेचना के अवसर पर आनन्दवर्धन ने कहा है। (3)

अभिनव गुप्त की व्याख्या से सिद्धरस का अर्थ स्पष्ट झलकता है— सिद्ध आस्वादमात्र शेषः न तु भावनीयों रसो यस्मिन् — अर्थात् जिस रस की भावना नहीं करनी पड़ती प्रत्युत रस आस्वाद के रूप में ही परिणत हो जाता है, वहीं काव्य सिद्ध रस कहलाता है, जैसे रामायण । 'श्री रामचन्द्र का नाम सुनते ही प्रजावत्सल नरपति, आज्ञाकारी पुत्र, स्नेहीभ्राता विपदग्रस्त मित्रों के सहायक बन्धु का कमनीय चित्र हमारे मानस पटल के ऊपर अंकित हो जाता है। जनक नन्दिनी जानकी का नाम ज्यों ही हमारे श्रवण को रसासिक्त बनाता है, त्यों ही हमारे लोचनों के सम्मुख आलोक सामान्य पतिव्रता की मंजुल मूर्ति झूलने लगती है। उनके कथन मात्र से हमारा हृदय आनन्द विभोर हो उठता है। उनसे आनन्द की स्फूर्ति होने के लिए क्या राम के आदर्श चरित्र के अनुशीलन की आवश्यकता पड़ती है? हमारा हृदय राम-कथा से इतना स्निग्ध, रसासिक्त तथा घुल मिल गया

1-Walter Pater —Aporeciations : Style नामक प्रख्यात ग्रन्थ में उद्धृत पृष्ठ '38।

2. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय पृष्ठ —31—32

3. "सन्ति सिद्धरसप्रख्या ये च रामायणादयः।

कथाश्रया न तैयोज्या स्वेच्छा रसविरोधिनी।।(आनन्दवर्धन का प्रख्यात श्लोक पृ०







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम एक परिचयांकन

है, कि हमारे लिए राम और जानकी किसी अतीत युग की स्मृति न रहकर वर्तमान काल के जीवन्त प्राणी के रूप में परिणत हो गए हैं। इसीलिए रामायण को 'सिद्धरस काव्य' कहा गया है।

वाल्मीकि के काव्य की सबसे बड़ी विशिष्टता है उदात्तता । पात्रों के चित्रण में प्रसंगो के वर्णन में प्रकृति के चित्रण में तथा सौन्दर्य की स्फूर्ति में सर्वत्र उदात्तता स्वाभाविक रूप से विराजती है। आदिकवि के इस काव्य मंदिर की पीठास्थली राम तथा जानकी का पावन चरित्र। रामशोभन गुणों के भव्य पुंज है। (1)वाल्मीकि ने ही हमें रामराज्य की सच्ची कल्पना देकर संसार के सम्मुख एक आदरणीय आदर्श प्रस्तुत किया । राम कृतज्ञता की मूर्ति है। सम्पूर्ण मानव हैं वे आदर्श पति हैं सीता के प्रति राम का सन्ताप चतुर्मुखी हैं । स्त्री (अबला) के नाश होने से वे करुण से सन्तप्त हैं। आश्रिता के नाश से दया (आनृशंस्य) के कारण , पत्नी (यज्ञ के सहधर्म —चारिणी )के नाश शोक के कारण तथा प्रिया (प्रेमपात्री) के नाश से प्रेम (मदन) के कारण संतृप्त हो रहे हैं।

“पत्नी नष्टेति शोकेन प्रियेति मदनेन च।”

आदिकवि की यह रचना संस्कृत वाङ्मय का अत्यन्त अभिराम निकेतन है। सहजता और सरसता इसका सर्वस्व है। विभिन्न अलंकारों द्वारा रसों की अभिव्यक्ति , प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण , वर्णन की यथार्थता हृदयग्राहिता इसके अनुपम गुण हैं।

आदिकवि वाल्मीकि कि इसी शैली का उदात्त उत्कर्ष हमें महाकवि डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी के भी द्वारा प्राप्त होता है।

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय पृष्ठ— 33







निःसन्देह अपनी काव्यकला को उत्कर्ष की चरम सीमा पर पहुँचने में वाल्मीकि ही त्रिपाठी जी के प्रेरणा स्रोत रहे हैं। त्रिपाठी जी के काव्यों की भाषा इतनी सरल और प्रवाह पूर्ण है कि उसे समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। न कहीं क्लिष्ट कल्पना है, न कृत्रिमता। अलंकारों को गढ़ने का प्रयत्न नहीं है। वे स्वाभाविक रूप से आ गये हैं गागर में सागर भरने की अद्भुत क्षमता इस कवि में है। साकेतसौरभम् के केवल 8 अंको में महाकाव्य की परिभाषा में जितने विषय गिनाये गये हैं उन सबका वर्णन करते हुए कवि ने रघु की 24 पीढ़ियों का वृत्तान्त अत्यन्त सफलता पूर्वक बताया है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ऐसे काव्य कान्ति से सम्पृक्त हो रहा है जो कविता कानन में विचरण करने वाला नैतिक मूल्यों को जगाता, युग बोध कराता, ललित्यलावण्य बिखेरता, रससिन्धु में आकण्ठ डुबाता, मानवीय संवेदनाओं से जोड़ता, हृदयरूपी वीणा की तंत्री के तारों को आनन्दानन्द गीत –संगीतमय झड़कृत कराता, कविता वनिता की कमनीय की मिठास की सच्ची अनुभूति कराता हुआ जीवन की अन्तिम लक्ष्य पुरुषार्थ चतुष्टय की सम्प्राप्ति कराने वाला महाकवि लौकिक संज्ञा से डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी को अभिहित किया जाता है। जिसके काव्य कला की पराकाष्ठा अकेले मृत्कूटम् और लघुरघु क्रमशः मानवीय वैज्ञानिक विश्लेषण एवं केवल लघुवर्णी काव्य अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के आँचल में जानकी जीवन, वामानावतरणम् तथा सीताचरितम्, पयः पानम्, बलदेव चरितम्, दलितोदयः, भार्गवराघवीयम् आदि महाकाव्यों एवं कृतार्थकोशिकम् वीरप्रतापम्, कामकन्दलम्, मुकुन्दलीलामृतम्, सावित्रीनाटकम्, त्रिपथगा, अजेयभारतम्, हर्षदर्शनम् के रूपकों में साकेतसौरभम्, स्नेहसौवीरम्, तौर्यत्रिकम्, अजाशती, मृत्कूटम्,



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.



वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् एक परिचयांकन

लघुरघु, दूर्वा, भोजभारती, गद्वद्वादशी, सुतनुकालास्यम्, आदि का अप्रतिम स्थान है जो अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में अपनी सानी नहीं रखते अतः डॉ० त्रिपाठी जी का संस्कृत साहित्य में वहीं स्थान है जो किसी जीवधारी के शरीर में आंख और हृदय का होता है, महाकवि के मूल भावों की दिव्य दृष्टि और विशाल हृदय सहृदय प्राणी ही समझ सकता है जिसका सबल प्रमाण स्वयं साकेतसौरभम् का एक पद्य है—

अन्यच्छायामयी लक्ष्या गन्धमाला गृहे—गृहे ।

अन्तश्छायामयी नवया काव्य रेखा क्वचित् —क्वचित् ।(1)

संस्कृत काव्यधारा वैदिक काल से अनवरत अवाधगति से गतिमान होती चली आ रही हैं जिसके परिणाम स्वरूप ही लौकिक संस्कृत उत्पन्न होकर अपने काव्यचारुता, रस पेशलता से उत्तरोत्तर आदिकाव्य रामायण रूप में प्रकटीभूत हो अद्यावधि प्रवाहमान हैं। कालान्तर में लौकिकसाहित्य भी प्राचीन और अर्वाचीन दो नामों से संस्कृत साहित्य जाना जाने लगा है। जिस प्राचीन साहित्य में कालिदास, भास, भारवि, माघ, भवभूति, दण्डी, वाण, सुबन्धु, अश्वघोष, श्रीहर्ष, शूद्रक इत्यादि की काव्यधारा में अवगाहन कर काव्य माला निष्कालुष्य हो अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के रूप में प्रतिष्ठित होकर सतत क्रियाशील है—

‘साकेतसौरभं दृष्ट्वा धारणा परिवर्तिता ।

कालिदास कनिष्ठिकायां भास्करोऽनाभिकास्थितः ।।”

(डॉ० आर०के० सराफ पूर्व प्राचार्य उ० शि० म०प्र०)















## द्वितीय अध्याय

रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेतसौरभम्  
की स्थिति

(क) संस्कृत व्याख्या एवं स्वरूप

(ख) रामकथापरक संस्कृत महाकाव्य

(ग) रामकथापरक संस्कृत महाकाव्यों में साकेतसौरभम्  
का स्थान







## अध्याय— 2

रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेतसौरभम् की स्थिति—

(क) संस्कृत भाषा व्याख्या एवं स्वरूप —

संस्कृत भाषा की प्राचीनतम भाषा है, वाङ्मय अपनी प्राचीनतम सरसता एवं पूर्णता के लिए प्रसिद्ध हैं। संस्कृत का साहित्य जिस भाषा में निबद्ध किया गया है उसका नाम है— संस्कृत भाषा, देववाणी या सुरभारती । संसार की समस्त परिष्कृत भाषाओं में संस्कृत ही प्राचीनतम है, इस विषय में विद्वानों में किसी प्रकार का मतभेद नहीं है। भाषा —विज्ञान की दृष्टि में संसार की भाषाओं में दो ही भाषाएँ ऐसी हैं, जिनके बोलने वालों ने संस्कृति तथा सभ्यता का निर्माण किया है एक है 'आर्यभाषा' और दूसरी है " सामी या सेमेटिक भाषा"। आर्यभाषा के अन्तर्गत दो विशिष्ट शाखाएँ हैं— पश्चिमी और पूर्वी। पश्चिमी शाखा के अन्तर्गत यूरोप की सभी प्राचीन तथा आधुनिक भाषाएँ सम्मिलित हैं— ग्रीक, लैटिन, ट्यूटानिक , फ्रेंच, जर्मन , इंगलिश आदि। ये सब भाषाएँ मूल आर्य भाषा से ही उत्पन्न हुई हैं। आर्य भाषा की दो प्रधान विभाग हैं— ईरानी और भारतीय। ईरानी भाषा का नाम "जेन्द अवेस्ता" है, जिसमें पारसियों के मूल धार्मिक ग्रन्थ लिखे गये हैं। भारतीय शाखा में संस्कृत ही सर्वस्य है। (1) जिसका प्राचीनतम् ग्रन्थ ऋग्वेद है। आर्यभाषा के मूल को जानने के लिए जितना साधन यहाँ है उतना कहीं नहीं है। आजकल भारत की समस्त भारतीय भाषाएँ (द्रविडी भाषाओं को छोड़कर ) संस्कृत भाषा से ही निकली हैं।

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय— पृ० —12







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

संस्कृत भाषा 'सम पूर्वक 'कृ' धातु से बना हुआ है, जिसका मौलिक अर्थ है— संस्कार की गई भाषा । भाषा के अर्थ में 'संस्कृत' का प्रयोग वाल्मीकीय रामायण में पहले पहल मिलता है । सुन्दरकाण्ड में सीता से किस भाषा में वार्तालाप किया जाए? इसका विचार करते हुए हनुमान जी ने कहा है कि द्विज के समान मैं संस्कृतवाणी बोलूँगा तो सीता मुझे रावण समझकर डर जायेगी। (1) यास्क और पाणिनी के ग्रन्थों में लोक व्यवहार में आने वाली बोली का नाम 'भाषा' है। (2) 'संस्कृत' शब्द इस अर्थ में प्रयुक्त नहीं मिलता । जब 'भाषा' का सर्वसाधारण में प्रचार कम होने लगा और पालि तथा प्राकृत भाषाएँ बोल चाल की भाषाएँ बन गयी, (3) तब जान पड़ता है कि विद्वानों ने प्राकृत भाषा से भेद दिखलाने के लिए इसका नाम प्राकृत भाषा दे दिया।

यह वाल्मीकि रामायण से चली आने वाली परम्परा का अनुसरण है, क्योंकि लोक व्यवहार में प्रचलित भाषा के रूप में प्राकृत का उदय वाल्मीकि युग की घटना है। इसका अनुमान हनुमान जी के पूर्वोक्त निर्देश से स्पष्टतः सिद्ध होता है।

संस्कृत भाषा के दो रूप हमारे सामने प्रस्तुत हैं— वैदिक —लौकिक, वेदभाषा तथा लोकभाषा । वैदिक भाषा में वेद (ऋग्वेद , यजुर्वेद, सामवेद, , अथर्ववेद) ब्राह्मण , आरण्यक और उपनिषद् आदि की रचना हुई। लौकिक संस्कृत में वाल्मीकीय रामायण, महाभारत आदि की रचना हैं।

1. यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृतम्।  
रावणं मन्यमाना माम् सीता भीता भविष्यति॥ (सुन्दरकाण्ड 5/14)
2. भाषायामन्वध्यायंच (निरुक्त 1/4)  
भाषायां सदवसस्रुव (अष्टा 03/2/108)
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास —आचार्य बलदेव उपाध्याय —पृष्ठ 12—13



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.



रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरमम् की स्थिति—

महाकवि दण्डी के समर्थन से इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है कि दण्डी (सप्तकशतक) प्राकृत भाषा से भेद दिखलाने के अवसर पर 'संस्कृत' का प्रयोग भाषा के लिए स्पष्टतः किया है।

संस्कृत नाम दैवी वागन्वाख्यातामहर्षिभिः । 1

'ब्राह्मणों की भाषा लौकिक एवं वैदिक युग की मध्यकालीन भाषा है। उसमें कुछ प्रयोग संहिताओं के समान मिलते हैं और कुछ प्रयोग लौकिक संस्कृत के। निरुक्त की भाषा भी इसी काल की है। पाणिनी संस्कृत साहित्य के सबसे श्रेष्ठ वैयाकरण है। उन्होंने संस्कृत भाषा को विशुद्ध तथा व्यवस्थित बनाये रखने के लिए प्रसिद्ध व्याकरण बनाया, जो आठ अध्यायों में विभक्त होने के कारण 'अष्टाध्यायी' कहलाता है। 2

संस्कृत भाषा में जो एकरूपता दिखाई पड़ती है। यह सब पाणिनी के नियमन का ही फल है। कुछ लोग पाणिनी पर यह दोष लगाते हैं कि उन्होंने भाषा को जकड़कर अस्वाभाविक बना दिया, परन्तु बात ऐसी नहीं है यदि पाणिनी का व्याकरण न रहता तो संस्कृत भाषा में देश काल की भिन्नता से इतना रूपान्तर होता कि उसे हम पहचान भी नहीं सकते। अष्टाध्यायी के ऊपर कात्यायन ने वार्तिक लिखा, जिसमें उन्होंने नये प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या दिखलाई विक्रम—पूर्व द्वितीय शतक में पतंजलि ने 'अष्टाध्यायी' के ऊपर 'भाष्य' लिखा, जो इतना सुन्दर, उपादेय तथा प्रामाणिक है कि उसे 'महाभाष्य' के नाम से पुकारते हैं लौकिक संस्कृत के कर्ता—धर्ता ये ही तीन मुनि हैं, जिनके कारण व्याकरण 'त्रिमुनि' के नाम से विख्यात है। पिछले युग में संस्कृत व्याकरण के ऊपर जो कुछ लिखा गया वह केवल इस 'मुनित्रय' के ग्रन्थों का व्याख्यान मात्र हैं। कुछ लोगों का कथन है कि इस 'मुनित्रय' के द्वारा व्याख्यात तथा विवृत होने के कारण ही देववाणी 'संस्कृत' नाम से अभिहित की जाती है। 3

1 काव्यादर्श— 1/33

2. संस्कृत साहित्य का इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय— पृष्ठ —14

3. संस्कृत साहित्य का इतिहास— आचार्य बलदेव उपाध्याय —पृष्ठ—13







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

संस्कृत भाषा भारतीयों की प्राणभूत भाषा हैं। संस्कृत भाषा में ही उनका मनन, चिन्तन, गवेषण और अनुभूति समन्वित हैं। इसका इतिहास कम से कम पाँच सहस्र वर्ष का हैं। वैदिक काल से लेकर आज तक इसकी अक्षुण्ण धारा प्रवाहित रही है। 'संस्कृत' शब्द का अर्थ है— परिष्कृत, निर्दोष, निर्मल, शुद्ध और अलंकृत। भारतीयों ने जिस भाषा को अशुद्धि, अपभ्रंश, अपशब्द और भाषागत दोषों से पृथक रखकर परिष्कृत रूप में रखा, उसे संस्कृत भाषा का नाम दिया गया। संस्कृत को देववाणी, देवभाषा, गीर्वाणवाणी, गीर्णावगी: आदि नामों से व्यहृत किया जाता हैं। "विद्वांसो हि देवाः" विद्वानों की भाषा को देवभाषा कहा जाता था। यह विद्वानों, मनीषियों, शिष्टों और तत्त्वज्ञानियों की भाषा थी ईसवीय सन् के प्रारम्भ से पूर्व तक संस्कृत का प्रयोग विद्वज्जन भाषा और राजभाषा के रूप में प्रचलित था। 1

संस्कृत के विकृत रूप का नाम 'प्राकृत' भाषा है। 'प्राकृति' का अर्थ है— मूलभाषा अर्थात् संस्कृत। उससे निकली हुई भाषा को 'प्राकृत' कहते हैं। जनसाधारण को भी प्राकृत कहते हैं, अतएव जनसाधारण द्वारा प्रयुक्त भाषा को प्राकृत कहते हैं। संस्कृत भाषा का ही विकृत रूप प्राकृत भाषा है। इसमें व्याकरण के नियमों आदि का पूर्णतया पालन न होकर नदी की धारा के प्रवाह के तुल्य जन जीवन में प्रयुक्त भाषा का अक्षुण्ण रूप होता हैं अतएव संस्कृत भाषा प्रयोग के आधार पर अनेक प्राकृत भाषाएँ प्रादुर्भूत हुई। 2

भारतवर्ष का समस्त प्राचीन ज्ञान—भण्डार संस्कृत में ही है। भारतीयों के सभी धर्मग्रन्थ, पुराण, रामायण, स्मृति, ग्रन्थ, दर्शन, धर्मशास्त्र, महाकाव्य, काव्यनाटक, काव्यशास्त्र, गणित, ज्योतिष, नीतिशास्त्र, कामशास्त्र,

1. संस्कृति साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास—डॉ० कपिलदेव द्विवेदी—पृष्ठ—1







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

आयुर्वेद , धनुर्वेद , वास्तुकला, अर्थशास्त्र , राजनीतिशास्त्र , इतिहास छन्दशास्त्र और कोश —ग्रन्थ तक संस्कृत में ही हैं। ज्ञान—विज्ञान का ऐसा कोई अंग नहीं है जो संस्कृत भाषा में उपलब्ध नहीं है। यह प्राचीन, ऋषि, महर्षियों , कवियों और तत्त्वज्ञों के अथक परिश्रम का ही फल है कि इतना विस्तृत वाङ्मय संस्कृत में उपलब्ध है। (1)

संस्कृत में विश्व का सबसे प्राचीनतम साहित्य उपलब्ध है। जिसमें वैदिक साहित्य मुख्यतया ऋग्वेद विशेष उल्लेखनीय है।

विश्व की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता की जानकारी के लिए संस्कृत ही एक मात्र साधन है।

विश्व संस्कृति की आधार संस्कृत वाङ्मय में ही उपलब्ध होती है। इसके आधार पर ही संस्कृति की तुलनात्मक रुपरेखा प्रस्तुत की जाती है।

भारोपीय (Indo-European) परिवार की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत है। इसके तुलनात्मक अध्ययन से ही 'तुलनात्मक भाषा विज्ञान का जन्म हुआ है।

संस्कृत में ज्ञान—विज्ञान , कला संस्कृति, धर्म, दर्शन अर्थशास्त्र , व्याकरण , काव्यशास्त्र और आयुर्वेद आदि पर जितना विस्तृत प्राचीन वाङ्मय उपलब्ध होता है, उतना विश्व की किसी अन्य भाषा में नहीं है।

संस्कृति साहित्य ने न केवल एशिया महाद्वीप के ही विभिन्न देशों की भाषाओं एवं संस्कृतियों को प्रभावित किया है, अपितु यूरोप और अमेरिका की भाषाओं और संस्कृतियों पर इसकी अमिट छाप है।

प्राचीन भारतीय साहित्य का महत्व पूर्णतः उसकी मौलिकता के कारण है। (2) भारोपीय परिवार की कोई और शाखा ऐसी नहीं है, जिसे इस प्रकार का स्वतन्त्र विकास का सौभाग्य प्राप्त हुआ हो।

1.वही पृष्ठ—2

2 मैकडॉनल —संस्कृत साहित्य का इतिहास , हिन्दी अनुवाद 1962 पृष्ठ—6







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

चीन को छोड़कर और कोई भारत जैसा देश नहीं जो अपनी भाषा एवं साहित्य का अपनी धार्मिक धारणा एवं विधियों का अपनी सामाजिक एवं पारिवारिक रुढ़ियों का 3000 वर्ष से अधिक पूर्व समय से अव्याहत गति से विकास बतला सकता हो। (1)

संस्कृत वाङ्मय का अध्ययन और अधिक ध्यान देने योग्य है कारण यह मानव जाति की वह प्राचीन सम्पत्ति है, जिसमें हमारे भारतीय साम्राज्य के अधिकांश प्रजानन हिन्दुओं की भाषाएँ, धार्मिक एवं बौद्धिक विचार अथवा यों कहिए समग्र सभ्यता का मूल ही निष्ठित हैं। (2)

मानव जाति के विकास का अध्ययन का मूल 'स्रोत होने के कारण भारतीय वाङ्मय ग्रीक साहित्य की अपेक्षा कहीं अधिक उत्कृष्ट हैं (3) यद्यपि अनेक शाखाओं में उत्कर्ष अत्यधिक है (4) वैदिक साहित्य एवं संस्कृत साहित्य के आधार पर ही मैक्समूलर और एडलबर्ट कुहन ने 'तुलनात्मक,' प्राचीन कथा—विज्ञान' नामक विज्ञान को जन्म दिया है। (5)

वाल्मीकि , व्यास, कालिदास, भवभूति आदि के उदात्त काव्य सौन्दर्य, रचना चातुर्य, प्रकृति प्रेम और आदर्श जीवन दर्शन के लिए संस्कृत का यथार्थ बोध अत्यावश्यक है। तात्त्विक चिन्तन, मनोविज्ञान , शिक्षा, दर्शन, भाषा शास्त्र, प्राचीन विधान, प्राचीन गणित, ज्योतिष, प्राचीन राज्यतन्त्र, राजनीति, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र , कामशास्त्र , आयुर्वेद, समुद्रिकशास्त्र, संगीत नृत्य,

1. वही पृ० सं० 6
2. मैकडॉनल पृ० सं —सा० का इतिहास हि० अनु० पृ०—5
3. वही पृष्ठ— 5
4. वही पृष्ठ— 5
5. वही पृष्ठ— 5



सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

इस प्रकार सिद्ध हो कि यह प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

(1) यह सिद्धांत सिद्ध करने का प्रयत्न

इस प्रकार सिद्ध हो कि यह प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

(2) यह सिद्धांत सिद्ध करने का प्रयत्न

इस प्रकार सिद्ध हो कि यह प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न  
है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

(3) यह सिद्धांत सिद्ध करने का प्रयत्न

इस प्रकार सिद्ध हो कि यह प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

सिद्धांत

है कि सिद्धांत में प्रमाणों के द्वारा सिद्ध करने का प्रयत्न

सिद्धांत

सिद्धांत

सिद्धांत

सिद्धांत



रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

अभिनय कला आदि के सूक्ष्मतम ज्ञान के लिए संस्कृत वाङ्मय ही आश्रय हैं। विश्वप्रेम, विश्व बन्धुत्व एव विश्व-संस्कृति के आधारभूत तत्वों की समीक्षा, परीक्षा और अन्वीक्षा के लिए संस्कृत का अनुशीलन अत्यन्त आवश्यक है। अधिकांश विद्वानों का मत है कि ईसवीय सन् से पूर्व संस्कृत केवल विद्वज्जनों की भाषा थी और इसी में उच्च साहित्य की रचना होती थी। सामान्य जनता 'प्राकृत' भाषा का प्रयोग करती थी। इसके विषय में हमारा विचार है कि ईसवीय सन् से पूर्व संस्कृत राजभाषा के रूप में व्यहृत होती थी। राजकीय कार्य, शासकीय आदेश, विद्वज्जनों के वाद,विवाद, शास्त्रीय चर्चा, ज्ञान-विज्ञान के उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना तथा विद्वद्वर्ग का पारस्परिक संवाद आदि संस्कृत भाषा में ही होता था। सामान्य जनता संस्कृत के ही विकृत रूप 'प्राकृत भाषा' का प्रयोग करती थी।

संस्कृतज्ञ भी दैनिक व्यवहार में प्राकृत का प्रयोग करते थे और सामान्य जन भी संस्कृत समझने और बोलने की क्षमता रखते थे। (1) आवश्यकतानुसार सामान्य जन भी संस्कृत के वाद विवादों में संस्कृत का प्रयोग करते थे। इसको वर्तमान 'खड़ी बोली' हिन्दी के उदाहरण से समझा जा सकता है शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली का प्रयोग बहुत कम प्रदेशों में होता है अधिकांश व्यक्ति अवधी, ब्रजभाषा , भोजपुरी , पहाड़ी आदि बोलियां दैनिक व्यवहार में प्रयोग करते हैं, बल्कि ये सभी साहित्यिक हिन्दी बोलने और समझने की क्षमता रखते हैं तथा लेखनादि में साहित्यिक खड़ी बोली का ही प्रयोग करते हैं।

1. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास —डॉ० कपिलदेव द्विवेदी—पृ० 4







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

### (ख) रामकथा परक संस्कृत महाकाव्य

रामकथा संबंधी प्राचीन महाकाव्य में कथानक के दृष्टिकोण से कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता । उनकी एक विशेषता यह है जिनमें वाल्मीकि की रचना की अपेक्षा शृंगार को अधिक स्थान दिया गया है। पहले यह शृंगारिक वर्णन राक्षसों के विषय में किया गया है (देव सेतुबंध , सर्ग 10, भट्टिकाव्य, सर्ग 11) लेकिन आगे चलकर कुमारदास ने कुमार सम्भव के अनुकरण पर राम—सीता के संभोग शृंगार वर्णन भी किया है, जो अश्लीलता की सीमा तक पहुँच गया है। अपेक्षाकृत अर्वाचीन राम काव्यों में भी शृंगारात्मक वर्णनों का अभाव नहीं है। उदाहरणार्थ लक्ष्मणध्वरि कृत रामविहारकाव्यम् (12सर्ग, 17 वीं शताब्दी) के दसवें सर्ग में सीता तथा राम के उद्यान विहार तथा ग्यारहवें सर्ग में उनकी जलक्रीडा तथा मधुपान का वर्णन किया गया है। धनंजय—कृत राघवपाण्डवीय के 15 वें सर्ग में कपि सेना के शृंगार तथा जलक्रीडा का चित्रण किया गया है।

(1)

### रघुवंश

आचार्य मम्मट ने काव्य प्रयोजन बताते हुए कहा है— “काव्यं यशसेऽथेकृते कान्तासम्मितयोप व्यवहारविदे देशयुजे” अर्थात् काव्य की रचना यश के लिए , द्रव्यार्जन के लिए तथा मधुरतापूर्वक लोक—कल्याण का सन्देश (उपदेश) देने के लिए होती है केवल यश और धन के लिए रचे गये काव्य उस उच्च कोटि में नहीं पहुँच पाते जिसमें लोक कल्याण का सन्देश देने वाले काव्य। कालिदास का रघुवंश भी इसी कोटि का महाकाव्य है, जो केवल कालिदास की रचनाओं में ही नहीं विश्व साहित्य में अपनी सानी नहीं रखता ।







कवि ने काव्य के प्रारम्भ में ही कहा है— 'क्वः सूर्यप्रभवो वंशः क्वः चाल्पविषयामतिः'। वे उस वंश का वर्णन करने जा रहे हैं जो सूर्य से उत्पन्न हुआ है सूर्य उदय होकर जगत को प्रकाश देता है , फिर तपता है और अन्त में अस्ताचल को चला जाता है। ठीक इसी प्रकार काव्य में भी उन्होंने रघुवंश का पूर्वार्ध में अभ्युदय और उत्तरार्ध में क्षयोन्मुखता का वर्णन अत्यन्त ही सुन्दरता और विशदता से किया है। 1

कवि कालिदास ने रघुवंशम् में 19 सर्गों का वर्णन करते हुए इस वंश का जिस रूप में चित्रण किया, उसके अनुसार राजा दिलीप ने गुरु की आज्ञा से तप करके रघु— जैसा प्रतापी पुत्र पाया, 100 अवश्वमेघ किये चिरकाल तक प्रजा का पालन किया और अन्त में राज्य देकर अरण्य के लिए प्रस्थान किया। रघु प्रताप और तेजस्विता में अपने पिता से बढ़कर हुए। उसने दिग्विजय करके चक्रवर्ती सम्राट का पद प्राप्त किया। अन्त में विश्वजित् यज्ञ में सर्वस्व दान कर दिया। रघु का पुत्र अज भी अपने पिता की तरह प्रतापी राजा हुए और अज का पुत्र दशरथ भी। इस प्रकार से सभी राजा विद्वान, धार्मिक, प्रतापी, यशस्वी प्रजावत्सल और दानी हुए, जिन्होंने इस वंश की कीर्तियों को दिगन्तव्यापी किया।

दशरथ के पुत्र राम साधारण महापुरुष हुए। उनका स्थान केवल रघुकुल या भारतवर्ष में ही नहीं विश्व में अद्वितीय रहा उनके उज्ज्वल चरित्र ही इन्हें तो मर्यादा पुरुषोत्तम की संज्ञा प्रदान करता है, भारत को आदर्श पुरुष की जन्मभूमि होने का विश्व में गौरव भी प्रदान किया है।

कालिदास ने भी अपने काव्य में इन 15 सर्गों में सम्पूर्ण भारत की धार्मिक , आध्यात्मिक , आर्थिक , भौगोलिक , राजनीतिक सभी प्रकार की संस्कृति का दिग्दर्शन कराते हुए, रघुवंशरूपी सूर्य को प्रखरता तक पहुँचाता हैं इसके बाद रघुवंश की गौरव क्षीणता की ओर उन्मुख हुआ।







राम के स्वर्गारोहण के बाद राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। जहाँ एक रघुवंशी प्रतापी राजा होता था। वहाँ अनेक राजधानियाँ हो गयी। कुश ने कुशावती को, लव ने शरावती को, भरत पुत्र पुष्कल ने पुष्कलावती को और तक्ष ने तक्षशिला को, लक्ष्मण के पुत्रों ने मथुरा को अपनी-अपनी राजधानी बनाया। इस प्रकार रघु द्वारा प्रतिष्ठापित एक विशाल साम्राज्य अनेक टुकड़ों में बिखर गया। फलतः राघवों की अयोध्या जिस पर सम्पूर्ण राष्ट्र को गर्व था, उजड़कर रह गई। यद्यपि कुश ने पुनः अयोध्या को राजधानी बनाकर अपनी भूल सुधारी किन्तु राजधानी उजड़ने से राष्ट्र को जो धक्का लगा उसे वह न सँभाल सका।

कालिदास ने, जीर्णवस्त्रों वाली धूलिधूसरित अयोध्या का स्वप्न में कुश को दर्शन कराकर अपनी व्यथा सुनाने में जो अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है वह कोई सिद्ध सरस्वतीक कवि ही कर सकता है।

कुश के बाद कवि ने जिन 24 उत्तराधिकारियों का वर्णन किया है उनमें केवल कुश के पुत्र अतिथि को छोड़कर किसी के लिए भी 214 श्लोकों से अधिक नहीं कहा है। अन्तिम शासक अग्निवर्ण ने तो राज्यभार मंत्रियों पर छोड़कर केवल विषय —वासना और कामुकता को जीवन अर्पण कर दिया। फलतः उसे राजयक्ष्मा ने घेर लिया और वह सिंहासन छोड़कर गोलोक वासी हो गया।

इस प्रकार दिलीप की तपस्या, रघु के पराक्रम और राम के अलौकिक व्यक्तित्व से जो यशस्वी वंश दोपहर से सूर्य की भाँति दसों दिशाओं में प्रखरता से तप रहा था वही ध्रुवसन्धि जैसे व्यसनी और अग्निवर्ण जैसे उत्तराधिकारियों द्वारा विलुप्त हो गया।

कालिदास के इस महाकाव्य से बड़े से बड़ा शासक और प्रतापी विजेता भी शिक्षा ग्रहण कर सकता है। कवि ने इसके द्वारा यह अमर सन्देश दिया है कि तपस्या, वीरता, सेवाभाव और त्याग की नींव पर ही राजाओं







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

या राजवंशो के महल टिक सकते हैं ; प्रमाद, कायरता और लम्पटता के थपेड़ों को वे नहीं सह सकते ; जर्जर होकर धरासायी हो जाते हैं।

रघुवंश के नवें सर्ग में दशरथ के राज्य के अन्तर्गत मुनि-पुत्र बध का उल्लेख मिलता है। (1) अनन्तर समस्तरामचरित का छः सर्गों में वर्णन किया गया है। (2) कथानक वाल्मीकिकृत रामायण पर निर्भर है। सीतात्याग, लवणबध, कुश-लव, शम्बूक बध, लक्ष्मण-मरण तथा स्वर्गारोहण के उल्लेख से स्पष्ट है कि कालिदास प्रचलित उत्तराकांड की कथावस्तु से परिचित थे। (3) अनोजिता सीता के अलौकिक जन्म की कथा तो मिलती है लेकिन कहीं भी सीता के लक्ष्मी के अवतार होने की ओर निर्देश नहीं किया गया है। (4)

काकजयंत का वृत्तान्त भरत के चित्रकूट से चले जाने के बाद दिया गया है वाल्मीकि में इसका उल्लेख भरत के आने से पहले किया गया है अहल्या के विषय में कहा गया है कि वह वास्तव में शिला बन गई थी। वाल्मीकि के अनुसार रावण ने ब्रह्मा को अपने शीर्षों को समर्पित कर दिया था। कालिदास के अनुसार उसने शिव को उन्हें समर्पित किया था। शेष कथा वाल्मीकि से भिन्न नहीं है।

रावणवध एवं सेतुबन्ध —

महाराष्ट्री प्राकृत में लिखित 'रावणवध (5) की रचना राजा प्रवर सेन अथवा उनके दरबार के किसी कवि द्वारा लिखी गयी थी। इसका रचनाकाल प्रायः छठी शताब्दी ई० मानी जाती है। डॉ० सुशील कुमार ने इस रचना को पाँचवीं शताब्दी मानते हैं। इसके रचयिता के विषय में एक भ्रामक तथ्य प्रचलित है कि कालिदास जी ने उसे लिखा था।

1. रघुवंशम् — 9/73 से 82 श्लोक
2. वही — 10-15 सर्ग तक
3. वही — 14-15 सर्ग तक
4. रामकथा —कामिल बुल्के —पृष्ठ —149 —150
5. रामकमल प्रकाशन ने डॉ० रघुवंश का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया है।



सिद्धांत के अनुसार इससे ही सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत के अनुसार यह सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

। यह सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

(अ) । यह सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

। यह सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

— सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है

के सिद्धांत कि सिद्धांत प्रमाण प्राप्त हो सकता है



रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

प्रवरसेन प्रायः कश्मीर के राजा माने जाते हैं यद्यपि यह असम्भव नहीं कहा जा सकता है कि वाकाटक वंश के “प्रवरसेन द्वितीय” शासनकाल 5 वीं शताब्दी का मध्य सेतुबन्ध के रचयिता है, किन्तु इसके विरोध में जो तर्क दिये गये हैं, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं (1) रावणवह के 15 वें सर्ग में वाल्मीकि कृत युद्धकाण्ड की कथावस्तु का अलंकृत शैली में वर्णन मिलता है। कथानक में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया गया है।

समुद्र बंधन के वर्णन में मछलियों के द्वारा सेतु नष्ट कर देने का वर्णन है आगे चलकर इस घटना के विषय में अनेक कथाओं की कल्पना कर ली गयी हैं (दे० अनु० 578) रावणवह की एक अन्य विशेषता यह है कि ‘कामिनीकेलि’ नामक दसवें सर्ग में राक्षसियों का संभोग वर्णन मिलता है। इसका मूल स्रोत सम्भवतः पउमचरियं है और बाद में इसके वर्णन का अनुकरण भट्टिकाव्य जानकी हरण, अभिनन्दन कृत रामचरित , कम्बकृत तमिल रामायण, रामलिंगामृत तथा जावा के प्राचीनतम रामायण आदि में किया गया है।

भट्टिकाव्य अथवा रावणबध—

भट्टिकाव्य की रचना कच्छ में छठीं अथवा सातवीं शताब्दी में हुई थी। इसके 22 सर्गों में व्याकरण के नियमों के निरूपण के साथ-साथ वाल्मीकि कृत रामायण के प्रथम छः काण्डों की कथावस्तु का किंचित परिवर्तन सहित वर्णन किया गया है। इसकी निम्नलिखित विशेषताएं उल्लेखनीय हैं।

- सर्ग 1, 3 में दशरथ के शैव होने का उल्लेख ।
- सर्ग 1, 13 में पुत्रेष्टि — यज्ञ के कोई देवता, प्रकट नहीं होते वरन् दशरथ की पत्नियाँ हुतोच्छिष्ट खाती हैं।

1. दे० दि० क्लासिकल एज, (182-184)







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

- सर्ग 2, 21 में बला और अतिबला के स्थान पर जया तथा विजया नामक विधाओं का उल्लेख हैं।
- राम तथा सीता के विवाह का वर्णन (सर्ग 2, 43) में हैं।
- लक्ष्मण का सीता को शाप देना (सर्ग 5, 50) में हैं।
- सीता-हरण के पश्चात् राम पहले —पहल जटायु से मिलते हैं। (सर्ग 6, 41) में है
- राक्षसियों का सम्भोग वर्णन (सर्ग 11) में है।
- गौडीय तथा पश्चिमोत्तरीय पाठों के अनुसार विभीषण की माता उससे अनुरोध करती है कि वह रावण को समझावे । (सर्ग 12, 1) ; रावण की केवल एक ही सभा का वर्णन है, जिसमें रावण विभीषण पर पाद-प्रहार करता है (सर्ग 12, 76)
- ब्रह्मा के स्थान पर शिव राम को उनके नारायणत्व का स्मरण दिलाते हैं । (सर्ग 23, 16) (1)

जानकीहरण (800 ई० के लगभग)

सम्पूर्ण जानकीहरण बहुत समय तक अप्राप्य था। अब वह हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित हो गया है (मित्र प्रकाशन इलाहाबाद 1967)। इस ग्रन्थ की पुष्पिका में कवि का नाम नहीं है। उसके पिता के विषय में कहा गया है कि इनका नाम मानित था और ये लंकानरेश कुमार मणि का सेनानी था। कवि बचपन से ही व्याधिग्रस्त और अनाथ था, क्योंकि उसका पिता युद्ध में मारा गया था।

सिंहलद्वीप की एक अपेक्षाकृत अर्वाचीन दन्तकथा के अनुसार कुमारदास छठीं शताब्दी ई० में वहाँ के राजा थे आधुनिक समालोचक इस कथा पर







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

विश्वास न करके जानकीहरण के रचयिता को आठवीं शताब्दी के अन्त और नवीं शताब्दी के प्रारम्भ का कवि मानते हैं। जानकी हरण की कथावस्तु वाल्मीकित रामायण के प्रथम छः कांडों पर निर्भर हैं। कथानक के शिला (1) बन जाने के अतिरिक्त कोई अन्य परिवर्तन नहीं किया गया है किन्तु अंधमुनि —पुत्र का बध प्रथम सर्ग में वर्णित है केवल राम के विवाह का वर्णन किया गया है (2) किन्तु अन्य भाइयों के विवाह का भी वर्णन मिलता है। (3) प्रथम सर्ग में दशरथ राज्य वर्णन के अन्तर्गत उनके हिमालय में मृगया खेलने तथा मुनि पुत्र का बध करने का किंचित विस्तार सहित वर्णन किया गया है (4) इस रचना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके 20 सर्गों में श्रृंगारात्मक वर्णनों को पर्याप्त स्थान दिया गया है।

उदाहरणार्थ— दशरथ और उनकी पत्नियों के विहार जलक्रीड़ा आदि का वर्णन (5) राम तथा सीता के पूर्वानुराग का वर्णन (6) मिथिला में विवाह के पश्चात् राम तथा सीता का संभोग वर्णन, जिसमें कुमारसम्भव का प्रभाव स्पष्ट है (7) सेतुबंध के अनुकरण पर युद्ध के पूर्व राक्षसों की केलि का वर्णन (8)

अभिनन्दकृत रामचरित (नवी शताब्दी)

गौडीय पालवंश के युवराज हारवर्ष की प्रेरणा से अभिनन्द ने नवीं शताब्दी ई० पूर्वाब्द में रामचरित की रचना की थी। इसके 36 सर्गों में राम—लक्ष्मण के प्रस्त्रवण पर्वत के वर्षा—निवास (दे० रामायण 4,27) से कुंभ निकुंभ —बध तक (दे० वही 6,77) की वाल्मीकीय रामकथा का वर्णन मिलता है।

1. जानकी हरण —सर्ग 6 से 14 तक
2. वही प्रथम सर्ग —दे० आगे अनु० 0433
3. वही —नौवे सर्ग में
4. वही —1/45 से 90
5. वही — 3 सम्पूर्ण
6. वही — 7/1 से 34 तक
7. वही— 8 समस्त सर्ग
8. वही— 16 सर्ग







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

भीम नामक कवि ने चार सर्गों का परिशिष्ट लिखकर युद्धकांड की कथावस्तु पूरी की हैं। इस राम-चरित में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

वर्षा ऋतु के पश्चात सुग्रीव अपने आप राम के पास आता है और लक्ष्मण को भेज देने की आवश्यकता नहीं होती (सर्ग 5)।

अभिज्ञानस्वरूप राम हनुमान को अँगूठी के अतिरिक्त एक नुपूर और स्तनोत्तरीय भी देते हैं तथा दिलीप, रघु, अज, दशरथ की वंशावली भी सिखलाते हैं। (सर्ग 8) हनुमान आदि के गुफा में प्रवेश करने की वाल्मीकीयकृत किष्किन्धाकाण्ड की कथा में (दे० रा० 4, 50, 52) बहुत कुछ परिवर्तन किया गया है। कंदरा के प्रवेश— पथ पर सोते हुए दुर्दभ नाम राक्षस का अंगद द्वारा बध किस जाता है। भीतर जाकर हनुमान एक वानर वर सुन्दरी का प्रेम प्रस्ताव दो बार अस्वीकार करते हैं। स्वयंप्रभा के गुफा में निवास करने का कारण भी रामायण में दिये हुए वृत्तान्त से भिन्न है (सर्ग 10—12)। रावण के संभोग का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। (दे० दशाननपानकेलिवर्णनम् नामक 18 वाँ सर्ग )।

वाल्मीकीय रामायण के गौडीय पाठ के अनुसार रावण का विभीषण का पाद प्रहार करने का तथा विभीषण के राम की शरण लेने के पहले अपने भाई कुबेर के पास जाने का उल्लेख हुआ है (दे० सर्ग 23, 87 तथा सर्ग 24, 135 ) । (1)

कश्मीर— निवासी क्षेमेन्द्र ने 1037 ई० में वाल्मीकीयकृत रामायण के पश्चिमोत्तरीय पाठ का 5386 श्लोको में संक्षेप किया था और अपनी रचना का नाम रामायण मंजरी रखा था। इसमें क्षेमेन्द्र ने किसी मौलिकता का प्रदर्शन नहीं किया है, लेकिन 'दशावतार चरितम्' नामक अपने एक अन्य ग्रन्थ में जिसकी रचना 1066 ई० में हुई थी, उन्होंने 294 छन्दों के रामावतार —वर्णन में रामकथा का एक नवीन रूप प्रस्तुत किया था।



सिद्धांत के अनुसार - यज्ञ के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

(१)

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा

यह सिद्धांत अन्न के अभाव में अन्न न मिलेगा



इसकी विशेषता यह है कि समस्त कथा का वर्णन रावण के दृष्टिकोण से किया गया है। प्रारम्भ में रावण की तपस्या पर वरप्राप्ति, अत्याचार आदि का चित्रण मिलता है (छन्द 1-69) अनन्तर रावण लक्ष्मी के अवतार पद्मजा सीता को पुत्री स्वरूप ग्रहण करता है (दे० छन्द 70-104 और आगे अनु० 418)। 105 वें छन्द से रामायण की कथावस्तु का प्रारम्भ होता है।

शूर्पणखा रावण के पास आकर अपने विरूपीकरण तथा खरदूषण—बध का वृत्तान्त सुनाती है। इस पर रावण मारीच के यहाँ उससे जन्म से लेकर वनवास तक की विष्णुवतार राम की कथा सुनता है (105-130)। अनन्तर रावण मारीच की सहायता से सीता को हर लेता है (131-151)। इसके बाद सुकेतु नामक गुप्तचर मारीच—बध से लेकर (सुग्रीव—संख्य, वानरों का प्रेषण, हनुमान का समुद्र लंघन, अशोक वाटिका—भंजन आदि)। लंकादहन तक की कथा रावण को सुनाता है (152-194)।

सुकेतु तथा विभीषण दोनों रावण से सीता को लौटा देने का अनुरोध करते हैं। विभीषण रावण की दुर्बुद्धि देखकर राम की शरण लेता है। अनन्तर रावण एक गुप्तचर से विभीषण अभिषेक, सेतुबन्ध तथा राम के त्रिकूटागमन की कथा (207-213) तथा प्रतिहारपति से नागपाश द्वारा राम-लक्ष्मण के बन्धन तथा कुम्भकर्ण को जगाने का वृत्तान्त सुनाता हैं (214-223)। प्रतिहार पति-रावण संवाद के बाद कवि द्वारा शेष रामचरित का वर्णन किया गया है। कुम्भकर्ण—वध से लेकर राम के स्वर्गारोहण तक की समस्त वाल्मीकीय कथा संक्षेप में दी गई है।

उदारराघव — (14 वीं श० ई०)—

उदारराघव की रचना 14 वीं श० ई० के मध्य साकल्यमल्ल नामक कवि द्वारा हुई थी। कवि के अन्य नाम भी प्रचलित हैं— मल्लाचार्य,







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

कविमल्ल और मल्लाचार्य । इस रचना का विस्तार 18 सर्गों का बताया जाता है, लेकिन इसके केवल नौ सर्ग सुरक्षित हैं, जिनमें शूर्पणखा—विरुपीकरण तक का वर्णन मिलता है।

कथानक वाल्मीकीय रामायण के अनुसार है अवतारवाद के विषय में कुछ परिवर्तन किया गया है। राम विष्णु के पूर्णावतार माने गए हैं तथा लक्ष्मण—भरत शत्रुघ्न क्रमशः शेष, सुदर्शन, शंख के अंशावतार हैं। सीता वन—गमन के लिए राम से अनुरोध करते हुए कहती है कि मैंने बहुत से रामायण सुने हैं, लेकिन उनमें राम कहीं भी सीता के बिना वन नहीं जाते हैं—

रामायणानीहं पुरातननि, पुरातनेभ्यो बहुशः श्रुतानि।

न क्वापि वैदेहसुतां विहाय रामो वनंयात इति श्रुतं मे॥

सारी रचना की शैली कृत्रिम और अत्यधिक अलंकृत हैं तथा इसमें वाल्मीकीय काव्य की अपेक्षा शृंगार को अधिक स्थान दिया गया है।

— वनवास के समय विलास का प्रसंग । (सर्ग 9, 33) ; शूर्पणखा का वृत्तान्त (1)

उत्तरकालीन महाकाव्य—

पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर बहुत सी रचनाओं का उल्लेख मिलता है जो अधिकांश अप्रकाशित ही हैं। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उन परवर्ती काव्यों का कथानक की दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं है। वामन भट्टवाण (अभिनव बाणभट्ट) का रघुनाथचरित (30 सर्ग) 15 वीं शताब्दी का है; रामापाणिवाक्य सघवीय (20 सर्ग) अठ्ठारहवीं श० ई० की रचना है और अडयार लाइब्रेरी द्वारा प्रकाशित है। 1800 ई० के लगभग रघुनाथ उपाध्याय ने राम विजय महाकाव्य लिखा, जो 1932 ई० में वाराणसी में प्रकाशित भी हुआ था। त्रिवेन्द्रम, संस्कृत सीरीज में रघुवीरचरित (17 सर्ग) का रचयिता अज्ञात है। (2)

1. रामकथा—कामिल बुल्के—पृष्ठ—153

2. वही पृष्ठ—153







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

उदाहरणार्थ यहाँ पर चार अर्वाचीन रचनाओं की कथावस्तु का परिचय दिया जाता है।

जानकी —परिणय

चक्रकविकृत जानकी —परिणय (17वी० श० ई०) वाल्मीकीय बालकाण्ड के अनुसार दशरथ—यज्ञ से लेकर परशुराम —तेजोभंग तक की प्रधान घटनाओं का 8 सर्गों में वर्णन किया गया है। अहल्या के शिला बन जाने के उल्लेख के अतिरिक्त कथानक में कोई भी परिवर्तन नहीं किया गया है। छठें सर्ग में दशरथ की मिथिला — यात्रा के वर्णन में उनकी विलास क्रीडाओं का किंचित् विस्तार सहित चित्रण किया गया है। जानकी हरण तथा कंब कृत तमिल रामायण में भी दशरथ की इस यात्रा का विस्तृत वर्णन मिलता है। (1)

रामलिंगामृत—

रामलिंगामृत की रचना—निवासी अद्वैत नामक कवि द्वारा सन् 1608 ई० में हुई थी। हिन्दी साहित्य के दृष्टिकोण से इनका महत्व यह है कि इसकी रचना उस समय हुई थी कि जब गोस्वामी तुलसीदास वाराणसी में विद्यमान थे। अतः रामलिंगामृत की कथावस्तु अपेक्षाकृत विस्तार से दी जाती हैं। मंगलाचरण के पश्चात् गोकुल की दो गोपिकाओं का संवाद उद्धृत है। दोनों में से एक का जन्म रघुकुल में हुआ था, जिससे उसे रामकथा की विशेष जानकारी है, अपनी सखी के अनुरोध से वह रघुवंशीय गोपिका राम—चरित का वर्णन करती है। (1—24) जय—विजय भृगु द्वारा दिए हुए शाप के फलस्वरूप राक्षसयोनि प्राप्त कर रावण तथा कुम्भकर्ण बन जाते हैं। (2) प्रह्लाद के विभीषण बन जाने का भी उल्लेख है।

1. दे० सुशील कुमार दे(हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर पृ० 630) डॉ० आप्टेमल्लिनाथ को इसके रचयिता मानते हैं।
2. त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज (सन् 1913) में प्रकाशित।







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

इसके अनन्तर रावण तथा कुम्भकर्ण शिवाराधना और वरप्राप्ति तथा देवताओं द्वारा विष्णु से अवतार लेने की प्रार्थना का वर्णन मिलता है। (25—64)।

रामादि भाइयों का जन्म, जातकर्म, स्तनपान राम का अपनी माता को अपना विश्वरूप दिखलाना, बाललीला, वनक्रीडा, अध्ययन, यज्ञोपवीत—संस्कार तथा विश्वामित्र के राम और लक्ष्मण को ले जाने का वर्णन दोनों भाइयों का विश्वामित्र के साथ सीतास्वयंवर में पहुँचना, सीता—सखियों द्वारा राम के सौन्दर्य का वर्णन, राजाओं, देवताओं, तथा राक्षसों की उपस्थिति, रावण का धनुष चढ़ाने का प्रयत्न, राम द्वारा धनुर्भंग।

दशरथ के कौशल्यादि के साथ आने के बाद विवाहोत्सव का वर्णन दिया गया है। राम को देखने की स्त्रियों की उत्सुकता के वर्णन में कालिदास कवियों का अनुकरण किया गया है। उदाहरणार्थ—एक शार्दूविक्रीडित छन्द उद्धृत किया जाता है—

काचिन्मंगलघोषहृष्टहृदया गेहात्सखीसंवृता

व्यग्रा व्यस्तसमस्त भूषणगणान्सी घ्नंदधराहवगा।

सीताराममुखारविंद —ज— रसोन्मता गलन्मालती

केशे कंकतिका चलत्कुचयुगा द्वारो ध्वभागे स्थिता।।

इन्द्र आदि देवगण के आगमन तथा इन्द्र की आज्ञा से विश्वकर्मा द्वारा निर्मित एक दिव्य नगर का उल्लेख है, जिनमें लक्ष्मी सीता को रामावतार का रहस्य बताती है। (1—63) मिथिला से प्रस्थान तथा मार्ग में परशुराम तेजोभंग के वर्णन के बाद राम की अवस्था 15 वर्ष की तथा जानकी की 6 वर्ष की बताई जाती है, यद्यपि चौथे अध्याय में सीता की 16 वर्ष अवस्था का उल्लेख हुआ था। अनन्तर वाल्मीकि के अनुसार राम के निर्वासन का वर्णन किया गया है। (25—63)





...



इसमें भगवान माया— मनुष्य हरि (छन्द 4) के पंचवटी में निवास का वर्णन है, जहाँ खग, मृग, व्याघ्र आदि अपने 'स्वभाव, वैर, का परित्याग कर रहते थे (छन्द 5)।

शूर्पणखा के विरूपीकरण के उल्लेख के बाद नारद द्वारा रावण के पास जाकर सीता के सौन्दर्य के वर्णन की कथा मिलती है, जिसके फलस्वरूप रावण मारीच की सहायता से सीता का हरण करता है सीता की खोज के वर्णन में शिलामयी अहल्या का उद्धार और केवट के राम—चरण धोने के आग्रह की कथा दी गई हैं। कबंध वध के उल्लेख के बाद सीता को प्राप्त करने के लिए राम की शिव—पूजा का वर्णन किया गया है—

सीतासंगमनार्थाय रामो लिंगस्य पूजनं।

चक्रे तेन महादेवः सीताशुद्धि चकार ह॥

अन्त में वानरों से राम के सख्य करने का उल्लेख मिलता है।

इसमें हनुमान सीता के पास जाकर उनको एक अँगूठी के अतिरिक्त राम का एक पत्र देते हैं । लंकादहन के उल्लेख के बाद हनुमान राम को सीता का समाचार देते हैं अनन्तर अंगद के दूत कार्य का वर्णन किया गया है, जिसमें महानायक के रावण—अंगद संवाद का अनुकरण स्पष्ट है अन्त में सेतुबंध तथा विभीषणागमन का उल्लेख किया गया है।

इसमें राक्षसों की केलि के वर्णन के बाद अहीमहीरावण राम—लक्ष्मण को पाताल ले जाते हैं हनुमान मकरध्वज की सहायता से दोनों को छुड़ाते हैं।

सर्ग के अन्त में कुम्भकर्ण—वध , लक्ष्मण को शक्ति लगाने का तथा लक्ष्मण—इन्द्रजित युद्ध का उल्लेख मात्र मिलता है।

इस सर्ग में सुलोचना की कथा तथा युद्ध के लिए रावण के प्रस्थान का वर्णन मिलता है।







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

रणक्षेत्र में राम को देखने पर रावण का एक विस्तृत भाषण दिया गया है(1-35) जिसमें वह राम को राक्षस वंश का नाश करने के लिए विष्णु का अवतार मानता है , विष्णु द्वारा वध किये जाने के कारण अपने भाग्य की प्रशंसा करता है। राम द्वारा की हुई शिवपूजा को उनकी विजय का कारण मानता है और साथ साथ रामनाम के सामर्थ्य का वर्णन करता है, जिसके स्मरण मात्र करने से बानर सेना समुद्र को पार करने में समर्थ हो सकी।

अनन्तर राम रावण को अपनाशिव-रूप दिखलाते हैं तथा शिवलिंग का वर्णन करते हैं रावण के सर्वत्र राम के रूप को देखने का भी उल्लेख हुआ है (64)।

रावण के बध के बाद सीता की अग्निपरीक्षा का उल्लेख नहीं है, लेकिन रावण-वध को सुनकर सीता के आनन्द तथा मंदोदरी के विलाप का उल्लेख किया गया है, अनन्तर विभीषण के अभिषेक का वर्णन मिलता है।

प्रारम्भ में राम आदि की अयोध्या -यात्रा का और तदन्तर राम के आगमन से अयोध्यावासियों के आनन्द का वर्णन किया गया है। कैकेयी राम से मिलकर कहती है कि देवेन्द्र की प्रेरणा से मैंने आपको रावण का बध करने के लिए वन भेजा था। सर्ग के अन्त में राम का अभिषेक वर्णित है राम और सीता के संभोग वर्णन के बाद (1-20) प्रातः श्रृंगार, भोजन आदि का उल्लेख किया गया है। सभा में नारद राम की स्तुति करते हैं।

श्री राम जगदाधार ब्रह्मानन्द सुखप्रद।

त्वन्नामरणेनैव तरिष्ये भवसागरं॥

अन्त में गर्भवती सीता के दोहे का उल्लेख है—

38 छन्दों के इस सर्ग में (जिसका कोई नाम नहीं रखा गया है ) वाल्मीकि







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

आश्रम में कुश लव के जन्म और शिक्षा का वर्णन किया गया है (सीता परित्याग का उल्लेख नहीं है। ) नारद से समाचार पाकर राम सेना सहित आश्रम जाते हैं तथा युद्ध के बाद सीता और कुश —लव के साथ अयोध्या लौटते हैं। 1

इसमें सीता द्वारा कुम्भकर्ण के पुत्र के वध का वर्णन किया गया है । 2

इस सर्ग में श्रीरंग —मूर्ति की कथा के अतिरिक्त राम द्वारा उसके पूजन का वर्णन किया गया है। विशिष्ट की आज्ञा से राम द्वारा अश्वमेध—यज्ञ , जिसमें देवता आकर राम तथा सीता की स्तुति करते हैं (1—33) अनन्तर सरयू तीर्थ महात्म्य सहित राम—सीता और अयोध्या—समाज का परलोकगमन वर्णित हैं (34—56) । अन्त में अद्वैतमंजरी मिलती है, जिसमें जीव, ब्रह्म, ईश्वर, माया, आदि का निरूपण, किया गया है।

इसमें रामकथा नहीं मिलती। रामपूजा —विधि तथा रामकीर्ति के निरूपण के पश्चात् राम—शंकर की तथा राम—कृष्ण की अभिन्नता का प्रतिपादन किया गया है। अन्त में रचना काल (शक 1530) ग्रन्थकार (अद्वैत) आदि का उल्लेख है। 3

राघवोल्लास—

राघवोल्लास (4) महाकाव्य की रचना भी एक अद्वैत नामक सन्यासी द्वारा वाराणसी में ही हुई थी, संन्यास लेने से पूर्व कवि का नाम मुरारि था। (देव 12, 100 ) । सम्भव है यह रामलिंगामृत के रचयिता से अभिन्न है। इस महाकाव्य की हस्तलिपि लन्दन में सुरक्षित है। (3) इसके तीन प्रारम्भिक सर्ग अप्राप्त हैं। शेष नौ सर्गों में लगभग 1000 छन्द हैं। (प्रायः इन्द्रव्रजा)। लिपिक का नाम है मानसिंह कायस्थ तथा लिपि—काल सन् 1625 ई०। इस काव्य की विशेषता है ।

1. रामलिंगामृत — दे० आगे अनु० 746

2. वही— दे० आगे अनु० 64।

3. रामकथा —कामिल बुल्के —पृष्ठ —156

4. दे० राघ० प्रसाद पाण्डेय , तुलसीदास कालीन राघवोल्लास , काव्य राष्ट्रपति मैथलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ —पृ० —702







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

कवि की कोमल रामभक्ति जो इसे राम का सौन्दर्य बारम्बार अंकित करने के लिए प्रेरित करती है तथा रात की स्तुति प्रायः सब पात्रों द्वारा करवाती है। रामचरितमानस की भाँति मर्यादित श्रृंगार इस काव्य की एक अन्य विशेषता है— राम—सीता पूर्वानुराग का वर्णन करते हुए कहीं भी सीता का नखशिख वर्णन नहीं दिया गया है।

कथानक राम जन्म से प्रारम्भ होकर विवाह के पश्चात् अयोध्या में प्रत्यागमन पर समाप्त हो जाता है राम का जन्म , राम सौंदर्य वर्णन; चतुर्भुज —दर्शनं संक्षिप्त बाललीला विश्वामित्र द्वारा रामावतार की व्याख्या । दशरथ की मूर्च्छा ; राम द्वारा शरीर की नश्वरता का उपदेश। ताड़का , सुबाहु , मारीच, विश्वामित्र द्वारा राम—नाम महिमा का वर्णन पाषाणभूता अहिल्या के उद्धार की कथा अहल्या द्वारा राम की स्तुति करना और उसके बाद जनकपुर में आगमन का वर्णन, सीता का पूर्वानुराग करना (1) धनुर्भंग करना, उसके बाद राजा दशरथ का राजा जनक के द्वारा स्वागत करना। तत्पश्चात् राम—सीता तथा चारों भाइयों का विवाह होता है कौतुकलीला (सीता राम के ललाट पर केसर का तिलक लगाती है); विदाई , परशुराम का तेजोभंग ; अयोध्या में आगमन अयोध्या के नगरवासियों का अत्यधिक प्रसन्न होना। इसके बाद राघवोल्लास का कथानक समाप्त हो जाता है—

रामरहस्य अथवा रामचरित—

मोहन स्वामीकृत रामरहस्य अथवा रामचरित की एक हस्तलिपि लन्दन में सुरक्षित है। (2) इस रचना के तरह क्रीडोपकरणों की अधिकांश सामग्री ज्यों —की —त्यों अध्यात्म रामायण से उद्धृत की गयी

1. देव इण्डिया ऑफिस कैटलॉग , नं० —3915)।

2. राघवोल्लास — दे० आगे अनु० 403







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

है। द्वितीय उपकरण में सुमंत द्वारा स्वायंभू मनु तथा उसकी पत्नी की तपस्या का वर्णन मिलता है, जिसके फलस्वरूप वे तीन जन्मों में विष्णु को पुत्र के रूप में प्राप्त करने का वरदान पाते हैं। दोनों अब दशरथ कौशल्या हैं और आगे चलकर वासुदेव —देवकी तथा कलियुग में हरिव्रत देवप्रभा के रूप में जन्म लेंगे (1) सूर्यवंश —वर्णन से लेकर रामचन्द्र स्वर्गारोहण तक के इस कथानक में कहीं भी मौलिकता का राम नहीं है। विशेषता यह है कि विवाह के पश्चात् अयोध्या में पहुँचकर नवदम्पती का सम्भोग वर्णन के रूप में महानायक का समस्त द्वितीय अंक उद्धृत किया गया है। अंगद के कार्य वर्णन में भी महानायक से एक विस्तृत अंश ले लिया गया है।

(2)

1.रामरहस्य अथवा रामचरित के अंक 8, 4, 20 से लिया गया है।

1.लिपिकाल सन् 1750 ई०, दे० इण्डिया ऑफिस कैटलॉ नं० 3917

2. रामकथा —कामिल बुल्के —पृष्ठ —157







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

## रामकथा परक संस्कृत

### महाकाव्यों में साकेतसौरभम् का स्थान—

साकेतसौरभम् वस्तुतः रामायण, अध्यात्म रामायण तथा रामचरित मानस की कथावस्तु से अभिप्रेरित महाकाव्य है। रामकथा सम्बंधी महाकाव्यों में कथानक की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता हैं रामायण एवं रामकथा ने भारतीय जन-जीवन को इतना प्रभावित किया है कि कवित्व में गौरव-प्राप्ति के लिए मुख्य राम-कथा या उससे संबद्ध कथानक का आश्रय लेना आवश्यक सा हो गया है। वाल्मीकि की प्रौढ़ शैली एवं राम-कथा का समन्वय मणिकांचन —संयोग सा हो गया है अतः परवर्ती कवियों नाटककारों और चम्पूकारों ने रामायण को अपना उपजीव्य काव्य माना है तथा अपने दृष्टिकोण से सम्बद्ध अंशों का संकलन किया है। अनेक रामायण ग्रन्थ, महाकाव्य, नाटक, चम्पू, रामायण पर आश्रित हैं (1) अतएव कहा गया है—

(क) न ह्यन्योऽर्हति काव्यानां यशोभाग् राघवाद् ऋते (2)

(ख) मधुमयभणितीनां मार्गदर्शी महर्षिः। (3)

साकेतसौरभम् महाकाव्य में आर्यों का आचार— शास्त्र एवं धर्मशास्त्र हैं। यह मानव जीवन का सर्वांगीण आदर्श प्रस्तुत करता है। धार्मिक दृष्टि से प्राचीन संस्कृति , आचार, सत्य, धर्म, व्रत —पालन विविध यज्ञों का महत्व आदि का पूरा इतिहास प्रस्तुत करता हैं। सामाजिक दृष्टि से यह पति-पत्नी के संबंध , पिता-पुत्र के कर्तव्य गुरु शिष्य का पारस्परिक व्यवहार, भाई का भाई के प्रति कर्तव्य , व्यक्ति का समाज के प्रति उत्तरदायित्व , आदर्श पिता-माता पुत्र —भाई —पति एवं पत्नी का चित्रण

1. संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इति० —डॉ० कपिलदेव द्विवेदी पृ०—115

2. रामायण उत्तरकाण्ड —98—18

3. रामायण चम्पू —1/8







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

तथा आदर्श गृहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति करता है। इसमें पितृ भक्ति, पुत्र प्रेम, मातृ स्नेह एवं जन साधारण के प्रति सौहार्द का सुन्दर चित्रण हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से यह राम राज्य का आदर्श, पाप पर पुण्य की विजय, लोभ पर त्याग का प्राबल्य, अत्याचार और अनाचार पर सदाचार की विजय, वानरों में आर्य—संस्कृति का प्रसार यज्ञादि का महत्व, जीवन में नैतिकता, सत्यनिष्ठा और कर्तव्य के लिए बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता हैं। राजनीतिक दृष्टि से यह राजा के कर्तव्य एवं अधिकार राजा—प्रजा संबंध उच्च नागरिकता, उत्तराधिकार—विधान, शत्रु—संहार पाप विनाशन, सैन्य संचालन आदि विषयों पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता है। रामायण भारतीय सभ्यता, नगर, ग्रामादि—निर्माण, सेतुबन्ध, वर्णाश्रम व्यवस्था आदि सांस्कृतिक एवं सामाजिक विषयों पर प्रकाश डालने वाला प्रकाश—स्तम्भ हैं, जिसके प्रकाश में प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का साक्षात् दर्शन होता हैं।

काव्य का 'महान' रूप ही महाकाव्य कहलाता है। यह सर्गों में चलता है, जो न बहुत बड़ा है और न ही बहुत छोटा है। कवि भास्कराचार्य जी ने इस मूल कथा में कहीं कहीं पर मौलिक परिवर्तन किया है। कवि ने सभी संस्कृत महाकाव्य के अनुसार ही साकेतसौरभम् में सबसे प्रथम देवताओं को नमन किया है।

राम—साहित्य की दो अन्यन्त महत्वपूर्ण प्राचीन रचनाओं में भी वंशावली के विषय में एकरूपता नहीं हैं। वाल्मीकि की सूची के अनुसार 23 वाँ नाम दिलीप है, 26 वाँ रघु 38 वाँ अज तथा 39 वाँ दशरथ (दे० वालकाण्ड, सर्ग 70)। कालिदास के रघुवंश के अनुसार दिलीप, रघु, अज, और दशरथ में क्रमशः पिता—पुत्र का सम्बंध हैं। (1) साकेतसौरभम् में भी भागीरथी, दिलीप, रघु, अज, दशरथ को भी वंशानुगत सूर्यवंशी राजा बताया गया हैं।







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

वाल्मीकीय रामायण के उत्तरकाण्ड (सर्ग—30) के अनुसार भी अहल्या निर्दोष है। किन्तु बालकाण्ड सर्ग (48) में कहा गया है कि जिज्ञासा से प्रेरित होकर अहल्या ने इन्द्र को गौतम के वश में पहचानते हुए भी उनका प्रस्ताव स्वीकार किया था—

मुनि वेषं सहस्राक्षं विज्ञाय रघुनन्दन।

मतिं चकार दुर्मेधा देवराज कुतूहलात्॥

रघुवंश में अहल्या के शिला बनने का उल्लेख किया गया है। साकेतसौरभम् में अहल्या का राम द्वारा पाषाणी शिला से स्त्री के रूप में प्रकट होने का वर्णन किया है। (1—4)

वाल्मीकीय रामायण में बालकाण्ड में गौतम यह भी कहते हैं कि राम का आतिथ्य सत्कार करने के पश्चात् तुम पूर्ववत् अपना शरीर धारण कर मेरे पास आओगी अर्थात् अपने पूर्वरूप में मेरे साथ रहोगी—

स्वं वपुर्धारयिष्यसि (48, 32)।

सम्भवतः इस वाक्यांश के कारण यह धारणा उत्पन्न हुई कि अहल्या शापवश शिला बन गई थी, शाप का परिणाम पहले—पहल (रघुवंश) (11, 34) में पाया जाता है। आगे चलकर पाषाणभूता अहल्या का बहुत सी रचनाओं में उल्लेख मिलता है।

उदाहरणार्थ— जानकीहरण, (6, 14) उदारराघव (3, 29) राघवोल्लास काव्य (सर्ग 6) रामचरित मानस (210) गीतावली (1,57) आदि(1) उदारराघव (3, 29—49) के अनुसार राम के चरण—स्पर्श से पत्थर से स्त्री बनते देखकर विश्वामित्र और दोनों राजकुमार विस्मित हो गये। इस सर्ग में अहल्या अपनी कथा सुनाती, राम—सीता—विवाह की भविष्यवाणी करती



संस्कृत भाषा के अनेक नाम हैं जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं (३३-३४) जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं (३५) जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं (३६) जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं

जिनमें से कुछ नाम हैं



रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

और विश्वामित्र से अनुरोध करती है कि वह राम —लक्ष्मण को मिथिला ले जायें। गौतम अपनी पत्नी ग्रहण करते हैं और वे दोनों भी विश्वामित्र के साथ जनक की राजधानी जाते हैं। (1)

साकेतसौरभम् महाकाव्य में दशरथ के द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन किया गया है। वाल्मीकि रामायण में पहले दशरथ के अश्वमेध यज्ञ का वर्णन किया गया था, बाद में पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन भी जोड़ दिया गया है (दे० ऊपर अनु 333) रघुवंश , भट्टिकाव्य, जानकीहरण, अध्यात्मरामायण, रामचरितमानस आदि परवर्ती रामकथाओं में प्रायः पुत्रेष्टि यज्ञ का वर्णन किया गया है। जानकीहरण (4, 1-2) में दशरथ के पूर्ववर्ती असफल यज्ञों का भी उल्लेख है।

भट्टिकाव्य में दशरथ यज्ञ का वर्णन तो किया गया है लेकिन साकेतसौरभम् में वाल्मीकीय रामायण की भाँति किसी दिव्य पुरुष द्वारा दिए गये चरु का उल्लेख नहीं किया गया है, अपितु रानियां स्वयं यज्ञ की खीर (चरु) ग्रहण करती हैं। भट्टिकाव्य में रानियाँ यज्ञ के पश्चात् पायस् के स्थान पर हुतोच्छिष्ट का कुछ अंश ग्रहण करती हैं (दे० सर्ग 1)

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने राम जन्म का अत्यन्त काव्यमय वर्णन किया है। तटवर्ती महलों के बजते नगाड़े सरयू की लहरों में यूँ हुलास भर रहे थे कि उसे देखकर सातों कुल नदियाँ उस दिन दोपहरी में अत्यन्त दीन प्रतीत हो रही थी। (2) कालिदास जी ने रघुवंशम् में राम जन्म का अत्यन्त काव्यमय वर्णन किया है। बालक के तेज से सूतिका गृह के दीपकों की ज्योति मन्द पड़ गई थी तथा उस समय संसार के सारे दोष भाग गए और चारों ओर गुण ही गुण फैल गए मानों स्वर्ग भी विष्णु भगवान का अनुसरण करता हुआ पृथ्वी पर उतर आया हो (3) रामलिंगामृत के द्वितीय सर्ग में राम की बाललीला के अनन्तर उनकी

1.कामिल बुल्के— रामकथा —पृ०—244

2. नद्य सत्त दिने तस्मिन् मध्याह्ने दीनतां ययुः

नन्दितां सरयू वीक्ष्य नान्दीभिरस्तट सद्यनाम् (साकेत सौ० 1-29) पृ०— 10

3. अन्वागादिव हि स्वर्गो गगं गगं पुरुषोत्तमम् (रघुवंशम् —10-72)







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

वनक्रीडा का भी उल्लेख किया गया है। साकेतसौरभम् में राम की बाल क्रीडा का वर्णन है। सभी शास्त्रों—विधाओं में पारंगत हो चारों भाई विविध ज्ञान—विज्ञान का सम्यक् अध्ययन करके अयोध्या आये थे।

साकेतसौरभम् में धनुषभंग वर्णन है, लेकिन परशुराम के तेजोभंग का वर्णन नहीं किया गया है। जानकी परिणय तथा वाल्मीकीय रामायण में परशुराम तेजोभंग की घटनाओं का वर्णन किया गया है।

वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड तथा साकेतसौरभम् में धनुर्भंग के पश्चात् दशरथ को बुलाया जाता है वहाँ राम—सीता के अतिरिक्त अन्य तीनों भाइयों के विवाह सम्पन्न किये जाते हैं। भरत—माण्डवी , लक्ष्मण—ऊर्मिला, शत्रुघ्न एवं श्रुतकीर्ति वैवाहिक स्नेहपाश में आबध्य होते हैं। रामलिंगामृत में राम तथा लक्ष्मण मात्र के विवाह का वर्णन किया गया है। जानकीहरण में धनुर्भंग के बाद , किन्तु विवाह से पूर्व, सीता के विरह का वर्णन किया गया है (दे० सर्ग 7)।

राघवोल्लास काव्य के द्वादश सर्ग में स्वप्नदर्शन को सीता के पूर्वरंग का कारण माना गया है। “सीता सबेरे रोती—रोती जगकर रात में देखे स्वप्न को अपनी प्रिय सखी को सुनाती है— एक पुरुष रत्न मुझे स्वप्न में मिला था, कोमल स्वच्छ तुलसीदास की माला उसके गले में थी।... उसी समय जनक पुत्री ने कोलाहल सुना पूछा कि यह कैसा कोलाहल हो रहा है शीघ्र ही पता लगाकर एक मृगनयनी ने कहा— अरी विशाल भाल वाली जनक नन्दिनी , घर के भीतर क्यों छिपी हो, इधर गवाक्ष पर आकर देखो। एक पुरुष आ रहा है, उसका नाम राम है, अलौकिक सौन्दर्य समन्वित है सीता सखियों के साथ राम को देखती हैं। राम की रूप माधुरी पर मुग्ध होकर चेतना शून्य हो जाती है।..... अन्त में किसी प्रकार सीता होश में लायी जाती है। राम को देखने के लिए पुनः गवाक्ष पर जाना







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

चाहती है। सखियों के मना करने पर उत्तर देती है कि राम के दर्शन से तो शायद प्राण निकलें , किन्तु उनके वियोग से तो मरण निश्चित है—  
 “रामेक्षणं प्राणहरं कदाचित् ध्रुवं मृतिं दास्यति तद्वियोगः ।” (1)  
 साकेतसौरभम् में सीता-राम का पूर्वराम पुष्प वाटिका में होता है। “कमल जैसी मुखकान्ति , कान के छोर तक फैले नेत्र और हंसिनी की गति वाली मैथिली को देखते ही लक्ष्मण के ज्येष्ठ बन्धु का मन अनुराग —युक्त होने लगा। (2) साकेतसौरभम् के अनुसार कैकेयी ने अपने दो वरों के बल पर भरत के लिए राज्य तथा राम के लिए 14 वर्ष का वनवास दशरथ से माँग लिया था। अतः राम के निर्वासन का यह कारण सबसे प्राचीन और बाद में सबसे प्रचलित और प्रामाणिक माना गया है। उदारराघव मे दशरथ स्वयं लक्ष्मण से अनुरोध करते हैं कि विद्रोह कर राम को बलपूर्वक राजा बनाये— वीरोऽसि मौलेः सह लक्ष्मण त्वं रामं प्रतिष्ठापय राज्यपीठे। (3) भट्टिकाव्य में कैकेयी राम, लक्ष्मण तथा सीता का वनवास माँगती है (4) जानकीहरण में कैकेयी की प्रशंसा इसीलिए की गई है कि उनके दोष के कारण राक्षसों का नाश हुआ था— “यस्या दोषोदपि भुवनत्रस्य रक्षोभयनाशाय हेतुर्बभूव (5) ”

साकेतसौरभम् में मंथरा द्वारा कैकेयी के भड़काये जाने का उल्लेख किया गया है। राम के साथ लक्ष्मण भी वन जाने के लिए उद्यत हुए, पतिव्रता सीता वशिष्ठ के लाख मना करने पर भी वल्कल वस्त्र धारण कर साथ चलने लगी। पिता को बेहाल देख राज्य सम्पदा की चिन्ता न करते हुए राज महल तथा नगर छोड़कर वन चलने लगे। श्रृंगवेरपुर के केवट ने उनके चरण प्रक्षालन कर गंगा पार कराई। तीनों वन पथिकों ने त्रिवेणी

1. दे० राघवप्रसाद पाण्डेय , तुलसीदास कालीन राघवोल्लास काव्य, मैथिलीशरण गुप्त, अभिनन्दनग्रन्थ पृ०-707
2. कर्णान्तलोचनां गौरीभरविन्द निभाननाम् लक्ष्मणागमनां पश्यन् पिप्रिये लक्ष्मणग्रजः । साकेत सो० (1-48) पृ०-16
3. उदारराघव— 4, 105
4. भट्टिकाव्य — 3, 9
5. जानकीहरण — 1-42







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

संगम में स्नान कर अक्षय कीर्ति का वरदान प्राप्त किया। महर्षि भरद्वाज ने उन्हें संगम तीर्थ का महत्व बतलाया। वाल्मीकि जी ने दशों अवतारों का वर्णन करते हुए विष्णु के रामावतार को सर्वश्रेष्ठ बताया। दण्डकारण्य पहुँच कर सबसे पहले राम ने शरभङ्ग आश्रम से राक्षसों का विनाश प्रारम्भ किया और इस कृतकृत्यता से शरभङ्ग मुनि स्वयं संचित चिता पर बैठ गए इसका वर्णन कम्ब रामायण, अध्यात्मरामायण में मिलता है।

भट्टिकाव्य में राम-लक्ष्मण दोनों मिलकर राक्षसों का सामना करते हैं। रघुवंश (1) में खरसेना में जितने राक्षस थे राम ने उतने रूप धारण कर लिये। रामलिंगामृत में शूर्पणखा के विरूपीकरण के उल्लेख के बाद नारद द्वारा रावण के पास जाकर सीता के सौन्दर्य के वर्णन की कथा मिलती है। जिसके फलस्वरूप रावण मारीच की सहायता से सीता का हरण करता है। दशावतार में भी शूर्पणखा रावण के पास आकर अपने विरूपीकरण तथा खरदूषण-वध का वृत्तान्त सुनाती है। साकेतसौरभम् में पंचवटी में काम-भावना से आयी शूर्पणखा को लक्ष्मण ने नाक और कान विहीनकर दिया। प्रतिशोध लेने के लिए खर और दूषण भी उनके बाणों का शिकार हो गया। भ्राता रावण बहन के प्रतिशोध हेतु सीता हरणके लिए मायावी मारीच को स्वर्ण-मृग के लिए निर्देशित करता है। सुनहला मृग समझ कर दोनों भाई थोड़ी देर के लिए पंचवटी से बाहर चले गए। इसी क्षण साधु वेष में रावण ने सीता का हरण कर लिया घबराई सीता का विलाप, सीता का अन्वेषण राम विलाप, इसी क्रम में राम की भेंट खून से लथपथ जटायु से होती है गीधराज के समतुल्य पीडा का अनुभव कर राम उनसे सब पूछते हैं।

शबरी को समाधिस्थ रूप में प्रस्तुत किया गया है। भट्टिकाव्य (सर्ग 5) उदारराघव (सर्ग 8) के अनुसार भी सीता हरण के पश्चात ही जटायु का उल्लेख किया गया है। (2)

1. रघुवंशम् — 12, 45

2. कामिल बुल्के " रामकथा " पृ०— 337







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

भट्टिकाव्य में भी शबरी कथा का यही रूप मिलता है। राम शबरी की साधना के विषय में प्रश्न पूछते हैं तथा शबरी आदर पूर्वक उनका आतिथ्यसत्कार करके क्षत्रिय (1) के रूप में राम की बन्दना करती है तथा यह आश्वासन देकर अन्तर्धान हो जाती है कि सुगीव की सहायता से मैथिली के दर्शन शीघ्र ही प्राप्त होंगे। (2)

शबरी की कथा आदिवासियों में अपेक्षाकृत लोकप्रिय है। मध्यभारत के कोल अपने को शबरी के वंशज मानते हैं। उनमें प्रचलित दंतकथा इस प्रकार है। (3) वनवास के समय किसी दिन शबरी से राम—सीता लक्ष्मण की भेंट हुई। तीनों भूखे थे और शबरी ने उनको जंगली बेर खिलाकर तृप्त किया। इसके बाद वह प्रतिदिन अपने अतिथियों के लिए बेर बटोरने जाती थी। एक दिन उसने अन्यमनस्क होकर प्रत्येक फल का थोड़ा सा अंश खाकर अपनी टोकरी में रख लिया। घर पहुँचकर उसे पता चला कि मैंने क्या किया है और वह राम को जूठे बेर देने में हिचकती थी। राम ने अनुरोध किया और वह सीता के साथ फल खाने लगे। लक्ष्मण ने एक आदिवासी का जूठा भोजन स्पर्श करना अस्वीकार किया। इस पर एक बाण ने लक्ष्मण को आहत कर दिया और वह तब तक अस्वस्थ रहे, तब तक उन्होंने अपना मन नहीं बदल दिया। शबरी के घर से प्रस्थान करते समय राम ने उसको वर स्वरूप राज्य अथवा परिवार चुनने को कहा। शबरी ने परिवार चुन लिया और राम ने उसको आश्वासन दिया कि उसके असंख्य वंशजों को कभी भी भोजन अथवा कपड़े का अभाव नहीं होगा।

(4)

1. 'सर्वत्राऽऽख्यदनामम्' (6, 70) मनु के अनुसार "क्षत्रवंधुमनामयम्" 2, 127)।

2. भट्टिकाव्य — (सर्ग 6, 59, —71)

3. डब्ल्यू0 डी0 गिफिल्स : दि कोल ट्राइब ऑफ सेंट्रल इण्डिया (कलकत्ता, 1946); पृ0—207।

4. वही यह कथा शबरी के पति विषय में मौन है क— जाति में ऋषियों के सरोवर के अशुद्ध

हो जाने का वृत्तान्त भी प्रचलित है (देव0 गिफिल्स, पृ0 —9)







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

साकेतसौरभम् के अनुसार सुग्रीव राम-लक्ष्मण को देखकर तथा उनको बालि का गुप्तचर समझकर भयभीत हुआ और उसने पता लगाने के लिए हनुमान को भेजा, हनुमान भिक्षु का रूप धारण कर राम-लक्ष्मण के पास आये और उन्होंने अपना परिचय देकर कहा कि सुग्रीव आपसे मित्रता का संबंध स्थापित करना चाहता है। राम ने सुग्रीव की सहायता करने की प्रतिज्ञा की। बाद में हनुमान ने लक्ष्मण से सीता हरण की कथा सुनकर सुग्रीव की ओर से राम के लिए सहायता का आश्वासन दिया। बालि का बध हुआ सुग्रीव को निर्दोष कर सीता अन्वेषण हेतु वानर दलों को दसों दिशाओं में भेज दिया गया। राम की अँगूठी लेकर हनुमान दक्षिण दिशा में गए थे।

जानकी परिणय में बालि का वध द्वन्द्व युद्ध में ही माना गया है। अभिनन्दकृत रामचरित में राम अपनी मुद्रिका के अतिरिक्त सीता का नूपुर तथा स्तनोत्तरीय देते हैं, हनुमान को अपनी वंशावली भी सिखलाते हैं और सीता के रूप तथा उनके गुणों का वर्णन करते हैं। जानकी परिणय में हनुमान सीता के पास जाकर उनको एक अँगूठी के अतिरिक्त राम का एक पत्र देते हैं। साकेतसौरभम् में सीता को अशोक वाटिका में बन्दी बनाकर रावण ने रखा था। हनुमान समुद्र लंघन के समय क्रमशः मैनाक, सुरसा, से भेंट करते हैं और छाया नामक राक्षसी का बध कर लंका में प्रवेश करते हैं। इसके पश्चात् वे लंकिनी को परास्त करने एवं बिडाल का रूप धारण करने की घटना का भी वर्णन है।

अभिनन्दन कृत रामचरित (सर्ग 19) में इसका उल्लेख मिलता है कि हनुमान ने लंका में सीता की खोज करते समय कारावास में स्थित देवांगनाओं का विलाप सुना। (1) रंगनाथ रामायण (3, 11 और 3, 2) में भी रावण के कारागार में पड़ी हुई स्त्रियों का उल्लेख किया गया है। वाल्मीकीय उत्तराकाण्ड (सर्ग 24) में रावण द्वारा मानव देव, दानव — गन्धर्वादि कन्याओं का हरण वर्णित है।







रामकथा परक संस्कृत महाकाव्यों में साकेत सौरभम् की स्थिति—

साकेतसौरभम् में हनुमान सीताकी खोज करते समय विभीषण भवन में 'हे राम रघुनन्दन राघवेति' का निरन्तर कीर्तन सुना। विभीषण के बताने पर अशोक वाटिका में हनुमान ने सीता का दर्शन किया, हनुमान के क्रोध से रावण का मूर्च्छित होना, मन्दोदरी की शिव स्तुति से रावण का होश में आना और रावण का अगले एक माह बाद सीता बध की धमकी देना हनुमान द्वारा राम की मुद्रिका सीता को देना, मुद्रिका उठाते ही सीता का विलाप करना, लंका में आग लगाकर सीता से पहचान के रूप में चूडामणि प्राप्त करके हनुमान पुनः समुद्र लाँघकर वानरदल के पास पहुँच गए।

दशावतारचरित में सुग्रीव संख्य, वानरों, का प्रेषण, हनुमान का समुद्रलंघन, अशोक वाटिका भेजना, लंका दहन तक की कथा का वर्णन किया गया है। सेतुबन्ध तथा जानकी हरण के अनुकरण पर युद्ध के पूर्व राक्षस-राक्षसियों का संभोग श्रृंगार भी वर्णित है।

अभिनन्दन कृत रामचरित में सीता रावण को शाप देती है कि तुम सपरिवार मर जाओगे और लंका जला दी जायेगी (19,19)। इसी काव्य के (1) अनुसार सीता फाँसी लगा चुकी थी हनुमान ठीक समय पर पहुँचकर गाँठ खोल देते हैं। वाल्मीकि रामायण के अनुसार हनुमान ने अपनी जलती हुई पूँछ को समुद्र में डूबो कर बुझा लिया था। पउमचरियं (पर्व 53) में लंकादहन का उल्लेख नहीं है। इसके अनुसार इन्द्रजित हनुमान को बाँधकर लाया था। रावण ने उनको नगर में चारों ओर घुमाकर प्रजा को दिखलाने का आदेश दिया किन्तु हनुमान अपने बन्धनों को तोड़कर तथा लंका में बहुत से महल गिराकर राम के पास लौटें।

कुछ रामकथाओं में हनुमान स्वयं सुझाव देते हैं कि उनकी पूँछ जलाई जाये। आनन्द रामायण(2) के अनुसार रावण ने हनुमान की पूँछ काटकर

1. आनन्दरामायण — 1, 9, 177-184

2. कामिल बुल्के रामकथा (मुद्रिका) (415) Mahatma Jyoti Basha Yashwantrao Chavan Pratishthan, Mumbai. Digitized by eGangotri Gyaan Kosha, Karoundi, Jabalpur, MP Collection.







फूँकने का आदेश दिया था, किन्तु राक्षस के हथियार (कुल्हाड़ी , आरा आदि ) इसमें असमर्थ सिद्ध हुए। तब रावण ने हनुमान से पूछा कि तुम्हारी पूँछ नष्ट करने का क्याउपाय है और वानर ने उसे जलाने का परामर्श दिया। अनेक पाश्चात्य वृतान्त (नं० 1, 3, 8 और 13 ) भावार्थ रामायण (5, 18, और 33) सेंरीराम तथा रामकेर्ति आदि में इसी प्रसंग का उल्लेख है।

इस प्रकार रामकथा काव्यों में साकेत सौरभम् का समन्वय मणिकाञ्चन संयोग सा है। रामकथा सम्बंधी महाकाव्यों के कथानक की दृष्टि से साकेतसौरभम् में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता है।















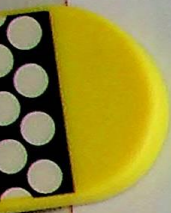
## तृतीय अध्याय

साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि  
से वस्तु विधान

(क) साकेतसौरभम् की विलक्षणता

(ख) महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान







## अध्याय-3 साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान-

### (क) साकेतसौरभम् की विलक्षणता-

संस्कृत साहित्य की यह एक अद्भूत विशेषता है कि वह मानवजाति के लिए कल्याण की भावना को अग्रसर करता है। संकीर्ण स्वार्थ को ही मानव जीवन का चरम पुरुषार्थ मानने वाले पाश्चात्य देशों के साहित्य में जो एकांगिता विद्यमान है, वह संस्कृत साहित्य को स्पर्श नहीं करती। कारण इसका स्पष्ट है साहित्य संस्कृति का अग्रदूत है। साहित्य संस्कृति का वाहन है। समाज की भावना को दर्पणवत् प्रतिबिम्बित करने वाला साहित्य कितना भी आदर्शवादी हो, यथार्थता का चित्रण किये बिना नहीं रह सकता। उसकी व्याप्ति राष्ट्र की परिधि के द्वारा नियंत्रित होती है। वह उस देश के प्राणियों में परिव्याप्त भावना को सर्वथा उल्लंघन करने की क्षमता नहीं रखता। पश्चिम के देश संकीर्ण राष्ट्रीयता की भावना से जकड़े हुए हैं। फलतः उनके साहित्य में उस संकीर्णता का ही परिचय हमें पदे-पदे मिलता है। वहाँ के साहित्यिक अपने राष्ट्र की चहारदीवारी के भीतर अपने को सीमित रखते हैं। इसलिए उनकी वाणी राष्ट्रीयता के परिवृंहण में लगी रहती है। इससे विपरीत संस्कृत के कविजन उदारता का आश्रय लेकर संकीर्णता को अपने पास फटकने नहीं देते। (1)

फलतः संस्कृत का साहित्य विश्वबन्धुत्व की भावना से सर्वथा परिव्यापत है।

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी भारतीय संस्कृति के हृदय थे। उनकी कविता में भारतीय सभ्यता झलकती है, उनके काव्य रचनाओं में हमारी संस्कृति







साकेत सौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

विश्व में रंगमंच पर अपना भव्य रूप दिखलाती है। इनकी वाणी राष्ट्रीय भाव भावना से ओत-प्रोत है। आज भी हम इस महाकवि की वाणी से स्फूर्ति तथा प्रेरणा पाकर अपने समाज को सुधार सकते हैं तथा अपना वैयक्तिक कल्याण सम्पन्न कर सकते हैं। राष्ट्रमंगल तथा विश्वकल्याण का मञ्जुल सामरस्य त्रिपाठी जी के काव्यों में दृष्टिगत होता हैं। इस महाकवि की वाणी में जिस प्रकार आदिकवि वाल्मीकि की रसमयी धारा प्रवाहित होती है उसी प्रकार उपनिषदों तथा गीता का अध्यात्म भी मञ्जुरूप में अपनी अभिव्यक्ति पा रहा है। भारतीय ऋषियों के द्वारा प्रचारित चिरन्तन तथ्यों को मनोभिराम शब्दों में भारतीय जनता के हृदय में उतारने का काम त्रिपाठी जी की कविता ने सुचारु रूप से किया कविता का प्रणयन मानव-हृदय की शाश्वत प्रवृत्तियों तथा भावों का आलम्बन कर दिया गया है।

यही कारण है कि इनके भीतर ऐसी उदात्त भावना विद्यमान है जो भारतीयों को ही नहीं, प्रत्युत् मानव मात्र को सदा प्रेरणा तथा स्फूर्ति देती रहेगी। इस भारतीय कवि की वाणी में इतना रस भरा हुआ है, इतना जोश भरा हुआ है कि सहस्रों वर्षों के बाद भी इनकी कवित्व में किसी प्रकार का फीकापन नहीं उत्पन्न होगा। उसकी मधुरिमा आज भी उसी प्रकार भावुकों के हृदय को रसमय करती हैं जिस प्रकार उसने अपनी उत्पत्ति के प्रथम क्षण में किया था। वैदिक धर्म तथा संस्कृति का भव्य रूप इन काव्यों में मधुर शब्दों में उपदिष्ट हैं। आज के युग में डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी का संस्कृत साहित्य के प्रति सन्देश बड़ा ही भव्य तथा ग्राह्य है।

साकेतसौरभम् में कवि राम राज्य के रूप में आदर्श राज्य की कल्पना करता है (1) वहाँ न घरों में ताले हैं, न भिक्षुक, न वर्ग भेद, रोगीं







साकेत सौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अर्थात् राज्य में सबको समान अवसर मिलता है किसी को उन्नति से वञ्चित नहीं रखा जाता, राज्य में सर्वत्र सुख शान्ति हैं। न न्यायालय है न कारागार है। सर्वत्र साम्य की स्थिति है। (1) प्रथम सर्ग में कवि राम की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि प्रस्तुत करते हैं (2) इसके कवि की ऐतिहासिक योजना का पता चलता है। कवि रावण की भी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। (3)

इस कृति में वाल्मीकि एवं परवर्ती रचनाकारों में राजा दशरथ की वत्सल चेतना का संक्रमण माना जाता है—

श्रवणस्य पितुः शापात् किमु राममनुद्रुताः

कोसलेशस्य वै प्राणा वाल्मीकिश्वासमाविशन् ।

कौञ्चघातं पुरो दृष्ट्वा क्षणसाधारणीकृतः

रघुवंशरहस्यानां विज्ञः प्राचेतसोऽभवत् ॥ (4)

प्रथम सर्ग में वेद इत्यादि विद्याओं का वर्णन प्रस्तुत है—

षडङ्गवलितं वेदं धर्मशास्त्रं पुराणकम्

मीमासां तर्कशास्त्रञ्च कृत्स्नमध्यापयत् सुधीः ॥

आयुर्वेदे धनुर्वेदे गान्धर्वे किञ्च वास्तुनि

आचार्यश्चतुरश्चक्रे चतुराँश्चतुरोऽचिरम् ॥ (5)

1. वही — 8-54 —60

2. वही— 1/4-24

3. वही — 5/1, 4

4. साकेत सौ0 —2/45-46

5. वही— 1/35, 36







साकेत सौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

(1) चिरकाल से रामलीलाओं का मंचन—

कवि ने अपने काव्य में प्रस्तुत श्लोक के माध्यम से यह बताया है कि इस पृथ्वी तल पर प्राचीन समय से ही रामलीलाएँ मञ्चित की जा रही हैं। राम की लीलाएं सुन्दर शील, समृद्धि और संस्कृति से संवलित चेतना की सृष्टि करती है। सहृदयों का मन लुभाकर अन्तःकरण में आनन्द की वृष्टि करती है।

चारुशील चिरं श्रीला चिन्दुन्मीला महीतले  
मनः कीला विपन्नील रामलीला विराजते ॥ (1)

महर्षियों द्वारा सिद्ध दिव्य मंत्र प्राप्त करना—

राम, लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न सहित चारों भाईयों को उनके मनीषी गुरु वशिष्ठ ने सिद्ध किए गए दिव्य मन्त्र भी उन्हें ऐसे सहजतापूर्वक दिए, जैसे एक अरसे से गुप्त खजानों की संजोई गई चाभी सौंप दी हो—

मन्त्रग्रामं ददौ तेभ्यो दृष्टपूर्वं महर्षिभिः

चिराय गुप्तकोषाय सञ्चितं कृञ्चिकामिव ॥ (2)

शबरी द्वारा राम की चरण वन्दना करना —

शबरी पूर्व जन्म की शापित स्त्री थी, जब राम के द्वारा उसका उद्धार होता है तो वह राम के चरण-कमल की वन्दना करते हुए कहते हैं कि —शंकर के साथ कुबेर, विष्णु और ब्रह्मा द्वारा सेवित, सद्गुणों की सर्वाधिक सुरभि बिखेरने वाले एवं समूची सृष्टि के कल्पवृक्ष —स्वरूप राम का मैं अभिनन्दन करती हूँ।



सर्वप्रथम यह कि प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

कि प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

(1) प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

(2) प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण

प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण  
प्रमाण के द्वारा प्रमाणित कि प्रमाण



साकेत सौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

आकल्पकल्पतरु —राघवपादपद्यं

सत्र्यक्षयक्षपति —विष्णुविरञ्चिसेव्यम्

वन्देय देयगुरु सद्गुणसौरभस्य

योषाऽपि शापितचरी तदिदं न्यगादीत् ॥ (1)

सीता का राम के प्रति पूर्वानुराग—

साकेतसौरभम् में सीता के रूप सौन्दर्य और राम के प्रति पूर्वानुराग का वर्णन करते हुए कहते हैं कि धन्य है निमिकुल के राजाओं द्वारा शासित मिथिला की वह पावन भूमि जहाँ की पुष्पवाटिका भी सीता की नेत्र —पुतलियों से आकर्षित नीलम सदृश राम की उपस्थिति से पवित्र हो चुका है। जानकीहरण (सर्ग 3) और महानाटक (अंक 2) में विवाह के उपरान्त राम और सीता के संभोग का वर्णन किया गया है। (2)

सीता के रूप सौन्दर्य का वर्णन—

साकेतसौरभम् में कवि कल्पना के अनुसार सीता के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि साकेतसौरभम् के इस काव्य मन्दिर की पीठ स्थली राम तथा जानकी का पावन चरित्र हैं। जनकनन्दिनी जानकी का नाम ज्यों ही हमारे श्रवण को रसासिक्त बनाता है, त्यों ही हमारे लोचनों के सामने आलोक सामान्य पतिव्रत की मंजुल मूर्ति झूलने लगती है। इनके नाम मात्र से हमारा हृदय आनन्द विभोर हो उठता है। सीता के सौन्दर्य की स्फूर्ति में सर्वत्र उदात्तता स्वाभाविक रूप से विराजती है। सीता शोभन गुणों की भव्य पुञ्ज है। राम—जानकी किसी



संस्कृत भाषा में जो कि अनेकानेक ग्रन्थों में मिलती हैं।

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

(१) संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह

संस्कृत भाषा - व्याकरण-संग्रह



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अतीत युग की स्मृति न रहकर वर्तमान काल के जीवन्त प्राणी के रूप में परिणत हो गये हैं।

किञ्चिदन्मीलितैः केसरैरञ्चितं

नेत्रकल्पं भवेत् कोरकं कोरकम्

स्फोटपूर्वक्षणे तच्च वै दन्तुरं

पाटलाभं वहेद् दोरकं दोरकम्।

किन्तु तत्रास्ति नासौ पिपासा मनाग्

या प्रियालोकनात् क्षीयता वा न वा

पुष्पभारेण नम्रा लता माधवी

तादृशी भूतले वर्ततां वा न वा ॥ (1)

प्रकृति वर्णन—

साकेत सौरभम् में डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने प्रकृति की मनोहारी छटा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि उषा काल आते ही उस की प्रतिच्छवि बने नन्हें —नन्हें पक्षी चारों दिशाओं में उड़ने लगे और जलज समूह विकसित करने वाला जादूगर, भ्रमर—पंक्तियों की क्रीडा का नाट्य—निर्देशक और पौधों, झाड़ियों तथा जंगलों को सुगन्ध से नहलाता गन्धी बनकर तेज हवा का झोंका हर ओर चल चल पड़ा।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जलजपुञ्जविजृम्भणमायिका

मधुकरावलिकेलिनिदेशिका:

परिमलस्नपितारिवलपादप—

क्षुपवनाः पवनाः परितो ववुः ॥ (1)

सीता का बधु रूप में प्रवेश—

साकेतसौरभम् में कवि इस श्लोक में कहते हैं कि जब सीता जनकपुरी से वधू के रूप में अयोध्या आयी है तब से जनकपुरी सूनी हो गयी और वहाँ के लोग उदास रहने लगे हैं। किन्तु नित्य प्रसन्न रहने वाली सीता जब से बहू बनकर अयोध्या पहुँची है, अयोध्या नगरी की कान्ति बढ़ गयी है। और अयोध्या के सभी लोगो में प्रसन्नता भरी हुई है।

मिथिला शिथिला जाता पूरयोध्या प्रकाशिता

इतः सीता ततो नीता यतः प्रीता बधूत्तमा ॥ (2)

राम का राज्याभिषेक—

राम के राज्याभिषेक के समय उनके सौन्दर्य माता कौशल्या और पिता दशरथ के यशोगान का भी वर्णन किया गया है। कवि कहते हैं कि राम की माता कौशल्या अपने पुत्र के राज्याभिषेक के समय अत्यन्त प्रसन्नता की अनुभूति कर रही है। और पिता दशरथ की







~~साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—~~

यशोगाथाएं चहुँदिशाएं गा रही हैं, और सारी अयोध्या नगरी अपने राजा राम की कीर्ति कौमुदी को दशरथ से अधिक सर्वोत्तम समझते हुए अत्यन्त प्रसन्न है।

जानकी का कौशल्यातुल्या

दशरथतातसुकीर्तिरतुल्या

उभौ वर्धते पुष्पबले

रामो भूमितले पुण्यो भवतु राजा रामो भूमितले ।

रामो भूमितले भव्यो भवतु राजा, रामो भूमितले ॥(1)

सीता का योगिनी वेश—

कवि ने वन जाते समय सीता के योगिनी वेश का बड़ा ही अद्भूत वर्णन किये है वे कहते हैं कि सीता माता जब वल्कल वस्त्र धारण कर लेती है और वन जाने को तैयार हो जाती है तो सीता के रूप सौन्दर्य के सम्मुख, लक्ष्मी पार्वती तथा सरस्वती देवियाँ तुच्छ सी प्रतीत हो रही थी।

वनाय भूमिजा सज्जा योगिनीभूयभामिनी

भवानीं चक्रिणों भार्यामधश्चक्रे च भारतीम् ॥ (2)

अनुज का भ्राता प्रेम—

साकेतसौरभम् में कवि के कथनानुसार लक्ष्मण और राम के प्रेम का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जिस प्रकार नदी का जल







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

सूख जाने पर मछलियाँ नहीं रह सकती उसी प्रकार अयोध्या नगरी में राम के बिना लक्ष्मण जीवित नहीं रह सकते—

अपि जीवेच्चिरं मीनो बिना नीरेण —पल्वले

साकेते न क्षणं जीवेद् बिना रामेण लक्ष्मणः ॥ (1)

मानवता की कसौटी —

भास्कराचार्य त्रिपाठी की दृष्टि में 'चरित्र' ही मानवता की कसौटी है, चरित्र से युक्त मनुष्य की खोज तथा उसका विशद वर्णन ही साकेतसौरभम् का मुख्य उद्देश्य हैं। वाल्मीकि ने रामायण में महर्षि नारद से यही जिज्ञासा की है — "चारित्र्येण च को युक्तः?"

चरित्र ही मानव को देवता बनाता है। इस चरित्र का पूर्ण विकास मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र में दृष्टिगोचर होता है रामचरित्र ही आर्यचरित्र का आदर्श है और वह मानवता की चरम अभिव्यक्ति है। राम में मानसिक विकास की ही पूर्णता लक्षित नहीं होती, अपितु शारीरिक सौन्दर्य का भी मंजुल पर्यावसान उनमें उपलब्ध होता है। राम में धैर्य का चूडान्त दृष्टान्त हमें मिलता है। साधारण मनुष्य का जीवन साफल्यभूत राज्य से ही बहिर्भूत होने पर कितना व्यथित तथा आर्त होता है। यह अनुभव से हमें भली-भाँति पता चलता है, बल्कि राम के ऊपर इस निर्मम घटना का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। वे महनीय हिमालय के समान अडिग तथा अडोल खड़े होकर विपत्ति के दुर्दान्त तरंगों को अपने विशाल वक्षस्थल के ऊपर सहते हैं, और उनके चित्त में किसी प्रकार का विकार लक्षित नहीं होता। इसी निष्ठा 'सत्य और व्रत के मार्ग में भटकता देखकर व्याकुल







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

ग्रामवासियों ने अपने —अपने हृदय में बसा लिया। राम निष्ठा, सत्य और व्रत की साक्षात् मूर्ति है। इनका मन बहुत ही निर्मल है, वनवास के समय में भी विकसित कुन्द पुष्पों सी मनहर मुस्कान से युक्त हुआ करते थे—

“पथि निष्ठायुतं सत्य व्रत दृष्ट्वा च विद्रुतम्

स्वं स्वं हृदयमानिन्युर्विकला ग्रामवासिनः ॥

नवदूर्वादलश्यामं रामं कन्दर्पसुन्दरम्

चारुकुन्दस्मितं कृच्छे पश्यन्तो विस्मिता जनाः ॥ (1)

त्रिवेणी में स्नान करके अक्षय कीर्ति प्राप्त करना—

राम लक्ष्मण एवं सीता वन जाते समय त्रिवेणी संगम में स्नान करते हैं। कवि ने त्रिवेणी का सुमनोरम वर्णन करते हुये कहते हैं कि तीनों वन पथिकों ने पक्षियों से खचाखच भरे वट वृक्ष की टपकती दूधियाँ बूंदों के साथ त्रिवेणी संगम में स्थान कर अक्षय कीर्ति का वर प्राप्त किये इसलिए जो भी जन त्रिवेणी में स्नान करता है वह अक्षय कीर्ति का वरदान प्राप्त करता है। तीनों वन पथिकों ने त्रिवेणी में स्नान करने के उपरान्त भरद्वाज आश्रम पहुँचते हैं। आश्रम में सप्तर्षि के रूप में प्रतिष्ठित तथा राम के दर्शन हेतु चातक व्रत रखने वाले महर्षि भरद्वाज ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक उन्हें संगम—तीर्थ का महात्म्य बतलाते हैं।

सप्तर्षिसम्मतः प्रीतो रामार्थे चातकव्रतः

सरित्सङ्गममाहात्म्यं भरद्वाजो न्यवेदयत् ॥



— १०१ —

एक ही बात है कि जिसने इस विषय पर विचार किया है, उसे यह बात पता चलती है कि यह बात सच है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

॥ मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है ॥

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

(१) ॥ मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है ॥

— १०२ —

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है।

॥ मनुष्य की प्रकृति में जो कुछ है, वह सब उसी प्रकृति का ही अंग है ॥



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

त्रयस्ते खगसंकीर्ण —वटदुग्ध कणैः समम्

त्रिवेणी स्नातकाः प्रायुरक्षयं यशसोवरम् ॥ (1)

विष्णु के अंशावतार—

रघुकुलभूषण भगवान् श्री रामचन्द्र जी के समान मर्यादारक्षक आज तक दूसरा कोई नहीं हुआ — यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं है। श्री राम साक्षात् पूर्ण ब्रह्म परमात्मा थे। वे धर्म की रक्षा और लोकों के उद्धार के लिए ही अवतीर्ण हुए थे। सम्पूर्ण जगत् के अभिष्ट मनोरथों को सिद्ध करने वाले ब्रह्मा विष्णु और महेश आदि देवता जिनके अभिन्न अंशमात्र हैं, उन परम विशुद्ध सच्चिदानन्दमय परमात्मदेव श्री रामचन्द्र जी को मैं नमस्कार करती हूँ जिन्होंने सदा सबके सामने अपने को एक सदाचारी आदर्श मनुष्य ही सिद्ध करने की चेष्टा की है। शेषनाग की कुण्डली पर सुखपूर्वक शयन करने वाले भगवान् विष्णु कोई और नहीं आप ही हैं। आज कल लक्ष्मी की सेवा प्राप्त करते हुए आप क्षीरसागर में विश्राम नहीं कर रहे हैं। आपने तो पृथ्वी का भार दूर करने के लिए वन-वन भटकते नीलमेघ सी मानव काया धारण कर ली है और मीन का अवतार लेकर आपने जो वैदिक वाङ्मय डूबने से बचा लिया, उसी से हमारी भारतीय संस्कृति आज भी विश्व में जीवन्त है। कच्छप अवतार लेकर अपनी पीठ पर दसों दिशाओं में फैलें भूगोल की संस्कृति सुरक्षित करते हैं।

वासुर्वासुकि —तल्पवेल्लिततनुर्नान्योऽस्ति मान्यः स्वयं

क्षीरोदन्वति सेवितः कमलया नैवाद्य विश्राम्यति

भूभारं भवताऽचिरं तिरयितुं कांतारसञ्चारिणी

स्वीचक्रे चलदभ्रविभ्रमवती सेयं तनुर्मानवी ॥ (2)

राम में धीरोदात्त नायक का गुण—

साकेत सौरभम् महाकाव्य के नायक आराध्य राम है।

1. वही —2/ 35, 36

2. साकेत सौ० — 2/ 48— 52







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

इनमें नायकोचित समस्त गुण सन्निहित है इनमें धीरोदत्त नायक के सभी गुण स्पष्ट प्रतीत होते हैं। राम एक दिव्य पात्र है। राम में विनम्रता कूट—कूट कर भरी हुई है। इसी विनम्रता से उन्होंने विवाहोपरान्त समस्त जनकपुरी को स्नेह से उल्लसित किया एवं परशुराम की कीर्ति को धूमिल कर दिया—

कृता परिणयोल्लासे मिथिला स्नेहपिच्छिला

भार्गवी जटिला कीर्तिः किञ्च रामेण पाङ्कला ।।

(साकेत सौ०—१—७०)

राम का उदात्त व्यक्तित्व—

राम देखने में स्वस्थ सुन्दर एवम् उनके उदात्त व्यक्तित्व से सभी लोग बहुत प्रभावित थे, एक मुस्कान से ही समस्त शत्रुओं का वैर भाव समाप्त कर देते थे—

चिदारामोऽभिरामोऽभूत् — परामर्षविरामकृत्

रामणीयकवान् रामो रमारामो निरामयः (१)

साकेतसौरभम् में डॉ० त्रिपाठी ने चित्रकूट के विषय में अद्वितीय वर्णन करते हैं कि जिस चित्रकूट नगरी में महर्षि अत्रिको वैदिक सूक्तों का साक्षात्कार होता है। और भरत ने राज्य संचालन के लिए राम से पादुकाएं प्राप्त की थी और इसी चित्रकूट में निन्दनीय आचरण वाले इन्द्र के पुत्र जयन्त को एक आँख फूटने का अभिशाप प्राप्त हुआ था। यहीं पर महर्षि अत्रि के द्वारा राम को दिव्य मंत्र— समूह और अनसूया ने सीता को अलौकिक अङ्गराग रूपी कवच प्रदान किए।



...  
...  
...  
...  
...

...

...

(...-...-...)

...

...  
...  
...  
...

...

(1) ...

...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

चित्रकूट त्रयीमन्त्रिर्भरतः पादुकाभरम् ।

परमेकाक्षतां प्राप सहस्राक्षसुतोऽधमः ॥

प्रदीयते स्म रामाय दिव्यमन्त्रप्रजोऽत्रिणा

अङ्गरागमयं वर्म सीतायै चानसूयया ॥ (1)

जब भरत को अयोध्या का राजा बनाया गया तो वह चित्रकूट नगरी में जाकर राम से उनकी चरण पादुका ले आते हैं राज्य का कार्यभार भरत सँभालते हैं। लेकिन राज्य सिंहासन पर श्रीराम की चरणपादुका ही रखी रहती है और जंगल में पैदल टहलते हुए भी श्री राम अपने चरणपादुका से कोशल राज्य और नाम के दोनों अक्षरों से विश्व का परिपालन करते हैं। शरभङ्ग आश्रम में यज्ञ प्रारम्भ करने के समय महर्षियों को बेबस रुदन करते देखकर राम ने राक्षसों का विनाश करना प्रारम्भ कर दिया।

विपिने पदसञ्चारी पादुकाभ्यां स कोशलम्

पुण्यनामाक्षराभ्याञ्च पालयामास भूतलम् ॥ 7 ॥

शरभङ्गाश्रमे रामो महर्षीन् यज्ञसंक्रमे

अवशं रुदतो दृष्ट्वा रक्षोनाशं प्रचक्रमे ॥ 8 ॥ (2)

वन्य क्षेत्र का रमणीय वर्णन —

साकेतसौरभम् में डॉ० त्रिपाठी जी ने कहा है कि वन्यक्षेत्र में मंदिरों की सारी पुजारिनें अत्यन्त सुशील होती हैं अपने स्वल्प श्रृंगार के कारण वह अत्यन्त रमणीय प्रतीत हो रही है। इन तरुणियों की सुन्दरता उसी प्रकार प्रभावित हैं जैसे कि देवी इन्द्राणी, रति और लक्ष्मी ने भी यहीं हाव-भाव के प्रशिक्षण प्राप्त किये होंगे। इस वन्य कन्दरा गृह में बड़े श्रेष्ठ तपस्वी महात्मा रहते हैं। उनमें से कोई दूध पीता है, कोई फेन







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

पीता है, कोई मठा पीकर और कोई पानी पीकर जीवित रहते हैं। उन्होंने जीवन में कभी सुख की कामना नहीं की है। ऐसे लोगो के घर—आँगन में प्रभु—दर्शन पाकर आज अत्यन्त आह्लादित है—

‘इमा अकृत्रिमाः सविभ्रमाः स्वयंप्रसाधिकाः

सुशीलताऽनुरञ्जिताः समा अरण्य राधिकाः ।

शची रती रमेह वै प्रशिक्षितानि लेभिरे

इहाद्रिवासिनः परं प्रमोदमाशु लेभिरे ॥13॥

ऋषिव्रजो दरीगृहे विराजते परन्तपः

स दुग्धपः स फेनपः स तक्रमः स नीरपः ।

इमे समे स्वजीवने सुखस्पृहां न तेनिरे

इहाद्रिवासिनः परं प्रमोदमाशु लेभिरे ॥ (1)

राम जी जब जंगल में आये तो लगता है कि अधजले जंगल पर बादलों की फुहार पड़ रही है, बर्फीले हेमन्त में गर्मी की धूप छिटक आई है या उफनते (विपत्ति) सागर को पार करने का बेडा मिल गया है। देवी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ आप सदा के लिए हमारे हृदय मंदिर में प्रतिष्ठित हो गए हैं सारे दण्डकवासी अपने आँगन में प्रभु—दर्शन पाकर आज अत्यन्त आह्लादित हैं।

उपेत्य लक्ष्यते नु मेघसन्निभो दवान्तरे  
हिमे तपः सदातपः त्लवो विलोलसागरे ।  
विदेहजाऽनुजान्वितो भवान्वसेदुरोऽजिरे  
इहाद्रिवासिनः परं प्रमोदमाशु लेभिरे ॥ (2)

2. वही— 3/13, 14

3. वही— —3/19







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम के भिन्न —भिन्न आश्रमों में जाकर तपस्वियों से मिलने के वृत्तान्तों का इतना विकास हुआ है कि वाल्मीकि रामायण में राम का सत्कार केवल अतिथि के रूप में किया जाता है।

वन में राम के रक्षार्थ लक्ष्मण का वर्णन—

साकेतसौरभम् में राम के रक्षार्थ वन में आये हुए लक्ष्मण की आँखों की भौंहे तनी रहती है। लक्ष्मण की तनी बरौनियों वाले शुभदर्शन नेत्र राम के रक्षार्थ एक बार खुले तो पलभर पलक झपकने को भी बन्द नहीं हुए। उसी प्रकार जैसे की भुसुण्डि —नामक श्यामवर्णी काक मुनि भी राम रक्षार्थ हेतु 14 वर्षों तक नहीं सोये थे।

कानने राम रक्षायां कीर्णे लक्ष्मणचक्षुषी

पक्ष्मले पुण्यलक्ष्मी के संक्षेप नेयतुः क्षणम् ॥

रामपार्श्वचरो धन्यो भुसुण्डिः श्यामवायसः

चतुर्दशसमा योऽसौ सौमित्ररिव नास्वपत् ॥ (1)

शूर्पणखा के चरित्र वर्णन

साकेतसौरभम् में पंचवटी की कुटी में राम लक्ष्मण और सीता को बैठे देखकर शूर्पणखा काम मोह से विवश होकर सीता के ऊपर आक्रमण करती है। तभी राम की सहमति प्राप्त करके लक्ष्मण द्वारा शूर्पणखा का कनकटी और नकटी बना दी जाती है। कवि ने साकेत सौरभम् में कहा कि प्रस्तावमें सफल और सन्तुष्ट हुई नारी नारायणी बन







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जाती है। वही कहीं निष्फल हुई तो सर्वनाशके लिए उद्यत क्रुद्ध शूर्पणखा बन जाती है। जिस प्रकार शूर्पणखा स्वयं अपने कर्मों के कारण ही खर दूषण जैसे भाईयों को राम के लपट उगलते वाणों में स्वाहा कर दिया ।

सतृषा स्मरपाशानामवशा रावणस्वसा

सौमित्रिणा रुषा कृतकर्णनासा कृताऽञ्जना ।।

प्रस्तावे सफला नारी तुष्टा नारायणी भवेत्

कथञ्चिद् विफला सैव रुष्टा शूर्पणाखायते ।।

शरज्वालासु रामस्य महासेनौ स्वबान्धवौ

परिदेवनभग्ना सा जुहाव खरदूषणौ ।। (1)

मारीचि का स्वर्णमृग रूपी वर्णन—

दशमुख वाले रावण ने भाई मारीच को राम से प्रतिशोध लेने के लिए सीता हरण करने के लिए एक मायावी स्वर्ण मृग बनने के लिए निर्देशित करते हैं कि सीता को अपने यौवनारम्भ का संकेत देना, कजरारी रेखाओं से अंकित हिरन के लुभावने नेत्र दूर से ही देखकर वह तुम्हारा सुनहला शरीर चुपचाप प्यासे नयनों से निहारेगी। मित्र! उसके सौन्दर्य —स्नेह से मुग्ध होने पर पलभर भी प्रमाद न करना। आज दण्डकारण्य में स्वर्ण—मृग बनकर पंचवटी के निकट पहुँच जाओ और वहाँ के शिकारियों से तुम सावधान रहना और अपने को चौतरफा बचाते रहना थोड़ी दूर छलागें लगाना फिर सरपट दौड़ना । पहले धीरे और फिर तेज भागते ही जाना इन्हें किसी दुर्गम क्षेत्र में ले जाओ तथा उनके बाणों के लक्ष्य में न आओ। आज यह सच हो या झूठ, शिव धनुष तोड़ने वाले नील कमल से साँवले तथा श्वेतकमल —सदृश नेत्र वाले उस शार्ङ्गधनुष —धारी मानव को कुछ लोग विष्णु का सत्तम अवतार बतलाते हैं। लोभवश पीछे पीछे दौड़ते हुए उन्हें धोख देकर तुम तो आगे बढ़ते जाओ । सीता सदा राम के हृदय में रहती है और राम सदा लक्ष्मण के हृदय में



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

रहते हैं। तो इस पारिवारिक स्नेह— बेल को नीचे से काटने के लिए तुम जोर से लक्ष्मण का राम पुकारना । हे सुन्द —पुत्र! अपनी अथवा शत्रु की मृत्यु के समय लक्ष्य भूलने की मूर्खता कदापि न करना—

यौवनश्यामिकास्निग्धरेखांकिते

हारिणे हारिणेत्रे समालोक्यसा

कौतकोत्तानिता ते वपुः स्वर्णिमं

जोषमीक्षिष्यते तृष्यता चक्षुषा ।

तत्र सौन्दर्यरागेण मुग्धो भवन्

नो निमेषप्रमादं प्रयायाः सखे ।।

हेमचर्मा भव त्वं मृगः कानने

पञ्चवटया उपात्तं प्रायायाः सखे ।।

स्तोक दूरं क्रमैः स्तोकदूरं प्लवैः

पूर्वतो मन्दचारी ततः सत्वरः

सर्वतो लुब्धकाभ्यां स्वरक्षाव्रती

सावधानो भव त्वं चिरं गत्वरः ।

तौ हरेथाः क्वचिद् दुर्गमं प्रान्तरं

लक्ष्यतां नो शराणां प्रयायाः सखे

हेमचर्मा भव त्वं मृगः कानने

पञ्चवटया उपान्तं प्रयायाः सखे ।। (1)

1. साकेत सौरभम् — 3/39, 41, 43, 45







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

सीताहरण के पश्चात् राम की मनोदशा —

साकेतसौरभम् में सीता हरण के बाद राम के वियोगवस्था का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि राम सीता के वियोग से दुःखी होकर कहते हैं कि सीता वियोग से अयोध्या की ड्योढ़ी पर रात में दीपक नहीं चलेगा। पिता को विधाता ने छिन ही लिया है, अब उनकी बहू को भी विधाता ने मुझसे छिन लिया है। अब मैं कौशल्या माता के सम्मुख क्या मुख लेकर जाऊँगा। जो लपटें अब तक बूझी नहीं इसी ओर धधकती आती है, इस तनहाँ रुपी आग की लपटों को अब मैं सहन नहीं कर पाऊँगा। हे सीते! मैं अब तुम्हारे बिना नहीं जी पाऊँगा अब मैं तुम्हारे बिना मृत्यु को प्राप्त कर लूँगा।

साकेते नो पुरे ज्वलिष्यति निशिदेहली प्रदीपः

तातं हत्वा बधूं जिहीर्षति विधिराग्रही प्रतीपः।

कौशल्याः पुरः क्षणं हतवदनं कथं करिष्ये ।

हे सीते! नो त्वया बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये

वह्निज्वालावली पुरा परिणयसाक्षितीभुपेता

एषा सा निर्वता न वा ज्वलयितुमन्तिके समेता ।

दावामं नार्चिषां चयं चिरतरमेकलः सहिष्ये

हे सीते: नो त्वया बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये(1)

जटायु का वर्णन—

ध्वजानां शस्त्रखण्डानां किरीटानाञ्च सम्पातः

स्वयं चष्टे दिशायां दक्षिणस्यां विद्रवो जातः।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

विमानेनोत्पतन् पापस्त्वया सीतान्वितो दृष्टः

मया कीर्णच्छदः कल्पद्रुमो भूलुब्धितो दृष्टः ॥ (1)

मारीच वध के पश्चात जब राम और लक्ष्मण दोनों सबसे पहले अपनी कूटी में प्रवेश करते हैं तो खाली पाते हैं, उसी के उपरान्त सीता को खोजते समय रावण —जटायु युद्ध के चिन्ह में ध्वज, शस्त्र और मुकुट के खण्ड मिलते हैं, जिससे आभास होता है कि दक्षिण दिशा की ओर युद्ध हुआ है, तभी जटायु आहत दिखायी देते हैं राम उनके पास जाकर बोले तुम्हारी ऐसी दशा क्यों हुई तो बताते हैं कि सीता को पापी रावण के संग देखा तो माता को बचाने के लिए मैं उस पर आक्रमण किया और उसने मेरी दशा एक तोड़ी गई डालों से नीचे गिरे कल्पवृक्ष जैसी कर दी है।

शबरी का वर्णन—

साकेतसौरभम् में कवि ने शबरी की भक्ति भावना का बड़ा ही उदात्त चित्रण किया है—

रामं कान्तमिवोशती सतिलकं भालं सदाविभ्रती

कुट्यां साश्रुविलोचना बहिरहो सन्तर्जयन्तीवटून्

त्रेताग्नौ हुतराक्षसा सुरगणान् प्रत्यक्षमाजुहवती

वैराग्येण वृताऽपि लोक—जननी रागान्विताऽवर्तत्

अग्रे लक्ष्मणसंयुतं रघुपतिं दृष्ट्वा चिराकाङ्क्षितम्

सद्यः कोरकितेव जातिलतिका रोमाञ्चमामुञ्चती







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

ज्ञात्वा भूमिसुताहतिव्यतिकरं सा भिल्लबाला चिरं

वातासारतुषारभार विगलत्पर्णा विवर्णाऽभवत् ॥ (1)

शबरी रघुपति को मान रही अपना प्राणेश्वर वह उन्हीं के निमित्त भाल तिलक से सँवारती कुटिया में रोती द्वार अनुशासन रखती थी । स्वाहा बोल बड़े —बड़े राक्षस भट मारती एक आवाहन पर देवता बुला लेती सभी दीन —दुखियों को कष्ट से उबारती अटल वैराग्य में भी लोकहित —रागिणी को इसीलिए शबरी माँ जनता पुकारती ॥

लक्ष्मण के साथ रामचन्द्र को समक्ष देख उसे लगा जीवन का सर्वस्व साध आज मुझे मिल गई पुलक उठा सारा तन पलभर में महक उठा सूखती चमेली ज्यों गदरा कर लिख गई है परन्तु जैसे सीता का हरण सुना भीलनी व्यथित हुई और अन्तर से छिल गयी अधड़ में बर्फीली वर्षा सी टूट पड़ी पात-पात झरे और फुलबगिया हिल गयी । (2)

बालि का वर्णन—

साकेतसौरभम् महाकाव्य में राम ने बालि के द्वारा दुन्दुभि दानव के मारे हुए कंकाल को फेंक दिये और अपने बाणों के प्रहार से टेढ़े —मेढ़े ताड़ एक पल में ही गिरा देने वाले आपके मित्र सुग्रीव को पर्वत पर हनुमान जी ढाढस दे रहे हैं, साथ ही साथ हनुमान जी उस माल्यवान पर्वत पर राम धुन गा रहे हैं

स कूटं दुन्दुभेरस्म्यां पदा चिक्षेप तत्कालम्

अकृन्तत् तलसन्दोहं शरेणैकेन चारालम् ।

कृशे विश्वासभातन्वन द्रवन् दृष्टो महावीरः

हरिं श्रीरामनामानं जपन् दृष्टो महावीरः ॥ (3)

1. वही— 3/ 83, 84

2. साकेत सौ० — 3/ 83, 84

3. वही — 4/ 13







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

सहकार सर्ग में कवि कहते हैं— “ अंहकारी व्यक्ति संसार में दीर्घायु नहीं होता , तभी तो घर में निरंकुश दुराचरण करते बालि के तन पर राम बाण लगा और हृदय की तलहटी में बाण लगने से गेरु —मिश्रित झरने की तरह खून के फव्वारे फूट पड़ें और लोगो ने देखा कि वीर बालि धरती पर लोटता हुआ मरणासन्न अवस्था में बड़े कष्ट से बोल पा रहा है— हे त्रिलोकी नाथ! इस बाण की विकट पीडा में मुझे क्यों झोंक दिया। आहा! खून से लथपथ शरीर वाले बालि को कोई नमस्कार तक करने नहीं आया।

अहंकारकृतस्नेहो नेह दीर्घायुराप्नुयात्

रामो दूषितगेहं वै देहं विव्याध बालिनः

हतले वेधितो रक्तधाराततिं

गैरिका सरवन्निर्शराभः स्रवन्

लक्षितो वीरबाली मुमूर्षाकूलो

भूतले संलुठन् क्लेशतः संब्रुवन् ।

हे त्रिलोकीपते! हेतुना केन ते

बाणलग्ना घना प्राणपीडाऽऽययौ

हन्तरक्तस्य पङ्क्तये निमज्जतनुं

नैव कश्चिन्नमस्ककर्तुमप्याययौ ।। (1)

बालि कहता है— रामचन्द्र जी प्रसिद्ध सत्यवादी और शब्दवेधी बाण चलाने वाले महाराज दशरथ के आप पुत्र हैं— ताडका के बध और परशुराम के पराभव से विख्यात —नील—दूर्वा जैसे मनोहर श्रीराम । इधर की शासन —व्यवस्था देखने के लिए आपने दक्षिण कोशल में पदार्पण किया।



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

“भूपते सर्वतोव्याप्त –सत्यश्रुते:

शब्दवेधप्रवीणस्य पुत्रो भवान्

नीलदूर्वाच्छविस्ताऽकातऽनो

भार्गवभ्रंशनो रामभद्रो भवान्

लोकरक्षा समीक्षां विधातुं स्वातो

दक्षिणान् कोसलान् सम्भ्रमादाययौ

हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जत्तनुं

नैव कश्चिन्नमस्कर्तुमप्याययौ

नद्धबाणस्य विद्राणरक्तस्य में

नैव तत् पौरुषं दुन्दुभेर्दारकम्

मेदिनीशिलष्टगात्रस्य किञ्च प्रभो

तत् प्रयातं बलं रावणोत्साकम्। (1)

हे प्रभो ! आपका बाण शरीर में नथा है, सारा रक्त बह चुका है। अब कहाँ बचा है वह पराक्रम , जिससे मैंने दुन्दुभि दानव को चीर डाला था। तन जमीन में चिपकता जा रहा है। वह बल अब चला गया, जिससे मैंने रावण के छक्के छुड़ा दिये थे।

हनुमान का चित्रण काव्य के आधार पर—

हनुमान का चित्रण काव्य में सर्वप्रथम सहकार नामक सर्ग में होता है वे सहयोगी रामभक्त के रूप में सम्मुख उपस्थित

1. साकेत सौ० —4/23, 25







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

होते हैं। वनार होते हुए भी उन्होंने अपनी सारी आयु सीता पति राम के चरणों में समर्पित कर दिया—

जटायु शबरी चैव चिरायुर्वायु सम्भवः

स्वायुः सम्प्य सीतायाः पत्युः पादौ सिषेविरो ।

वानरराज सुग्रीव के दूत हनुमानराम के परम भक्त हैं वे सर्वदा राम का ही स्मरण किया करते हैं—

क्षणं ध्यायनयन् हसन् गायन् गिरौ दृष्टो महावीरः

हरिं श्रीरामनामानं जपन् दृष्टो महावीरः ॥ (1)

राम का सीता के प्रति वियोग—

साकेतसौरभम् में त्रिपाठी जी राम का सीता के प्रति वियोग का अनूठा मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करते हैं— कि राम को पत्नी सीता प्राणों से भी प्रिय है। सीता हरण के पश्चात वर्षा ऋतु के समय राम की व्याकुलता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं। उतावला सनसनाता पवन बह रहा है यह कुञ्जों में घुसकर सारी नई कोपलें नोंच रहा हैं। कहीं इसके वेग से ठिठुर कर तन्वङ्गी सीता न काँपने लगे। उधर टुप्-टुप् पानी रुकता नहीं, इधर मेरी धुकधुकी और उद्वेग बढ़ रहा है।

मेढ़क टर्-टर् की टेर लगाए हैं, जैसे कोई सामूहिक संगीत चल रहा हो। ऐसे में आँसुओं से प्रिया का भर्राया रुदन—स्वर दूर से कैसे सुनाई पड़े। यह कितना सुहाना दाम्पत्य प्रेम है कि आए दिन बादलों से ढका हुआ आकाश पानी की बूँदे सी चमकती सुइयों द्वारा धरती के पाँव



प्राचीन काल में भारत में व्यवस्था का विकास

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

— प्राचीन काल में

व्यवस्था प्रारंभिक रूप में विकसित

व्यवस्था प्रारंभिक रूप में विकसित

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

— प्राचीन काल में

व्यवस्था प्रारंभिक रूप में विकसित

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

— प्राचीन काल में

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था

है कि वह भी प्राचीन काल में ही विकसित हो चुका था



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

तले की फटी वेवाइयाँ मानो जोड़कर सिलता रहता है। उफ! एक हम है कि अपहरण से लगभग विदीर्ण देवी के हृदय को शाङ्गधनुष से निकलते बाणों द्वारा तनिक सान्त्वना भी नहीं दे पा रहे है।

सं सं सरित सत्वरः पवनः

कुञ्जगृहे कृतपल्लव —लवनः

सोऽयं न वै वेपयतु तन्वीं विपिने वहमानः सरयम्

वर्षति टुप्प—टुप्प जलधारा धक् धक् कुरुते में हृदयम्॥(1)

रावण का चरित्र—

साकेतसौरभम् के पंचम सर्ग में कवि ने कहा कि रावण की माता केशिनी के दुश्चरित्र का प्रतिफल था कि एक बहन और रावण ये दोनों पूर्णतः राक्षस का शरीर और स्वभाव पा गए। इनका तीसरा भाई विभीषण पिता महर्षि विश्रवा और उनके पुलस्ति—कुल का योग्य प्रतिनिधि प्रतीत होता था।

जनन्याः केशिन्या दुरितमयशीलप्रतिफलै—

रिमौसाकं स्वस्म रजनिचरवृत्तावभवताम्

तृतीयो भ्राताऽभूत पितु रनुगुणो विश्रवऋषेः

प्रशस्तः पौलस्त्यो विलसदभिधो भीषण इति॥(2)

रावण में राक्षसी प्रवृत्ति कूट—कूटकर भरी थी। उसके आंतक से सारा

1. साकेत सौ० 4/32, 33, 36, 37

2. वही— 5/3



संस्कृत भाषा में लिखे हुए प्रमाणों पर आधारित है

इस पुस्तक में हमने प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है  
प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर  
प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण १७७७ १७७७ १७७७

प्रमाण - प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर  
प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर  
प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर  
प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर  
प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर

प्रमाण प्रमाणों के आधार पर प्रमाणित किया है प्रमाणों के आधार पर



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जगत आतंकित था। उसने कुबेर से लंकापुरी और पुष्पक विमान छीन लिए, उसके वीरता के आगे देवता भी अपना अस्त्र—शस्त्र फेंक देते थे। चन्द्रमा और सूर्य भी अपने आपको शक्तिहीन समझने लगे थे। देवताओं की पूजा अर्चना बन्द हो गयी थी, देव पूजन हेतु कहीं भी ऋषि मुनि दिखाई नहीं देते थे, सत्य त्याग और यज्ञ पलभर में लुप्त हो जाया करते थे—

न संलक्ष्यः साधुः सविधि विबुधाराधनपरो

न वै लक्ष्या साध्वी व्रतममतिवदान्या पतिपदे

न सत्यं नो त्यागो नभसि मखधूमो न च मैनाक्

त्रिलोक्या निस्त्रिंश तरलयति तस्मिन् दशमुखे ॥ (1)

हनुमान रावण को जब देखते हैं तो उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे निरन्तर दस कपालों के खेल—खेलता हुआ वह कोई विचित्र तान्त्रिक हो।

स नीतो रावणगारं लंकाधीशं व्यलोकयत्

केलिं दशकपालानां चरन्तमिव तान्त्रिकम् ॥ (2)

कवि ने रावण के दुश्चरित्र का वर्णन करते हुए कहा—

शिरः शूली शूली विधिरपिविधेयश्च विपदां

परं वक्री चक्री मरुदथ रुदन् बालकनिभः

निशानाथोऽनाथोऽभवदपि च दीनो दिनमणि

1. साकेत सौ० —5/9

2. वही— 5/39



...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
(1) ...  
...  
...

...  
(2) ...  
...  
...  
...



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

चकराए शूलपाणि ब्रह्मा व्यथाग्रस्त हुए

विष्णु पड़े मौन और देव भी उदास

चन्द्रमा अनाथ दीन सूर्य शक्तिहीन हुए

लहराया दशमुख ने जैसे ही चन्द्रहास ।।

जल—पट के मगर इन्द्र दयापात्र वरुण बने

ढेर से कुबेर हुए टूटा यम—कालपाश

गणपति में मन्दिर में पूजा स्वर शान्त हुए

लहराया दशमुख ने जैसे ही चन्द्रहास ।।

उतना ही जल गिरता जिससे मधुपर्क बने

जलती थी आग बस पकाए जो भोज्य मांस

अतिशय भयभीत प्रकृति दास बनी रहती थी

लहराया दशमुख ने जैसे ही चन्द्रहास ।।

बिल में पाताल के न नाग सुख पाते कहीं

दिग्गज सो पाने का व्यर्थ ही करे प्रयास

हारे भूपाल सभी दीन वनवासी बने

लहराया दशमुख ने जैसे ही चन्द्रहास ।। (1)

सीता की खोज—

साकेत सौरभम् के पंचम 'उद्योग' सर्ग में सीता की







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

खोज लिए समुद्र की उत्तरी तट से जटायु के भाई सम्पाती गीध ने सीता को उस वाटिका में देखकर खोजी वानर को बतला दिया, परन्तु समुद्र पार करने के लिए हनुमान के अतिरिक्त कोई साहस नहीं दिखा पाया और हनुमान सभी वार दलों में सर्वश्रेष्ठ उछलकर महासागर के बीच उभरते हुए मैनाक पर्वत को हथेली से छूकर परीक्षा के लिए खड़ी सुरसा के विस्तृत मुख में पलभर प्रवेश कर और परछाई से व्यक्ति को खींचकर डुबोती छाया राक्षसी के प्राण लेकर उस पार जा पहुँचे ।

लंका —द्वार के गुप्तचर मंच पर बैठी लंकिनी राक्षसी रातभर जागकर उस वैभव —सम्पन्न नगरी की सुरक्षा करती थी। वह वीर वानर को ठगी सी देखती रह गयी। उसे ऐसा लगा मानो अरसे से मिला वरदान रुपी पौधा आज नई कोपलों से लहलहा उठा है, उस राक्षसी लंकिनी ने अपने मुक्ति—प्रदत्ता को वह नारी आदरपूर्वक प्रणाम करती झरझर बहते आँसुओं का अर्घ्य देने लगी और पुतलियों के भीतर आश्चर्यवश घूमते तारों से चरणों की आरती सी उतारने लगी और भोर होते ही स्वस्तिक, त्रिशूल, शंख, चक्र और धनुष आदि मांगलिक प्रतीकों से आरेखित चूने से पुते हुए विभीषण के भवन में हनुमान जी ने 'हे राम रावनन्दन ' का निरन्तर कीर्तन 'स्वरसुना तो हनुमान जी उस कूटी में प्रवेश किये। कहा जाता है कि पुरुषों का परिचय नाम से नहीं होता। उनकी वास्तविकता प्रवर्तमान चरित्र से जानी जाती है तभी तो राक्षसी नाम वाले विभीषण अर्थात् अत्यन्त भयंकर होते हुए भी पवन —पुत्र ने राह चलते विभीषण से घनिष्ठ मित्रता कर ली।

औदीच्यतीरतः सिन्धोः सम्पती दूरदर्शनः

सीतां विलोक्य तत्रस्थां तद्विचेतृन्त्यवेदयत् ।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

मैनाकं पाणिनाऽऽमृश्य निविश्य सुरसामुखे

छायायाः सत्वमाकृष्य नमस्यः प्लवगोऽव्रजत ॥ (1)

सीता की दशा— सीता की अशोक वाटिका में आत्मवश होकर भी किसी परवश नारी की भोंति रह रही है उनका सारा अंग उसी प्रकार काँप रहा है जैसे ओंस टपकने से पत्ते काँपते हैं और पीले हो जाते हैं उसी प्रकार सीता भी पीतवर्णी कल्पलता सी जनकपुत्री दिखलायी दे रही हैं और जैसे ही ऊषा को आगे करके दिशाओं को प्रकाशित करने वाले सूर्य जैसे ही प्रत्यक्ष दिखने को थे, वैसे ही महारानी मन्दोदरी को आगे करके मद से चूर रावण स्वयं अशोक की बगिया में आ पहुँचे ऊपर पेड़ पर बैठ हुए हनुमान जी ने कहा मुत्युलोक को धिक्कार है ! यहाँ सत्य को असत्य से दबाने की इच्छा वाले न जाने कितने रावण बन जाते हैं। इधर सामने ही सेंधमार की चहार —दीवारी में यज्ञभूमि से जन्मी ये लोक—लक्ष्मी कब से डरती हुई बैठी है, तभी हनुमान जी रावण के ऊपर अत्यन्त ही क्रोधित हो जाते हैं।

हनुमान के क्रोध की आँच से अचानक मूर्च्छित हो जाते हैं, किन्तु मन्दोदरी की भाव पूर्ण शिवस्तुति से होश में आया हुआ लज्जाग्रस्त दशानन अगले एक महीने बाद सीता—बध करने की धमकी देता हुआ लौट गया। इसी समय हनुमान द्वारा वृक्ष के नीचे गिराई गई तथा लुढ़ककर चरणों के निकट आई राघवेन्द्र की कर — मुद्रिका सीता के कोपलो की तरह काँपती अँगुलियों से उठा ली और माया नगरी लंका में उसे देख परखकर जोरों से विलाप करने लगी।

हनुमान जी ने कहा इस रावण ने प्रिया सीता का हरण कर श्री राम के लिए उन्हें दुर्लभ बनाया गया। उस अपहर्ता पतंगे को जलाने के लिए मानो क्रोध रूपी प्रलयकालीन ज्वालाएं फूट निकली हैं।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

विद्योतयन् पुर उषां दशदिक्प्रकाशः

प्रत्यक्षां जिगमिषुः प्रबभौयदाऽर्कः

मन्दोदरीम् विदध्वचररीं दशास्यः

प्राप्तस्नदा स्वयगशोकवर्णीं मदान्धः ॥

धिङ् मृत्युलोकमनृलैरह सत्यरुपं

लोकाः पिधातुमनसो बहु रावणन्ति

यज्ञाजिरे जनिमती भुवनेश्वरीयं

यत् सन्धिभेदकगृहे सुचिराद् विभेति ॥ (1)

अन्यत्र—

हनुमान जी का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि — हे हनुमान जी आप रुद्र के अवतार हैं—

वन्दना से आपकी चिन्ता पिशाची भागती

रुद्र के अवतार प्रभु हम सब उतारे आरती

देखते दक्षिण दिशा की ओर सिन्दूरी बदन

अञ्जना के लाल रिपु के काल बजरंगी नमन ॥

रामपद अनुरक्त उनके आप ही विश्वास हैं

नाम —जप आराधना के आप ही उल्लास हैं। (2)

1. साकेत सौ० 5/28, 31, 32, 34, 42

2. वही— 5/47, 48





सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

(१) सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

१ — की ६ सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

— १३ सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

१ सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं

१३ सर्वत्र यथा हि योः किं वाच्यं नृपः प्रजापतिः किं वाच्यं



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम नाम की शक्ति—

राम नाम राक्षसों का ऐसा विनाशकारी—मन्त्र बना की लंका नगरी अग्निदाह का धन और छोटी —छोटी चट्टानें समुद्र का पुल बन गई। श्री राम की ऐसी महिमा है कि उनके नाममात्र से सभी दीन—हीन के कष्ट दूर हो जाते हैं।

इन्धनं नगरी लंका शिला पाथोधिबन्धनम्

बभूव रामभ्रदस्य नाम राक्षस —रन्धनम् ॥ (1)

रामादल की मन्त्रणा—

साकेतसौरभम् के षष्ठ —सर्ग विक्रम सर्ग में रामादल में रहने वाले ज्ञान रूपी रीछ मंत्री जाम्बवान, विज्ञान सेतुबन्ध के शिल्पी नल—नील से, कृतज्ञभाव सुग्रीव से और ब्रह्मज्ञानहनुमान से सीखने को मिलता है। इतने ज्ञानवान शीलवान राम के दल में बड़े—बड़े योद्धादल में रहते राम कैसे रावण से पराजित हो सकते हैं, क्योंकि बुद्धि और शक्ति से विमुख राजा का युद्ध करना अरण्यरोदन के समान है।

ज्ञानं जाम्बवतः प्राप्तं विज्ञानं नल—नीलतः

कृतज्ञानञ्च सुग्रीवाद् ब्रह्मज्ञानं हनूमतः ॥ (2)

लक्ष्मण मेघनाद का युद्ध वर्णन— साकेतसौरभम् में लक्ष्मण मेघनाद दोनों महान वीर युद्ध क्षेत्र में आमने सामने खड़े होकर लड़ने लगे, लेकिन दोनों के पुरुषार्थ —स्त्रोत रक्षा कवच देवी उर्मिला और सती सुलोचना वहाँ से दूर स्थित हैं। मेघनाद राम शत्रु रावण का राजकुमार था वह सभी छल—बल विद्याओं में बेजोड़ है। मेघनाद युद्ध के समय पल—पल में रूप

1. साकेत सौ० —6/1

2. वही— 6/2







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

बदलता और भूतल (समुद्र ) जल, पाताल और अम्बर —तल के किसी भी मोर्चे से विकराल युद्ध प्रारम्भ कर देता था।

“लक्ष्मणो मेघनादश्च युयुधाते हि पार्श्वतः

दूरेऽभूतां तयोः शक्ती उर्मिला च सुलोचना ॥

“जले स्थले च पाताले युयुधे स नभस्तले

छले बलेऽतुलो वैरी भिन्नरुपः पले—पले ॥ (1)

प्रतिनायक पक्षीय पात्र मेघनाद रावण का पुत्र है। मेघनाद का वर्णन सर्वप्रथम पंचम सर्ग में होता है जब वह हनुमान को पकड़ने के लिए ब्रह्मपाश का प्रयोग करता है। रावण —पुत्र मेघनाद बहुत वीर है, उसके पास अद्वितीय अस्त्र—शस्त्र है।

सीता का शक्ति रूप में राम को अस्त्र —शस्त्र प्रदान करना—

सीता जी दुर्गारूप में सुसुप्तावस्था में स्वप्न के माध्यम से राम को ह्रीं ' का मंत्र दिया, रावण को मारने के लिए विनाशक आयुध, दिये, पवन सुत को ब्रह्मविद्या दिया— यथा—

रात सोए

भूमि पर थे राम

उनकी नींद कच्ची थी

तभी चेतन कला सी

तमतमाँँ रूप से



—कभी कभी तो यह कि कभी कभी तो कभी कभी तो

६. कभी कभी तो १२६— कभी कभी तो ( १२६ ) कभी कभी

१२६ कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

१२६ कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

(१) १२६— कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

१२६ कभी कभी तो

—कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो कभी कभी तो

—कभी कभी तो कभी कभी तो

कभी कभी तो

कभी कभी तो

कभी कभी तो

कभी कभी तो

कभी कभी तो



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

(सीता दिखीं)

करती सवारी सिंह की

कुछ अपरिचित सी,

और सघन रहस्यमय

उनके चमकते बाण

कुछ थे शूल और कृपाण से

शक्ति और कुलिश सरीखे

उन्हें हाथों में लिये सीता दिखीं।

रात्रौ स्थण्डिलशायिनो रघुपतेस्तन्द्रां विवेशाञ्जसा

दोर्भिः शूल कृपाणशक्ति कुलिशाकारान् दधानाशरान्

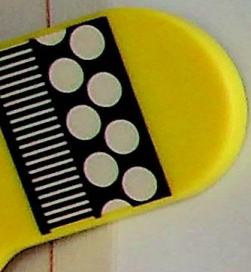
चिन्वाना न चिरन्तनं परिचयं किञ्चिद् रहस्याञ्चिता

स्वप्ने केसरिणि स्थिता चितिमती सीता नु दीप्तानना ॥ (1)

धर्म और अधर्म का युद्ध—

कवि डॉ० भास्कराचार्य जी के साकेतसौरभम् महाकाव्य में धर्म (राम) और अधर्म (रावण) के युद्ध के वर्णन में बड़ा ही सुमनोहारी वर्णन किया है वे कहते हैं कि राम रावण की लड़ाई में अपने ढंग की निराली थी। अस्त्र—शस्त्र फेंककर —मारे जाने वाले हथियारों से खचाखच आकाश भर गया था, जिससे उस आकाश का 'शून्य' पर्यायवाची उन दिनों निरस्त हो गया था—





संस्कृत भाषा में उचित कि प्रमाणित कि प्रमाणित कि

(हिन्दी भाषा)

कि भाषा भाषा कि

कि भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

कि भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

हिन्दी भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

(1) भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि

भाषा भाषा कि



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अपूर्वोभुवने सोऽयं धर्माधर्मरणोऽभवत्

यदस्त्रसङ्कलव्योम्नः शून्यसंज्ञा वृथाऽभवत् ॥ (1)

महाकाव्य का प्रतिनायक रावण है। यह धीरोद्धत प्रकृति का है। वह लंका का राजा है। वह ऋषियों को कष्ट देता था। देवताओं पर आक्रमण कर उनका मर्दन कर देता था। रावण की दहाड़ सुनकर सूर्य और देवतागण भी थरथरा उठते थे।

रावण दृढ़ निश्चयी और वीर के रूप में सामने आता है। मन्दोदरी के लाख बुरा-भला कहने पर भी वह अपने निश्चय पर अडिग रहा। राम के प्रभाव को जानकर भी बड़े साहस और धैर्य के साथ उनका मुकाबला करता है। उसके बाद भी रावण राम का एक रोम तक नहीं छू सका। रावण की सेनाओं ने हथौड़े और भालों से कुछ कपि, कुछ वीर रण में मारे गये लेकिन राम की सेना भी शत्रु की सेनाओं का पूर्ण विनाश कर दिया तब रावण युद्ध में छल का सहारा लेते हैं—

अरालधारदिशैरनारतं प्रवेल्लितैः

सुतीक्ष्णधारखड्गकैश्च विद्युदामवेल्लितैः ।

न रामरोम विक्रियामततर्कयद् दशाननः

प्रकामलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः ॥ (2)

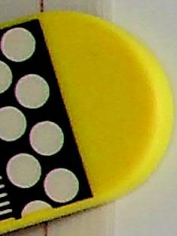
माया— सीता वध—

साकेतसौरभम् के विक्रम सर्ग में माया रूपी सीता वध करके रावण युद्ध क्षेत्र में सीता का कटा हुआ सिर राम को दिखाता है सभी रामादल आश्चर्य चकित हो रहे थे। दशानन हँस रहा था।

1. वही— 6/20

2. साकेत सौ —6/22, 23







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

यथा—

पिचाशमाययानिशां रवेः पुरः प्रदर्शयन्

निकृत्य जानकीशिरः प्रभोः पुरः प्रदर्शयन्

चकार सङ्गरे न कं चमत्कृतं दशाननः

प्रकामलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः ॥ (1)

रावण—वध—

रावण अपने महाबली महोदर, महापार्श्व और विरुपाक्ष राक्षसों को सेना सहित रणभूमि में राम के साथ युद्ध करता है वह राम से युद्ध काल के समय तीन अंगुल धार वाली चन्द्रहास तलवार से लड़ता है। लेकिन जब राम अपने धनुष बाण का प्रयोग करते हैं तो यह महाबली रावण भी राम के ऊपर बाणों का प्रहार करने लगा परन्तु राम के इकतीसवें बाण से वह रावण मृत्यु लोक को पहुँच गया। चिरकाल से बन्दी बनाए गये देवतागण नगाड़े बजाते और राम का जयघोष करते आकाश से मकरन्दयुक्त पुष्प की वर्षा करने लगे हैं। सभी देवतागण कहने लगते हैं कि एक मुख राम ने दसमुख वाले रावण को मार डाला इससे यह सिद्ध होता है कि जीत अन्ततः सत्य की होती है।

यथा— निस्त्रिंशेन रणं कुर्वन् चन्द्रहासेन राक्षसः

एकत्रिंशेन रामस्य बाणेनागान्महीतलम् ॥

वन्दि —वृन्दारकाणाञ्च वृन्दं नन्दीं निनादयत्

मरन्दतुन्दिलां चक्रे पुष्पवृष्टिं नभस्तलात् ॥ (2)

1. वही— 6/28

2. वही— 6/31, 32, 33



अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

(१)। अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अथ श्रीमद्भगवद्गीता



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

मनुष्य सतपथ पर चलते हुए सम्पूर्ण पराक्रम पर विजय प्राप्त कर सकता है जैसे श्री राम जी अपनी मर्यादा, दृढ़निश्चय, दृढ़प्रतिज्ञा एवं सत्यनिष्ठा होने के कारण ही आज भी लोग उनके कृत्यों का गुणगान करते हैं। यह त्रेतायुग की एक अपूर्व घटना थी। रीछ को मंत्री और वानर को मित्र बनाकर राम ने अकेले ही विकराल राक्षस रावण को पराजित किया और त्रैलोक्य पर सदा के लिए आधिपत्य पा लिया।

ऋक्षो मन्त्री कपिर्मित्रं शत्रुर्दुर्दान्तराक्षसः

.त्रेतायां चित्रमेकाकी त्रिलोकीं राघवोऽजयत् ॥ (1)

सीता की अग्नि परीक्षा—

साकेतसौरभम् में कवि ने सीता की अग्नि परीक्षा की घटना प्रक्षिप्त की है यहाँ पर सीता के सुमनोहारी रूप का वर्णन किये है कि सीता आग की लपटों से स्नान के समान प्रतीत हो रही है, वह ऐसी लग रही है जैसे भोर में खिली कमलिनी की तरह वह पावन और रूपवती प्रतीत हो रही है ऐसे रूपवती राम की धर्मपत्नी सीता को वहाँ एकत्र हुए लोग देखते ही रह गये।

यथा— जानकीं पावकस्निग्धां प्रातर्बुद्धां नु पद्मिनीम्

विलोक्य जनता मुग्धा रामशुद्धात्तसम्पदम् ॥ (2)

राम का अयोध्या लौटना—

साकेतसौरभम् महाकाव्य में कवि भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने वाङ्मयी रचना में कहते हैं कि जब रावण का विनाश और विभीषण का राज्याभिषेक हो जाता है तो वह कहता है — हे प्रभु आज

1. साकेत सौ0 —6/ 34

2. वही— 6/35







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जलचर, नभचर, स्थल चर, सभी प्राणी स्वतंत्र हो गये हैं और समुद्र भी अपने स्वतंत्र लहरों से उछलता हुआ स्वतंत्र प्रतीत हो रहा है।

यथा— चेलुः स्वैरं मकराः

समे च वारिचराः

अप्सु विहारः

प्रवर्तते मत्स्यानां

भूयो निर्यन्त्रः।

फेनिलोदधिः

समुच्छलति ननु

भवन् स्वतन्त्रः॥ (1)

तत्पश्चात् राम अपने नगर अयोध्या वापस आते हैं, वे वानप्रस्थी साधु वेष में घर से पैदल निकले थे किन्तु विजय श्री प्राप्त करके त्रिभुवन चक्रवर्ती बनकर विमान से वापस लौटते हैं।

यह षष्ठ सर्ग स्वनामधेय से विभूषित है जैसा नाम वैसा कार्य राम रावण का युद्ध, सीता परीक्षा, हनुमान का चरित्र, मेघनाद का चरित्र आदि योद्धाओं से इसका नाम विक्रम सर्ग रखा गया। इस देव-भाषा के अभिनव महाकाव्य (साकेतसौरभम्) अपने यथार्थ नाम 'विक्रम सर्ग' से विभूषित हुआ है।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

“साधुवेषः सृतो गेहात् सर्वेशः सन् समागतः

पदातिः प्रथमं रामः पश्चात् पुष्पकनायतः

सोऽयं विक्रमनामा यथार्थधामा बभूवसम्पूर्णः

षष्ठः प्राञ्जलसर्गो निलिम्पवाणी —महाकाव्ये ।। (1)

प्रजा रंजक राजा (राम) का राज्याभिषेक—

साकेतसौरभम् के अभिषेक सर्ग में राम सौम्य हृदया परत्तप राम साक्षात् वेदवर्णित अविनाशी अव्यक्त ब्रह्म है। ये देवों के हृदय में परम तपस्वी रहस्यमय है। राम के व्यक्तित्व में सूर्य के तेज, रघु की कीर्ति और पिता (दशरथ) के वचन अथवा पृथ्वी पालन का भरपूर तालमेल होने से लोग श्रीराम को परब्रह्म के समान मानने लगे। राम के अनन्त गुणों का पार कोई नहीं पा सका। ऐसे बड़े पराक्रमी होने पर भी श्री रघुनाथ जी इतने क्षमाशील थे कि वे अपने प्रति किए हुए किसी के अपराध को अपराध ही नहीं मानते थे। उन्होंने जहाँ भी कहीं भी क्रोध और युद्ध की लीला की हैं, वह अपने आश्रितों और साधु पुरुषों के प्रति किए हुए अपराधों के लिए दण्ड देने और इसी बहाने दुष्टों को निर्दोष बनाने के लिये ही की हैं। श्री रघुनाथ जी का जिस तिथि पर पहले जन्मोत्सव हुआ, संयोग से उसी चैत्र शुक्ल नवमी तिथि पर राम का वन गमन और लौटने पर राज्याभिषेक भी हुआ।

‘रवेर्धाम रघोर्नाम सत्यकामपितुगगाम्

ब्रह्मसाम्यधरो रामः सामञ्जस्येन सन्दधे

‘नवम्यां जन्मधन्यायामधौ च पित्रसद्विधौ

गतः प्रत्यागतः प्राप वनाद् रामो नृपश्रियम् ।। (2)

1. साकेत सौ० —6/47, 48

2. वही— 7/1, 3







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम का राज्याभिषेक पर इनके मुखमण्डल की कीर्ति कौमुदी सूर्य देव से की गयी है कि जब राम आते हैं तो सूर्य रुपी प्रकाश चारों दिक् में प्रकाशित हो जाते हैं। उनकी उदार कीर्ति सर्वत्र प्रसार है, राक्षस रुपी (निशा) छिप गयी है और अंधकार रुपी शत्रु का विनाश हो गया है। सभी राम को अपना उदीयमान मित्र मानकर उनके सुवर्ण रुपी स्वरूप का सभी लोग प्रणाम कर रहे हैं। जब राम जी अपने अयोध्या नगरी में प्रस्थान करते हैं तो सभी नगरवासी प्रसन्नचित मन से राम का स्वागत करने के लिए उत्सव का आयोजन करने लगे।

श्री रामचन्द्र जी में प्रजा का हर तरह से प्रसन्न रखने का गुण आदर्शोक्ति गुण था। वे अपनी प्रजा को पुत्र से भी बढ़कर वात्सल्य प्रेम से पालन करते थे। सदा सर्वदा उनके हित में रत रहते थे यही कारण था कि अयोध्यावासियों का उन पर अद्भूत प्रेम था।

कलात्मक रंग रेखाओं से युक्त सूर्य देव का वर्णन—

साकेतसौरभम् के अभिषेक सर्ग में सूर्य देव का बड़ा ही मनमोहक वर्णन किया गया है सूर्य अपने ताँबई प्रकाश को लेकर जब उदय होता है तो रात्रिरुपी अंधकार का विलय हो जाता है सूर्य के उदय होने से पुण्य कीर्ति का प्रसार हो जाता है। जैसे प्रभात ने अपना राग टेरा वैसे ही सभी खगगण गली-गली कलरव करने लगते हैं, प्रमाद की विदाई हुई और विहान का समय आ गया है, सभी लोग सहस्र किरणों को प्रकाशित करने वाले सूर्यदेव को नमन करते हुए कहते हैं कि सुरम्य शैल से उगने वाले सरोज बन्धु को नमस्कार है।

यह सूर्य देव पृथ्वी स्वर्ग तथा अन्य समस्त भुवनों के आँगन में नित्य खेलने वाले बालकों की भाँति सूर्य एक घण्टे में ही तरुण होने लगते



[illegible]

...



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

है। जैसे ही सूर्य का उदय हुआ ओंस की सभी बूँदे सूख गयी और मकरन्द द्रव सभी मधुपायी भौरे चूस रहे हैं, बाड़ो में गाँँ दूध टपकाती हुई रँभा रही है और बछड़े दुग्ध पान कर रहे हैं।

यथा—

‘निकाम —ताम्र —भास्वरः

समुद्रगतो दिवाकरः

निशा क्वचिन्निलीयते

पलायते निशाकरः

“दिशासु पुण्यकीर्तिवत्

प्रकाशते दिवाकरः

निशा क्वचिन्निलीयते

पलायते निशाकरः ॥

प्रणम्यते जगज्जनै

—रयं शनैरुदित्वरः

क्षणाय जातुषाकृतिः

क्षणाय हेमपिञ्जरः ॥ (1)

भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने अपने काव्यरचनाओं में नवीन परिकल्पनाओं का भी समावेश किया है—

1. साकेत सौरभम् — 7/10, 12, 13, 14, 16, 20, 23, 25, 26





...  
...  
...  
...

...- ...- ...

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

... ..

(1) ... ..

... ..  
... ..



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

प्रशिक्षकोऽनुशासने न कोऽपि सूर्यवत् क्षमः

स्फुरददुरंत —बह्निनिविस्फुलिराशिविभ्रमः ॥ (1)

प्रकृति वर्णन में कवि ने सूर्य देव का जो काव्यगत चित्रण किया है वह स्मरणीय है। इसमें सूर्यदेव को विद्यार्थियों का गुरु बताया है।

अन्यत्र—

मनोः प्रभावको रविर्हनूमतो गुरु रविः

शनेर्जनेः स कारकः सुकण्ठजन्मदो रविः

सुतेषु चादितेरयं प्रतीयते पुरोगमः

स्फुरददुरंत —बह्निनिविस्फुलिराशिविभ्रमः (2)

सूर्यदेव का अलौकिक वर्णन भी किया गया है—

मनु—कुल के आदि पुरुष मारुति के गुरु

शनि —कारक

रवि है सुग्रीव—जनक

अदिति के पुत्रों में

कौन भला ज्येष्ठ सा फैला

चिनगारियों का जाल सा ॥

1. साकेत सौ०— 7/27

2. वही— 7/28







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम का व्यक्तित्व—

साकेतसौरभम् में कवि ने राम राज्य का अवर्णनीय उल्लेख करते हैं कि —जहाँ असत्य को अनिवार्यतः विपत्तियों का सामना करना पड़े और सत्य को भरपूर सम्पदा का वरदान मिले, उसे रामराज्य कहते हैं।

रामचन्द्र जी सदा शान्त—चित्त रहते थे। वे बड़ी कोमलता तथा मृदुलता के साथ बोलते थे। उनसे कोई कितना भी रुखा क्यों न बोले, वे कभी भी कड़ा और रुखा उत्तर नहीं देते थे। किसी प्रकार किये गये एक भी उपकार से वह तुष्ट हो जाते थे। परन्तु सैकड़ों भी अपकारों को कभी स्मरण नहीं करते थे। किसी से भेंट होने पर सबसे पहले बोलते थे सदा मीठा बोलते थे अत्यन्त ही वीर्यशाली थे, परन्तु इसके कारण उन्हें गर्व छू नहीं सकता था। विमान से उड़ने वाले भविष्य के शासकों को राजनीति का व्रत सिखते हुए, अवतारी ब्रह्म होकर भी राम ने सब के बीच पैदल विचरण का अभ्यास कर लिया था—

असत्यं विपदे यत्र नित्यं भवति भूतले  
सत्यं सम्पत्तये चैव रामराज्यं तदुच्यते  
चचार परितः पदभ्यामवतारी स चिन्मयः  
चेतयन् यानिनो नेतृन् राजनीतेरिव व्रत् ॥ (1)

इस प्रकार का अनुशीलता किसी भी व्यक्ति को मानवता के ऊँचे पद पर पहुँचने तथा प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त माना जा सकता है। मानव समाज, मानव व्यवहार तथा मानव—सदगुणों की पराकाष्ठा का पूर्ण निर्वाह हम राम के जीवन में पाते हैं। त्रिपाठी जी का यह महाकाव्य पृथ्वी तल को विदीर्ण कर उगने वाले उस विराट् वटवृक्ष के समान है, जो अपनी शीतल छाया से भारत के समस्त मानवों को आश्रय देता हुआ प्रकृति की विशिष्ट विभूति के समान अपना मस्तक ऊपर उठाये हुए खड़ा है, उस माता को भी धन्य जिसने यज्ञ की खीर खाकर अयोध्या नगरी को प्राची







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

बन कर सूरज के रूप में राम जी को अवतरित किया। सभी सप्तऋषि नक्षत्र— गण उस अभिराम का बन्दन करें , सभी सज्जन जन उस प्राणधन श्री राम की वन्दना करते रहे। राम शारीरिक सुषुमा तथा मानसिक सौन्दर्य दोनों के जीते जागते प्रतीक थे

‘पुत्रेष्टया पुण्यं लब्ध्वा हव्यान्यनानां सम्पर्कम्  
धन्याऽयोध्यापुर्या माताऽसूत प्राचीवार्कम्  
सप्तर्षीणां नक्षत्राणामन्तर्वेद्यं वन्दे  
सद्भिः सेव्यं कौशल्येयं नित्यं गेयं वन्दे ॥ (1)

अयन्त्र—

त्रैलोक्यादातङ्कं धुन्वन् कुर्वन् रक्षः प्रेतम्  
रामः सीतमानेष्टीद् भूयः स्वीयं साकेतम्  
सर्वेषां धौरेयं नामस्मृत्या मेयं वन्दे  
सद्भिः सेव्यः कौशल्येयं नित्यं गेहं वन्दे ॥  
रामं स्मृत्वा वाल्मीकिः सत्काव्यं सघोऽगासीत्  
नव्यां भवयां वाचोयुक्तिं सवैस्मै चाकार्षीत् ॥ (2)

भगवान रामचन्द्र जी के बल , पराक्रम , वीरता और शास्त्र कौशल अद्वितीय है, इसी के कारण विश्व में आतंक फैलाने वाले राक्षसराज रावण का अन्त करके सीता को अयोध्या लेकर आये और अपने कुलदीपक से अयोध्या को प्रकाशित किए। ऐसे श्री राम के महत्वपूर्ण असंख्य आदर्श गुणों का लेखनी द्वारा वर्णन करना असम्भव ही है। आदिकवि वाल्मीकि

1. साकेत सौ० -7/63

2. वही- 7/67, 68







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जी ने रामचरित का वर्णन करके अपनी वाणी को सफल बनाने की चेष्ट की है, परन्तु श्री राम के अनन्त गुणों का पार कोई नहीं पा सका। डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने भी साकेतसौरभम् में वाल्मीकि रामायण का ही अनुकरण किये है।

रामचन्द्र में ममत्व बुद्धि का विलास दृष्टिगोचर नहीं होता । भगवद्गीता के अनुसार आदर्श मानव में जिन गुणों का सद्भाव रहता है, रामचन्द्र उन समग्र गुणों की जीवन्त मूर्ति थे। विषम बुद्धि ही परिस्थिति के विपर्याय से परिताप का आश्रय बनता है, परन्तु समबुद्धि व्यक्ति विषम विपर्याय में भी परिताप को अपने पास फटकने नहीं देता।

समबुद्धि तथा समदर्शी राम परिताप करने से इसीलिए कोसों दूर रहता है। सम्पूर्ण सृष्टि में वे ही एक मर्यादा —पुरुषोत्तम हुए जिन्होंने दूसरों को प्रकाश बाँटा और हर दुःख का अँधियारा अपने लिए रख लिया।

यथा— सृष्टौ स एक एवासीन्मर्यादा पुरुषोत्तमः

योऽदात् प्रकाशमन्येभ्यः स्वस्मै

दुःखात्मकं तमः ॥ (1)

सीता का गर्भधारण करना—

साकेतसौरभम् में कवि ने सीता के गर्भावस्था का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जैसे चन्दन की लता में बहुत दिनों बाद सुगन्ध आती है, उसी तरह एक अरसे बाद उज्ज्वल प्रकृति वाली सीता ने गृहस्थी का मंगल —प्रतीक गर्भ धारण किया है।





...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...

...

(1) ...

...  
...  
...  
...



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

यथा— हरिद्रापाण्डुरा रामा रहः कक्षनिषेविणी

दीपार्चिरिव लक्ष्यसाऽभूदुत्तरीय —समावृता ।। (1)

लव—कुश चरित्र—

दिग्विजय सर्ग में लव—कुश राम—सीता की सन्तति है, सीता का वाल्मीकि आश्रम में दोनों पुत्रों को जन्म देती हैं उनमें बड़े का रंग नीलम जैसा और छोटे का पुखराज सा था। राम के व्यक्तित्व वाला वशीकरण लय वाले और नवीन आकृतियाँ अब खेलने लग गयी है।

यथा— वरीयानिन्द्रनीलाभः पद्यराग इवापारः

रामाकार —वशीकारसम्पदा —द्वौ विरेजतुः ।।(2)

लव—कुश जन्म के उपरान्त ही शनैः शनैः बड़े होने लगते हैं और तपोवन में दोनों बालकों के कोलाहल की मधुर गुञ्जार सुनायी देती हैं। वे तपोवन में वानरों के साथ उछलते, कोयलों के संग गाते, तोंतो के साथ पढ़ते और मोरों के संग बचपन की अठखेलियाँ कर लेते थे।

यथा— कपिभिः कोकिलैः कीरैः शैशवे शिखिभिःसमम्

प्लुतं गीतमधीतञ्च नृत्तं ताभ्यां तपोवने ।। (3)

माता द्वारा प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करना—

माता बालक की प्रथम पाठशाला होती है माता के शिक्षित और नैतिक कर्तव्यों का ज्ञान बालक को अधिक प्रभावित करता है। वाल्मीकि आश्रम में माता सीता अपने पुत्रों के लिए समुचित प्राथमिक पाठशाला का अभाव जानकर उन्हें मुख से उच्चारित वर्णों एवं विभिन्न

1. वही— 8/4
2. वही— 8/10
3. वही— 8/13







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अवयवों से गिने जाते अंगों का सम्यक् परिचय करा दिया था, तभी तो शैशवावस्था में ही लव-कुश स्मृति —पटल पर अमिट ज्ञान प्राप्त हो गया था।

यथा— माता विद्यालयाभावं कलयन्ती स्वबालयोः

मुखोद्यवर्णानङ्काश्च कायवेधनवेदयत्

(साकेत सौ० 8—14)

नवीन परिकल्पना —

कवि भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने साकेतसौरभम् में नवीन परिकल्पनायें का भी बड़ा उदात्त , आकर्षक तथा उपदेशप्रद चित्रण करते हुए कहते हैं कि मनुष्य के व्यक्तित्व का परिचय देने वाला 'अहं' शब्द अ से ह तक के वर्णमाला के वास्तविक ज्ञान से ही सिद्ध होता है, क्योंकि अ और ह के अन्तर्गत जितनी भी शब्दावली बनती है वे सभी इन्हीं शब्दों से मिलकर बनती है। जिनसे हमारा पठन—पाठन श्रवण—मनन किया जाता है, इन्हीं शब्दों के अध्ययन मात्र से हम अपनी संस्कृति के शुद्ध स्वरूप का परिचय पा सकते हैं। यथा—

अहं वेद्यपदे किञ्चिद् व्यक्तित्व —परिचायकम्

अकारादि —हकारात्तन वर्णान् विज्ञाय सिध्यति। (1)

माता सीता अपने पुत्र लव —कुश को प्राथमिक शिक्षा को सामान्य नियमावली के रूप में शिक्षा ग्रहण कराती हुए कहती है कि पुत्र एक हाथ में पाँच अँगुलियाँ तथा दो अँगुलियों में छः रेखाएँ होती हैं, जिनमें



प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

(१) - यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

(२) - यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण

यह कि वह प्राचीन यज्ञ के अर्थ के सम्बन्ध में प्रमाण



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

एक—एक जोड़ते चलें तो दस अँगुलियों में तीस और क्रमशः अनन्त गिनतियाँ बन जाती हैं। ऐसे वाक्पटु माता की सन्तान कितनी सर्वज्ञानी चरित्रवान हो सकती है स्वयं कल्पनीय है।

यथा— पञ्चाङ्गुल्य करे षड् वै रेखा अङ्गुलियुग्मके  
एकैकयोजने त्रिंशद् भूयोऽनन्ताश्च ता इति ।(1)

राम का राज्य निरीक्षण—

साकेतसौरभम् में कवि ने राजा राम की राज्य भावना का बड़ा उदात्तविशुद्ध तथा ओजस्वी चित्रण किये है राजा राष्ट्र का केन्द्र होता है भारतीय राजा प्रजातन्त्र युग के अधिनायकों के दुर्गुणों से सर्वथा मुक्त होता है तथा स्वेच्छाचारी राजाओं के दोषों से भी विहीन होता है। वह प्रजा का सर्वभावेन हितचित्तक मंगलसाधक भारतीय धर्म का राजमहल होता है, अर्थात् धर्म की व्यवस्था तथा संचालन का उत्तरदायित्व राजा के ही ऊपर एक मात्र रहता है। उसी प्रकार जब राम दशमुख दशानन का विनाश करके अयोध्या आकर राज्यभार सँभालते है तो वह रात दिन अयोध्या नगरी पर पर्यवेक्षण किया करते थे, जिससे कि उनके राज्य में प्रजा का पालन हो और कोई प्रजा को न सताये और वेदत्रयी का भी अस्तित्व लुप्त न होने पाये जिससे विश्व को धारण करने वाला धर्म भी इसधरातल पर स्थापित रहे—

यथा— गगनात् पुष्पकासीनः स्वयं दशमुखात्ताकः  
चकार जयवाहिन्या नित्यशः पर्यवेक्षणम् ।। (2)

1. वही— 8/18

2 साकेत सौरभम्— 8/29







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अप्रतिम कल्पना का उदाहरण—

साकेतसौरभम् महाकाव्य में कवि ने सुन्दर कल्पना का उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, कवि ने पिता—पुत्र के मध्य युद्ध का वर्णन करना उचित न समझकर स्नेह रूपी साहित्य रस बरसाने का अद्वितीय उल्लेख किया है, यहाँ तक कि वाल्मीकि जी ने भी रामायण के उत्तरकाण्ड में राम अश्वमेघ की यज्ञभूमि में कुश—लव रामायण का गान करते हैं और इस तरह राम अपने पुत्रों का परिचय प्राप्त करते हैं। वाल्मीकि रामायण और बहुत सी राम कथाओं में कुश—लव ने राम की सेना तथा राम से युद्ध करने का वर्णन किया गया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि कवि को पिता—पुत्र के मध्य युद्ध का वर्णन अनुचित प्रतीत हुआ होगा इसलिए साकेतसौरभम् महाकाव्य में ऐसा वर्णन करना आधुनिक युग की पीढ़ियों को दिक्भ्रमित कर सकती है—

यथा— ययुं निग्रह्य तौ वीरौ वाहिनीमस्त्रवर्षणैः

रामञ्च निन्यतुर्मूर्च्छा साहितीर सवर्षणैः ।।(1)

इन वीरों ने अश्वमेघ का घोड़ा पकड़ लिया उसकी रक्षा में सेना बढ़ी तो उसे अस्त्र बरसा कर और राम आए तो उन्हें साहित्य—रस बरसा कर मूर्च्छित कर दिया।

साकेतसौरभम् में कवि गेय पदों के द्वारा भी महाकाव्य को अभिसिञ्चित किया है, अपने दोनों पुत्रों को देखकर राम विचार करते हैं कि दोनों पुत्र ऐसे प्रतीत हो रहे हैं जैसे जानकी के पुत्र हो—







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

यथा— सुरम्याऽस्य नासा हि सीताऽनुकारा

अमुष्यास्ति नूनं मदीयानुहारा

एक ही सुरम्य जानकी समान नासिका

अन्य की मुझे चिढ़ा रही प्रलम्ब नासिका ॥

पुरः स्पन्दमानं मदीयं भविष्यम्

किमेतद् द्विधा रुपामास्थाय लक्ष्यम् ॥

सामने दिखे भविष्य आज डोलता हुआ

शाख दो लिए शरीर वृक्ष डोलता हुआ

अकृन्तमनः सन्ततीनामभावः

कुले सन्ततोऽभूत तमिस्त्राप्रभावः ।

नवौ सूर्य चन्द्रावतारौ न जाने

मनश्चन्द्रिकायाश्चकोरौ न जाने ॥

सीतारामौ चिरं राज्ये प्रजाभिरभिनन्दितौ

नयतोऽनयतां त्रेतां भारतं विश्वभारतम् ॥ (1)

राम को जैसे ही यह पता चलता है कि लव कुश उनके पुत्र हैं, वैसे ही सीता से कहते हैं कि इस राज्य में पुत्र रत्न की कमी सभी माताओं को आत्मघात पहुँचा रही थी और तुमने तो सूर्य चन्द्र जैसे पुत्रों को जन्म देकर अयोध्या नगरी का भविष्य उज्ज्वल कर दिया। तब राम पुत्रों

1. साकेत सौ०— 8/40, 42, 43, 44







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

(लव—कुश) और पत्नी सीता के साथ अयोध्या प्रस्थान करते हैं। प्रजाओं द्वारा अभिनन्दित देवी सीता और श्री राम त्रेतायुग में विश्व वन्दित भारत वर्ष का नीतिपूर्वक संचालन करते रहे।

राम की महिमा—

साकेतसौरभम् महाकाव्य में राम ने अपने सौम्य वाणियों द्वारा मानवमात्र के लिए कल्याण की भावना को अग्रसर किये हैं। संकीर्ण स्वार्थ ही मानव यशोगाथा से इस सम्पूर्ण महाकाव्य की काव्य लता की कल्पलता के समान सभी सदहृदयी मानवों के मनोरथ को पूर्ण करती हैं।

प्रजा पालन की वेदी पर भगवान रामचन्द्र ने अपने जीवन—सर्वस्व की बलि देकर जो आदर्श उपस्थित किया है, वह हमारे राजवर्ग के लिए श्लाघनीय है। तभी तो अयोध्या राजकुल के कितने अच्छे आचरण थे, लंका वासियों के दुष्ट अयोग्य राजा के कारण ही वहाँ के लोग पाप कर्म में निपुण थे, यह भी राम काव्य रूपी साकेतसौरभम् में उद्घाटित किया गया है, आज भी हम भ्रम के वशीभूत होकर कालनेमि जैसे दुष्टात्मा की सेवा करते हैं, और स्वयं भी मुँह में राम बगल में छूरी रखने का कार्य कर रहे हैं।

साकेतसौरभम् महाकाव्य में कवि ने कहा है कि समाज में वही प्रगति पथ पर जा सकता है जो राम नाम का गुणगान करेगा। इस समाज के आगुआ कालनेमि नहीं रहेंगे, न ही शासन कार्य करने वाले (दशानन) जैसे दुष्टात्मा ही रहेंगे, हम सभी को विष्णु भगवान का सप्तम अवतारी राम की कथा हमें प्रगति पथ पर ले जायेगी। श्री रामचन्द्र जी की कालजयी कीर्ति आज भी लोक में चतुरस्र व्याप्त हैं, उसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता है और न कोई प्रतिकूल समीक्षा ही सम्मुख आयी हैं।







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम के गुणों का अनुशीलन करने वाले व्यक्ति को मानवता के ऊंचे पद पर पहुँचने तथा प्रतिष्ठित करने के लिए पर्याप्त है। रामायण में वाल्मीकि की दृष्टि में मानव-जीवन में सबसे श्रेष्ठ पदार्थ है चरित्र और इसी चरित्र से युक्त व्यक्ति की खोज करने पर नारद जी ने वाल्मीकि को इक्ष्वाकुवंशीय रामचन्द्र को सबसे श्रेष्ठ आदर्श बतलाया है।

यथा—

कां कथा कोसलेन्द्रस्य कम्प्रा तत्कीर्तिवल्लरी

काव्यकल्पलताऽऽकारा लोकक्षेमाय कल्पते ॥

साकेते किं शुभं कर्म लंकायां किञ्च कल्पषम्

इति रामकथा मर्म कावयवर्त्मनि राजते ॥

अद्यापि जनतामध्ये व्यापि रामस्य सद्यशः

काऽपि नो समता लोके नापि वामा प्रतिक्रिया ॥ (1)

रामकथा काव्यधारा में साकेतसौरभम् एक विलक्षण महाकाव्य है। इसकी विलक्षणता , भाव, एवं शिल्प दोनों पक्षों में दिखाई पड़ती हैं। डॉ० भास्कराचार्य द्वारा विरचित इस महाकाव्य में भारतीय सभ्यता झलकती है। इसकी रचनाओं में हमारी संस्कृति का विश्व रंगमंच पर भव्य रूप दिखलायी पड़ता है। इस काव्य की वाणी राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है।

1. साकेत सौ० — 8/47, 48, 49, 50, 51







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

(ख) महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

रामकथा के प्रख्यात इतिवृत्त में आचार्यों ने इस विरोधी परिवर्तनों की अनुमति नहीं दी है। आनन्द वर्धन के अनुसार—

सन्ति सिद्ध रसप्रख्या में च रामायणादयः

कथाश्रया न तैर्जोज्या स्वेच्छा रसविरोधनी 1

फिर भी औचित्य तथा विभिन्न पात्रों के चरित्रोन्मीलन को दृष्टि में रखकर रचनाओं में किए गए परिवर्तनों की अनुमति की गई है, यथा—

तद्यमत्र संक्षेप :—

वाल्मीकि व्यतिक्तस्य यद्येकस्यापिकस्यचित्

इष्यते प्रतिमार्थेषु तन्तदानन्त्यमक्षयम् । (2)

इस दृष्टि से साकेतसौरभम् का वस्तु विधान अनेक अभिनव एवं मनोरम भङ्गिगमाओं से परिपूर्ण हैं, जिसे दो शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है।

(1) विषय से सम्बन्धित शीर्षकों के आधार पर।

(2) वर्णन से सम्बन्धित शीर्षकों के आधार ।

विषय सम्बन्धित —

(1) पुष्पवाटिका सन्दर्भ— साकेतसौरभम् में प्रसन्नराघव तथा रामचरितमानस आदि में वर्णित पुष्पवाटिका सन्दर्भ को पल्लवित किया गया है। यहाँ सीता और राम का पूर्व राग पुष्पवाटिका में उन्मीलित होता है—

1. ध्वन्यालोक —पृ०—335

2. वही— पृ०— 542







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

मां सकृद् वीय होरा व्यपायेऽसि सा

सम्मुखं नैव तेने दृशौ पक्ष्मले

सा विजानाति मां सन्नताङ्गी प्रिया

तामहं केवलो वेधि भूमण्डले ॥ (1)

जादुई एक चितवन दुबारा इधर

जानकी ने न डाली बड़ी देर से

पर चमकने लगी है, किरण सी नई

देखकर हम परस्पर हुए एक से।

## 2. वाल्मीकि में दशरथ चेतना का अन्तरण—

साकेतसौरभम् में दशरथ की वत्सल चेतना की परवर्ती यात्रा औचित्यपूर्ण हो जाती है और चेतना के अन्तरण क्षण में श्रवणकुमार के पिता के शाप तथा कौंच घात के समय वाल्मीकि द्वारा दिए गए शाप की समान मानसिकता को आधार भूमि बनाया गया है, लेकिन रामकथा के आदि गायक वाल्मीकि को ब्रह्म के वरदान से दिव्य दृष्टि प्राप्त होने का उल्लेख मिलता है, प्रस्तुत महाकाव्य में इस तथ्य को उपर्युक्त रीति से आकल्पित किया गया है।

श्रवणस्य पितुः शापात् किमु राममनुद्रुता

कोसलेशस्य वै प्राणा वाल्मीकिश्वासमाविशन् ॥

कौंच घातं पुरो दृष्ट्वा क्षण साधारणीकृतः

रघुवंश रहस्यानां विज्ञः प्राचेतसोऽभवत् ॥ (2)

1. साकेत सौरभम् —1/57

2. साकेत सौ0 —2/45, 46



अथ श्रीमद्भगवद्गीतायां अष्टाध्यायः

अथ श्रीकृष्ण उवाच ॥

विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥

तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥

(१) ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥

अथ शिष्य उवाच ॥

विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥

तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥

॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥

अथ शिष्य उवाच ॥

विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥  
तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥  
अथ शिष्य उवाच ॥  
विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥  
तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥  
अथ शिष्य उवाच ॥  
विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥  
तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥  
अथ शिष्य उवाच ॥  
विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥  
तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥

अथ शिष्य उवाच ॥

विदुषो मया प्रोक्ताः सर्वे भवन्ति मे भक्तम् ॥

तस्मै विद्महे श्रीकृष्णाय नमः ॥

(२) ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

श्रवण के पिता के शाप वश राम के पीछे भागते हुए महाराज दशरथ के प्राण तपस्वी वाल्मीकि में समाविष्ट हुए और एक कौंच पक्षी की हत्या देखकर क्षणभर दशरथ जैसी संवेदनानुभूति उन्हें हुई और प्रचेता वंश के ऋषि वाल्मीकि रघुवंश के सूक्ष्म से सूक्ष्म रहस्य के ज्ञाता हो गये।

### 3. शबरी और जटायु की भक्ति भावना—

साकेतसौरभम् भट्टिकाव्य अथवा रावणवध, रामचरितमानस और वाल्मीकि रामायण आदि में वर्णित जटायु और शबरी की भक्ति भावना के सन्दर्भ को पल्लवित किया गया है। यहाँ सीताहरण के पश्चात जटायु रावण से युद्ध करके वीरगति को प्राप्त होता है। शबरी प्रभु के दर्शन करके स्वर्ग लोक (साकेत लोक) को चली गयी।

यमस्य भ्रातरो गृध्रा नृमांसप्रीत्यो लक्ष्याः

परं लोकोपकारे त्वत्समा नो ज्ञातयो लक्ष्याः

स्नुषासंरक्षणार्थम् राक्षसं क्षिण्वन्नतो दृष्टः

मया कीर्णच्छदः कल्पद्रुमो भूलुण्ठितो दृष्टः ॥

यथा—

रामं कान्तमिवोशती सतिलकंभालं सदा विभ्रती

कुट्यां साश्रु विलोचना बहिरहो सन्तर्जयन्ती वटून्

त्रेताग्नौ हुतराक्षसा सुरगणान् प्रत्यक्षमाजुह्वती

वैराग्येण वृताऽपि लोक—जननी रागान्विताऽवर्तत ॥ (1)







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

लंका में हनुमान का विडाल रूप में प्रवेश—

वृहद्धर्मपुराण (पूर्वखण्ड 20.2) तथा पद्मपुराण आदि में सीता की खोज के लिए हनुमान जी ने लघुविडाल का रूप धारण करने का उल्लेख मिलता है। अध्यात्मरामायण (5-3, 20) में गौरैया के आकार के लघु वानर का रूप वर्णित किया गया है। रामकथा की विभिन्न परम्पराओं में सीता की खोज के लिए हनुमान लंका में उद्विलाव (1) भ्रमर, मूषिका, ब्राह्मण, शुक, काक, भैसा, राक्षस (2) अथवा मशक (3) आदि का रूप धारण कर पहुँचते हैं। डॉ० त्रिपाठी ने इस सन्दर्भ में उद्विलाव के ही लघु रूप को मान्यता दी है।

यथा— लङ्कापुर विश शिशुर्वृषदंशकः सन्

लब्ध्वा स्वलक्ष्यमुपयाहि पुनः स्वरूपम् ॥

तथा विडालवपुरन्वैषीत् सीतां रक्षः पुरीगताम्

निशा निशान्त संचारी ब्रह्मचारी कपीश्वरः ॥ (4)

अशोक वाटिका में रावण का मूर्च्छित होना—

जब सीता की खोज करते हुए हनुमान जी अशोक वाटिका में पहुँचते हैं, जब तक हनुमान जी अशोक वृक्ष पर रहते हैं, वहाँ तब तक रावण नहीं आ पाता और रुद्रावतार हनुमान के क्रोध की आँच से रावण अचानक मूर्च्छित हो जाता है। मन्दोदरी की भावपूर्ण शिवस्तुति से वह चेतना में आता है और एक महीने बाद सीता —बध करने की धमकी भी देता है—

1. वाल्मीकि रामायण सुन्दरकांड -2/47

2. रामकथा (कामिल बुल्के) -पृ० -501

3. रामचरितमानस - 5.3.1

4. सा० सौ- 5/20, 21







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

रोषार्चिषा हनुमतः सहसा विसंज्ञो

मन्दोदरीकृत —हरस्तुति जातसंज्ञः

लज्जावशो दशमुखः पुररेकमासं

सीतावधावधिकृते प्रदिशन् निवृत्तः ॥ (1)

श्री राम का शक्ति रूप में सीता दर्शन—

यह साकेतसौरभम् का अत्यन्त महत्वपूर्ण सन्दर्भ है जब भी राम की नींद की अवस्था में सीता सिंहवाहिनी आदिशक्ति के रूप में दर्शन देती है। दशमुख के विनाश के लिए तूणीर को अनेक दिव्यास्त्रों से परिपूर्ण करती हुई भगवती सीता के दर्शन होते हैं।

सर्वस्त्रीनिलये सनातनि तवापाङ्.श्रितं भूतलं

वात्सल्यात् पवनात्मजाय सकलां त्वं ब्रह्मविद्यामदाः

मह्यं यच्च दशाननं दलयितुं दिव्यायुधाना व्रजं

तत् कात्यायनि का कथा मम नमो ब्रुयुः समे मानवाः ॥ (2)

जानकी की प्रतीकात्मक अग्नि परीक्षा—

साकेतसौरभम् महाकाव्य में जानकी अग्निपरीक्षा के सन्दर्भ में कवि ने बड़े ही कौशल से प्रतीकात्मक अकाल्पन दिया है। रावध—वध के पश्चात विजयोल्लास से चारित्र्यशीला सीता का भोर में खिली कमलिनी की तरह पावन मुखमण्डल आग की लपटों जैसा दमक रहा था—

1. वही— 5/32

2 वही— 6/18







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जानकी पावकस्निग्धां प्रातर्बुद्धां नु पद्मिनीम्

विलोक्य जनता मुग्धा राम शुद्धान्तसम्पदम् ॥ (1)

रामराज्य में शासक से पूर्व गुरुजनों की पूजा— श्री राम जी सूर्यवंशी राज्य में शासक से पहले गुरुजनों की पूजा होती थी। उस काल के अत्रि, वसिष्ठ आदि कई गुरु तो सप्तर्षियों में स्थान भी पा लिए थे इसी औचित्य को पल्लवित करते हुए साकेतसौरभम् में राजा के पूर्व गुरु की श्रेष्ठता का सूक्ष्म प्रतिपादन किया गया है—

रामराज्ये प्रभोः पूर्वं पूजिता गुरवः सदा

केचनत्रिवसिष्ठाद्याः सप्तर्षिपदवी ययुः ॥ (2)

रामसीता का शाश्वत पुनर्मिलन—

साकेतसौरभम् में प्रजाओं के अभिनन्दन द्वारा शाश्वत सम्मिलन महाकाव्य का सुखान्त निर्वहण रूपायित करता है—

सीतारामो चिरं राज्ये प्रजाभिरनन्दितौ

नयतोऽनयतां त्रेतां भारतं विश्वभारतम् ॥ (3)

रामकथा का निर्वहण विभिन्न रामकथाओं में पृथक पृथक ढंग से प्राप्त हुए हैं। भवभूति के उत्तररामचरितम् तथा आनन्दरामायण (8, 61-73) आदि परवर्ती रचनाओं में सीता एवं राम के मिलन से कथा के सुखान्त परिणति दी गई हैं। वाल्मीकि रामायण में सीता का भूमि प्रवेश करने वाली राम कथा दुःखान्त है—

1. डा० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन— मधुकराचार्य

त्रिपाठी —पृ०— 52

2. साकेत सौरभम् —7/54

3. वही— 8-44







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

यथैतत्सत्यमुक्तं में वेदिभः रामात्परं न च

तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति ॥ (1)

श्रीमद्भागवत (2) भावार्थ रामायण (3) आदि में भी ऐसी ही कथा आरेखित हैं पउमचरियं (4) में सीता के द्वारा अन्त में जैन दीक्षा लेने का उल्लेख मिलता है।

2. वर्णन सम्बंधी — साकेतसौरभम् में लोक विश्रुत रामकथा की वर्णन भगिमाएं सर्वथा नवीन है। इस दिशा में सजग कवि ने प्रथम सर्ग में ही कहा है कि दूसरों की परछाईं बनी रचनाएं हर कहीं मिल जाती है लेकिन अन्तश्चेतना से आप्लावित नवीन काव्य सूक्तियाँ कहीं— कहीं मिलती है—

अन्तच्छायामयी लक्ष्या ग्रन्थमाला गृहे—गृहे

अन्तश्छायामयी नव्या काव्य —रेखा क्वचित् क्वचित् ॥ (5)

काव्यशास्त्रियों की मान्यता है कि किसी भी वर्ण्य वस्तु का स्वभावोक्ति के माध्यम से भी अवस्था देश काल उक्तिवैचित्र्य एवं भाषा आदि के वैशिष्ट्य से अनन्त रूपों में प्रतिपादन किया जा सकता है।

अवस्थादेशकालादिविशेषैरपि जायते।

आनन्त्यमेव शुद्धस्य वाच्यस्यापि स्वभावतः ॥ (6)

इसके उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत महाकाव्य के बालिबध सन्दर्भ को दृष्टिगत कर सकते हैं बालि वही है, पर आधुनिक महाकाव्य के वर्णन में उसमें

1. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन—

डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृष्ठ —54

2. श्रीमद्भागवत —9—11, 15, 16

3. भावार्थ रामायण— 7.73

4. पउमचरियं —पर्व—101, 102

5. साकेत सौ०— 1/15

6. ध्वन्यालोक— 4/7







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

किसी भीड़ तन्त्र वाले कुख्यात नेता की झलक मिलती है—

इन्द्रवत् सर्वदा स्यन्दनस्थो लसन्

नम्रशाखामृगैः क्लिष्टगत्या ययौ

हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जन्तुं

नैव कश्चिन्नमस्कर्तुमत्याययौ ॥ (1)

अर्थात् सदा दिव्य रथ पर चढ़ा, हाथ जोड़े, वानरों की भीड़ चीरता हुआ वह इन्द्र की तरह रोब से चलता रहा। आह खून से लथपथ शरीर वाले बालि को कोई नमस्कार करने नहीं आया।

(क) सूक्तिपाक

(ख) संवेदनात्मक गीत

(ग) अभिनव लोकचित्र बहुतायत से देखने को मिलते हैं।

(क) सूक्तिपाक— रघुकुल के चारों ओर राजकुमारों में श्री राम अत्यन्त लोकप्रिय हो रहे थे इस सन्दर्भ को अंकित करते हुए कवि ने जिस बत्तीस अक्षर के अनुष्टुप छन्द की अवधारणा की उसमें आठ बार अर्थात् सोलह अक्षरों में 'राम' शब्द आता है। (2)

यह श्लोक अपने आप मुखर होकर कहने लगता है कि चारों ओर राम—राम का हल्ला मच गया—

चिदारामोऽभिरामोऽभूत परामषविरामकृत्

रामणीयकवान् रामो रमारामो निरामयः ॥ (3)

1. साकेत सौ० -4/18

2. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन —डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृ० —55

3. साकेत सौ० -2/2







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

अर्थात् — उन दिनों राम के स्वस्थ सुन्दर एवम् उदात्त व्यक्तित्व से सभी लोग बहुत प्रभावित थे। एक मुस्कान से शत्रुता का वैर भाव समाप्त कर करते हुए वे स्वयं विष्णु के अवतार प्रतीत होते थे आगे चलकर पुनः एक तथ्य सामने आता है कि राजमहिषी कैकेयी चाहती थी अपने बेटे का अच्छा भाग्य और राम का दुर्भाग्य और इस उपक्रम में मिटा डाला उसने अपना सौभाग्य

भाग्यं सुताय दुर्भाग्यं रामचन्द्राय वृण्वती

स्वकीयमेव सौभाग्यं महिषी स्वयमावृणोत् ॥ (1)

उपर्युक्त श्लोक में बिना छन्दोभङ्ग हुए महिषी के स्थान पर कैकेयी का भी प्रयोग किया जा सकता था ना समझी की पहचान बनने वाली भैस तथा रानी काएक साथ बोध कराने वाली महिषी शब्द में जो अभिव्यंजना है वह कैकेयी में कहाँ ।

(ख) संवेदनात्मक गीतः—

रामकथा वृहत्तर भारत की सामाजिक संवेदनाओं से तदाकार हो गई है किन्तु साकेतसौरभम् से पहले किसी महाकाव्य में ऐसी गीतात्मक अभिव्यक्तियाँ नहीं मिलती जो कथा के समानान्तर को रस सरिता में ऊब चूब कर सकें यह महाकाव्य अनेक सन्दर्भों में हमें उस धरातल पर पहुँचा देता है पुष्पवाटिका की रागात्मक गीत लहरी —

राजते मंजुकुंजेऽत्र रागारुणा

यादृशी जानकी लोभनीय नवा



...  
...  
...  
...  
...

...  
(1) ...

...  
...  
...

...  
...  
...  
...



साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

पुष्पभारेण नम्रा लता माधवी

तदृशी भूतले वर्ततां वा न वा ॥ (1)

राम की राज्याभिषेक सूचना पर समूह नृत्यगीत—

रामो भूमितले भव्यो भवतुराजा, रामो भूमितले ॥

भारद्वाज मुनि द्वारा प्रस्तुत गंगा युमना के संगम वर्णन का तीर्थ यात्रा गीत—

इह वारि वहन्मधुरं मधुरम्

भुवि धारयते कृषि कर्मधुरम्

मृदुरेणुकया निजकच्छमहीतलविस्तृतया

गंगायमुनेधिनुतो निलयं धनधान्यमयम्

कुरुतः सततं सलयं जगतीवलयम् ॥ (2)

शरभङ्ग आश्रम का तपोवन (3), महर्षि शरभङ्ग का चरम प्रस्थान गीत (4) रावण द्वारा मारीच से निवेदित किया गया आखेटक गीत (5) सीता हरण के अनन्तर विलाप गीत (6) महाकाव्य के अत्यन्त अविस्मरणीय सन्दर्भ हैं। पंचवटी से सीता का अपहरण होना, जंगली पेड़ों के तने से मत्था रगड़ते हुए राम जो करुण विप्रलम्भ गीत रोते हुए लक्ष्मण को सुनाते हैं वह अत्यन्त हृदयद्रावक वन पड़ा—

1. वही— 1/49, 58

2. वही —2/5, 14,

3. साकेत सौ0 —3/10, 19

4 वही— 3/22, 27

5. वही— 3/37, 46

6. वही— 3/50, 56







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

कान्तारे वा जलेडनले क्वचिदधुना चिरं शयिव्ये

हे सीते ! नो त्वा बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये ॥ (1)

कवि ने इसका हिन्दी काव्यानुवाद भी किया है—जल जंगल  
या ज्वलित अनल में सोता ही रह जाऊँ

हे सीता! मैं बिना तुम्हारे अब न जिऊँ मर जाऊँ ॥

चन्द्रहासखड्ग से अहात जटायु के प्रति श्री राम का उद्गार युग—युग  
तक प्रसांगिक बना रहेगा एक शहादत गीत के रूप में —

जटायो कस्यखड्गै कर्तितस्त्वं कुण्ठितो दृष्टः

मया कीर्णच्छिदः कल्प द्रुमो भूलुण्ठितो दृष्टः ॥ (2)

कहीं' कहीं गीतात्मक विधा से कथा का प्रवाह भी आगे बढ़ता है।  
उदाहरणार्थ— आनन्द विह्वल होकर भजन करते हुए हनुमान को जब श्री  
राम देखते हैं उस समय अंकुरित हुई आत्मीय संवेदना से लेकर बलि बध  
तक का समूचा प्रसंग एक ही गीत के विविध सोपानों में पल्लवित हुआ।  
(3) सीतान्वेषण के अन्तर वानरों द्वारा एक स्त्रोत गीत के माध्यम से  
हनुमान का अभिनन्दन किया गया है (5.45—4—8)

राम—रावण युद्ध एक ओजस्वी युद्ध गीत द्वारा प्रस्तुत किया है यथा—

बभौ रजोभिरुज्ज्वलो जनार्दनः सिताननः

प्रकामलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः ॥ (4)

अर्थात्—

धूल से भरा लगता राघव का गोरा तन

रक्त से रंगा रण में लाल हो गया रावण ॥

1. वही— 3/60, 69

2. वही 3/73

3. वही— 4/5—14

2. वही— 6/21

3. वही— 6/39—42







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

राम राज्याभिषेक के पूर्व दर्शन सम्बन्धी प्रकृति गीत (7.10—4—2) राजा राम के अभिनन्दन में गुरु मात्रामय गीत (7.62—68) तथा सन्तान हीनता से उद्विग्न राम द्वारा कुश—लव को देखकर सहसा स्फुटित वात्सल्य गीत रचना की असाधारण पहचान बनते हैं । यथा—

इमौ स्नेहशीलौ किशोरौ न जाने ।

मनश्चन्द्रि कायाश्चकोरौ न जाने ॥ (1)

(ग) अभिनव लोक चित्रण—

जो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो उसे लोक कहते हैं अतीत के सन्दर्भों को रचनाकार वर्तमान के समानान्तर देखता हुआ प्रायः रचना समाधि में उनका प्रत्यक्षीकरण करता है। उदाहरणार्थ राम—लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न दशरथ के रत्नजटिल राजमहल में एक साथ घुटने और हथेली पर चलते रहे। उनकी परछाईयाँ महल के असंख्य रत्नों में एक साथ संक्रान्त होती रही। कवि एक लोकचित्र की उत्प्रेक्षा करता है कि ये चारों भाई राजमहल में ही करोड़ों वानरों से भरे हुए चित्रकूट का दृश्य उपस्थित करते हैं। (2)

रत्नसौधेषु चत्वारः क्रीडन्तो जानुपाणिभिः

कपिकोटिसमाकीर्णम चित्रकूटम् दर्शयन् ॥ (3)

महाकाव्य के प्रकृति वर्णन सम्बन्धी सन्दर्भ अधिकांश लोकचित्रों से भरे हैं। यथा—भोर में बहने वाली हवा एक साथ कई दायित्वों का निर्वहन करती है, वह कमल समूहों को विकसित करने वाली जादूगरनी बन जाती है। भौरो को संचार क्रीडा सिखाने वाली नाट्य निर्देशिका बन जाती हैं और चारों ओर झाड़ियों को तथा जंगलों को सुगन्ध से नहलाती हुई बन जाती हैं, तरह —तरह के इत्रों के सौदागर —

1. वही— 6/39—42

2. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन—डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृ०—60

3. साकेत सौ० —1/31







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

जलजपुंज विजृम्भणमायिका

मधुकरावलिकेलि निदेशिका:

परिमलस्नपिता खिल पादप

क्षुपवनाः पवनाः परितो ववुः ॥ (1)

विक्रमसर्ग में पुष्पकारोही राम को समुद्र अनेक भङ्गिगमाओं में दृष्टिगोचर होता है कभी वही ऊँची लहरें उछालता हुआ स्वतन्त्रता के उल्लास जैसा प्रतीत होता है, कभी ऐसे कापालिक की प्रतीत देता है जो तट पर बिखरे शंख और सीपियों के बहाने से मुस्करा रहा हो तथा सफल होती तंत्रसाधना के क्षणों में फेन उगल रहा हो (2)

अभिषेक सर्ग के सूर्य दर्शन सन्दर्भ में प्रातः काल पक्षियों के कलरव द्वारा पायल की रुनझुन सी बिखेरती दिन लक्ष्मी का आगमन होता है। वैदिक ऋषि, वेद —पाठ करते हैं तो छात्र अपनी पाठ्य पुस्तकें उलटने लगते हैं, रम्भाने लगती है गाएँ और चारों तरफ फैल जाता है उनके दुग्ध फेन सा उजाला , दोपहरी की गर्मी में कहीं छाते, कहीं पंखे और कहीं मीठे शीतल पेय लोगों के हाथों में लहराने लगते हैं। सूरज आग की लपटों का हिरन बना हुआ आकाश में चौकड़ी भरता है। सायंकाल उसके विदाई क्षण में ही जल उठते हैं हवाओं में जगमगातें हुए जुगनूँ और अंतरिक्ष में चमकते हुए तारागण —

अयि पश्यत पूर्वस्यामपूर्वं दिशि कौतुकम्

गर्भस्थोऽपि तमोराज्यं परिवर्तयते रविः ॥ (3)

1. वही— 1/64

2. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन—डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृ०—61

3. साकेत सौरभम् —77, 52







साकेतसौरभम् की विलक्षणता एवं महाकाव्य की दृष्टि से वस्तु विधान—

महाकाव्य के दिग्विजय सर्ग में पुनः अनेक मनोहारी लोकचित्र दृष्टिगोचर होते हैं। गर्भवती सीता प्रायः एकान्त कक्ष में रहती है उनकी हल्दी सी पीली देह उस कक्ष में डोलती हुई ऐसी लगती थी जैसे जैसे आंचल तले ढकी दीपक की लौ —

हरिद्रापाण्डुरा रामा रहः कक्षनिषेविणी

दीपार्चिरिव लक्ष्याडभूदुत्तरीय —समावृता ॥ □(1)

कुश —लव की बालक्रीडा तपोवन की अत्यन्त सहज दृश्यावली उपस्थित करती हैं वे दोनों बालक वानरों के साथ उछलना, कोयलों से गाना, शुक—पक्षियों से पढ़ना तथा भौरों से मनोरम नृत्य करना अनायास सीखते जा रहे थे—

कपिभिः कोकिलै कीरैः शैशवे शिरिवभिः सगम्

प्लुतं गीतधीक्तंच नृतं ताभ्यां तपोवनं ॥ (2)

महाकाव्य की दृष्टि से साकेतसौरभम् का वस्तु विधान भी प्रायः परम्परा से चले आते हुए रामकथा काव्यों तथा वाल्मीकि रामायण के अनुसार ही है इस काव्य के प्रासंगिक एवं आधिकारिक प्रसंगों का स्वरूप पूर्ववर्ती रामकथा धाराओं से अलग नहीं है। विषय सम्बंधी कथानक, वर्णन सम्बंधी कथानक के नवीन रूप अवश्य दिखाई पड़ते हैं। इसीकारण साकेतसौरभम् के कथानक में एक नयापन अवश्य दिखाई पड़ता है।

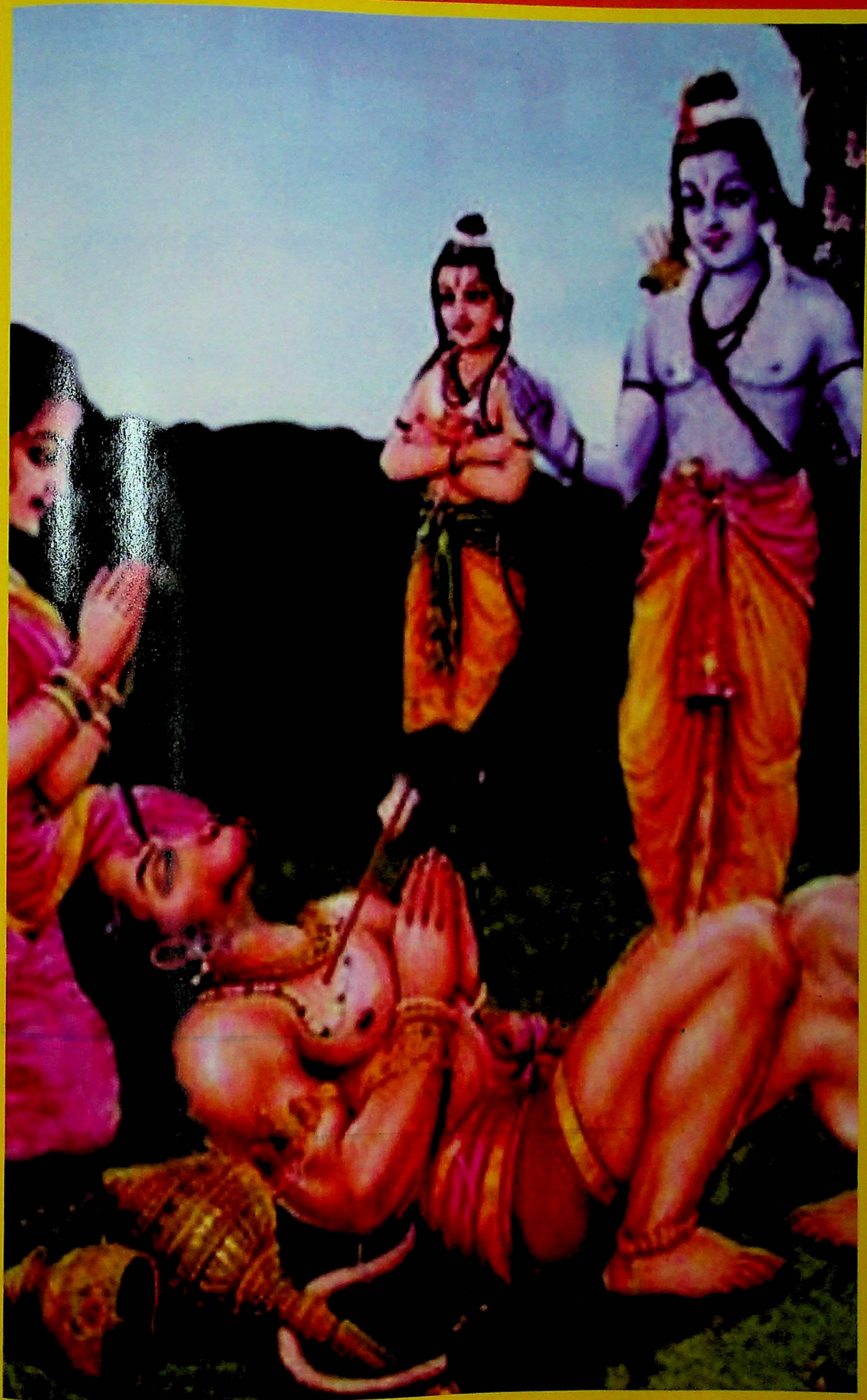
1. वही— 8/4

2. वही— 8/13















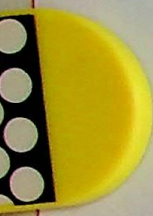
## चतुर्थ अध्याय

साकेतसौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

(क) भाषा, शैली, छन्द एवं अलंकार निरूपण

(ख) रस एवं भाव सम्पदा







## अध्याय—4

## साकेतसौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

## (क) भाषा—शैली छन्द एवं अलंकार निरूपण

भाषा—शैली— साकेतसौरभम् की भाषा अत्यन्त सरल एवं सहज है। शास्त्रीय दृष्टि से यह काव्य प्रसाद गुण समन्वित वैदर्भीरीति में उपनिबद्ध है। इसमें भाव भाषा का समन्वय, सरलता, सुबोधता आदि सभी गुण सन्निहित हैं, इसकी भाषा सुन्दर सरल, ललित, प्रांजल एवं परिष्कृत हैं। डॉ० त्रिपाठी जी की भाषा पर असाधारण अधिकार है। वे प्रसंग एवं भावों के अनुरूप शब्दावली का चयन करते हैं, अर्वाचीन महाकाव्य होने पर भी कालिदास आदि की भाषा के तुल्य प्रौढ़ता एवं परिष्कार परिलक्षित होता है। कथानक के संवेदनशील स्थलों पर समानान्तर हिन्दी काव्यानुवाद के कारण इस प्रबन्ध के अत्यधिक लोक प्रियता का हेतु बनता दिखलाई पड़ता है यथा—

मामत्यतं खलीकरिष्यति तव मैथिली धरित्री

राजर्षीणां तपोऽवनी सुचरितयोषितां सावित्री

वैदेहानामहं निरन्तर रुदितं कथं सहिष्ये

हे सीते! नो त्वया बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये ॥ (1)

हिन्दी काव्यानुवाद—

मुझे निरन्तर ताने देगी मिथिला भूमि तुम्हारी

ऋषि राजाओं की धरती कुल ललनाओं की क्यारी।

1. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन—

डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृ०—122



१-प्रस्तावना

प्रस्तावना यह है कि प्रस्तावना का प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना प्रस्तावना

प्रस्तावना



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

सारी मिथिला का विलाप किसी तरह सहन कर पाऊँ ।

हे सीता! मैं बिना तुम्हारे अब न जिऊँ मर जाऊँ ।।

यथा— गली मे, टुप्प, टुप्प धग् —धक् इत्यादि ।

समासिक पदों का प्रायः अभाव है जहाँ समास आए भी है अत्यन्त सरल रूप में यथा—

राक्षसतन्त्र— राक्षसाणि तन्त्राणि —बहु० (साकेत सौ० 6—39)

विगलदन्त्र — विगलन्ति अन्त्राणि यस्य स —बहु० (साकेत सौ० 6—40)

रिंगो हायकु जैसे प्रकृति वर्णनपरक अन्तराष्ट्रीय स्तर पर फैले जापानी छन्द को कवि ने श्री राम के द्वारा समुद्र वर्णन में प्रयोग कर संस्कृत काव्य परम्परा में क्रान्ति ला दी है, तथा इस अभिनव प्रयोग की सूचना स्वयं वर्णन के पूर्व रचनाकार ने एक अनुष्टुप छन्द में अर्न्तगर्भित कर दिये हैं ।

यथा— विलोक्य चन्द्रशालाया वीचिरिङ्ग पयोनिधिम्  
विहाय कुशलप्रश्नं प्राहः रामः शुचिस्मिताम् (1)

कवि ने सप्तम सर्ग में उल्लेख किया है कि तत्कालीन जनता ऐसे स्त्रोतों के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम राम की स्तुति करती थी। जिसमें एक भी लघु मात्रा नहीं होती थीं कवि ने भी 7—62 से 7—68 के पद्यों में ऐसा ही प्रयोग किया है ।

चलल्कल्पद्रुमाकारं शरण्यं करुणानिधिम्

तं त्रिलोकीगुरुं लोका गुरुमात्राभिरस्तुवन ।।(2)

भावाभिव्यक्ति के लिए जो वृत्त अनुकूल पड़ता है उसी का प्रयोग किया

1. साकेत सौ० —6/38

2. डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन—

डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी —पृ०—123







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

गया हैं इसी कारण कवि ने कहीं—कहीं वर्णित वृत्त से हटकर सुललित गीतों की संरचना की है। इस शिल्प से भाव संप्रेषण द्विगुणित हो उठा है। राज्याभिषेक के अवसर पर सारी जनता राम की स्तुति कर रही हैं—

यजनाज्जातो दिनकर वंशे

सगरभगीरथसुकृद वतंसे

कुशलो जातश्च शस्त्रदले

रामो भूमितले नव्यो भवतु राजा, रामो भूमितले

रामो भूमितले नव्यो भवतु राजा रामो भूमितले ॥ (1)

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि कवि को भाषा में पूर्ण अधिकार प्राप्त है। यत्र—तत्र अनुरणनमूलक शब्दों की एकाधिकार बार योजना करके पद्यों की श्रवणीयता द्विगुणित कर दी गई हैं। यथा—

टुप्प—टुप्प , धग् —धक् (2)

इत्यादि उदाहरणार्थ—

टर्—टर् ददुराह्वयन्ते

सङ्गीतकं वने रचयन्ते

शृणुयामस्मिन् प्रियारोदनं दूरादहह न सास्त्रचयम्

वर्षति दुप्प—टुप्प जलधारा धग् —धक् में हृदयम् ॥ (3)

1. साकेत सौ० —7/61

2. वही— 2/6

3. वही— 4/31—35





अथ यत्किञ्चिद्वाच्यं तत्तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

(१) तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

(२) तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं

तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं तद्वच्यं



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

अलंकार निरूपण— डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की कृतियों में रस पोषण के हेतु अलंकारों की योजना सम्पन्न हुई है। जिस प्रकार हारादि अलंकार नैसर्गिक सौन्दर्य की वृद्धि में उपकारक होते हैं, उसी प्रकार उपमा आदि अलंकार काव्य रसात्मकता के उत्कर्ष हैं यूनानी काव्यशास्त्र के अनुसार अलंकार उन विधाओं का नाम हैं जिनके प्रयोग द्वारा श्रोताओं के मन में वक्ता अपनी इच्छा के अनुकूल भावना जगाकर उनको समर्थ बना सकता है। (1)

दण्डी ने काव्य की शोभा करने वाले धर्म को अलंकार माना है। (2) वामन भी काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्म को अलंकार मानते हैं। (3) मम्मट का कथन है कि

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येडङ्गद्वारेण जातुचित ।

हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः ॥ (4)

अर्थात् जो धर्म, अंग अर्थात् अंगभूत शब्द और अर्थ के द्वारा उसमें विद्यमान होने वाले उस रस का हार इत्यादि के समान कभी उपकार करते हैं, वे अनुप्रास, उपमा आदि अलंकार कहलाते हैं। कुन्तक ने— “सालंकारस्य काव्यता” कहकर अलंकार को काव्य का अविभाज्य अंग माना है। (5) अलंकारों से भाषा और भावों की नग्नता दूर होकर उसमें सुषमा और सौन्दर्य की वृद्धि होती है नाटककार भाषा द्वारा जिन भावों का परिचय

1. हिन्दी साहित्यकोष ज्ञानमण्डल काशी, वि० सं० 2015—पृ०—60

2. काव्य शौभायाः कर्तारो धर्माः गुणः ।

तदतिशय हेतवस्तत्तलंकारा ॥ का अ० सूत्रवृत्ति— 3/12

3. काव्य शोभाकरान् धर्मान् अलंकरान् प्रचक्षते—का० अ०—201

4. का० प्र०—8/67 पृ० 49

5. अलंकृतिरलंकार्यर्मपोद्धत्य विवेच्यते ।

तदुपाचयतया तत्त्वं सालंकारस्य काव्यता ॥ व० जी० 106



संस्कृत भाषा में लिखी गई है।

यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।

(1) यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
(2) यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।

संस्कृत भाषा में लिखी गई है।

(3) यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।

यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।  
इस किताब में बहुत सारे विषयों पर लिखा है।

संस्कृत भाषा में लिखी गई है।

(4) यह किताब है जिसमें बहुत सारे विषयों पर लिखा है।

संस्कृत भाषा में लिखी गई है।



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

देना चाहता है, वह परिचय साधारण भाषा द्वारा नहीं दिया जा सकता । इसके लिए हृदय को स्पन्दित करने वाली विशेष सालंकार भाषा ही उपयोगी है ।

अलंकार समृद्धि की दृष्टि से साकेतसौरभम् महाकाव्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है काव्य में अनुप्रास , उपमा, रूपक, अलंकारों का वर्चस्व हैं ये सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहे हैं । शब्दालंकार के साथ ही अर्थालंकार भी इस महाकाव्य में प्रभूत मात्रा में प्राप्त होते हैं ।

### शब्दालंकार

अनुप्रास— वर्णों की समानता अनुप्रास हैं (1) साकेतसौरभम् में अनुप्रास अलंकार की अधिकता है ।

उदाहरणार्थ— कथा कर्णपथायाता श्री रामस्य यथा—यथा  
व्यथाऽपि वितथा जाता —प्रथा नव्या तथा तथा ।।  
चरुशीला चिरं श्रीला चिदुन्मीला महीतले  
मनः कीला विपन्मीला रामलीला विराजते ।।

(साकेत सौ० 1.17—18)

छेकानुप्रास — अनेक वर्णों का एक बार आवृत्ति रूप साम्य छेकानुप्रास है ।  
(2)

उदाहरणार्थ— वर्षासु लोकहर्षासु स्तोकतर्षात च क्षितेः

क्षितिजा विप्रकर्षातो रामोऽभर्षान्वितोऽद्रवत् । । (साकेत सौ० —4.30)

1. वर्णसाम्यमनुप्रासः — का० प्र० 9/103

2. सोऽनेकस्य सकृत्यपूर्णः का० प्र० —9.105







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

वृत्यानुप्रासः— एक वर्ण का भी और अनेक वर्णों का भी अनेक बार की आवृत्ति साम्य होने पर वृत्यानुप्रास होता है । (1) उदाहरणार्थ—

चक्रनिष्ठमिव दिव्यदोलकम्

मुकुर पृष्ठमिव ताम्रगोलकम्

अस्ताचलेपारे विलीयते

शनैरकूपारे निलीयते

चन्द्र निहितभरः प्रखरः प्रभाकरः ।

प्रभवति नभ्रतः प्रखरः प्रभाकरः (साकेत सौ० —7—48)

लाटानुप्रास — आवृत्त पद में तात्पर्य मात्र से भेद होने पर शब्दानुप्रास अर्थात् लाटानुप्रास कहलाता है । (2) उदाहरणार्थ —

रामेण सहिता सीता हिता हनुमादादयः

चिराय महिता लोके हिता अन्तर्हिता आपि ।।

अर्थात् श्री राम के साथ सीता तथा हनुमान आदि भक्त तभी से लोक वन्दित है वे अदृश्य रहकर आज भी सबका इष्ट साधन करते हैं । इस श्लोक में 'ह' और 'त' शब्द की छः बार आवृत्ति हुई है, अतः तात्पर्य भेद होने से यहाँ लाटानुप्रास है ।

इसी प्रकार अनुप्रास के अन्य उदाहरण भी द्रष्टव्य है—

दुर्जनं खंजनं मन्ये यत्कुष्ठौ श्यामिका भवेत्

संजनं मन्ये श्यामिका सोऽनुरञ्जयेत् ।। (साकेत सौ० —1.23)

1.. एकस्यातयकृत्परः — का० प्र० 9.106

2. शब्दस्तु लाटानुप्रासो भेदे तात्पर्य मात्रतः — का० प्र० —9.1/1



संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

कि प्रथम अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

(२५-१-१०००) अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।

अक्षर 'स' का स्थान 'क' के स्थान पर है।



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

जगाम काननं रामो नेक्षत श्रिय आननम्

ऋषीणां माननं चक्रे रक्षसांच विमानमम् ।।(साकेत सौ० -3.1)

अक्षयं सक्षयं कुर्वन् वाटिका प्रेतशाटिकाम्

ब्रह्मपाशमुरीचक्रे मेघनादस्य मारुतिः ।।(साकेत सौ० -5-38)

वन्दि-वृन्दारकाणांच वृन्दं नान्दीम् निनादयत्

मरन्दतुन्दिलां चक्रे पुष्पवृष्टिं नभस्तलाम् ।। (साकेत सौ० -6-32)

का कथा कोसलेन्द्रस्य कम्प्रा तत्कीर्तिवल्लरी

काव्य कल्पलताडडकारा लोकक्षेमाय कल्पते ।। (साकेत सौ० -8-47)

2. यमक— अलंकार में अर्थ होने पर भिन्न भिन्न अर्थ वाले वर्ण अथवा वर्ण समूह की पुनरावृत्ति हुआ करती हैं। (1) साकेतसौरभम् के किसी भी स्थल पर यमक अलंकार देखा जा सकता है।

उदाहरणार्थ—

भगीरथ हरिश्चन्द्र दिलीपरघु पद्यतिः

वन्दनीया हि सत्याय सर्वदा सर्वदा भुवि ।। (साकेत सौ० -1.

19)

यहाँ पर सर्वदा सर्वदा में यमक अलंकार है।

अमरं वानराकारं वन्दे भयहर हरम्

मा रुतिः सज्जनानां भूदिति जातः स मारुतिः

(साकेत सौ० -1.7)

यहाँ पर हरं हरम् में यमक अलंकार है डॉ० त्रिपाठी यमक के प्रयोग में सिद्धहस्त है कि किन्ही किन्ही स्थलों पर कई श्लोक की प्रत्येक पंक्ति में यमक अलंकार है यथा—







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

आकल्प कल्प तरु —राघवपाद पद्मं  
 सत्र्यक्षयक्षपति —विष्णुविरंचिसेव्यम्  
 वन्देय देयगुरु सदगुण सौरभस्य  
 येषाऽपि शापितचरी तदिदं न्यागादीत् ।।  
 पौरन्दरन्दनु कुलोपमितं चरित्रम्  
 धूर्तञ्चतंचटुल चन्द्रमसो विलासम्  
 ईशत्वसत्तव रहितानमरान् विलोक्य  
 रामस्य मस्यकलुषां कलये नमस्याम्

(साकेत सौ० १ —४५ —४६)

उपर्युक्त इन पद्यों की प्रत्येक पंक्ति में यमक दृष्टिगोचर हो रहा है।  
 इसके अतिरिक्त १.६२—६८ तक के पद्यों तथा २.२७—३२ तक पद्यों में  
 चतुर्थ चरण सर्वत्र यमक अलंकार है। यथा—

गृहकुचक्रवशाद् बहवो जना  
 अनुभवन्त्यपि निर्गृहतां सकृत्  
 मुखगता क्व परत्र विलोक्यता—

ममलकोमलकोकदच्छविः ।। (साकेत सौ० —२.२७)

इसके अतिरिक्त ३.३९ , ५.५. ४५ ७.४ , ८.४९ इत्यादि स्थलों पर भी यमक  
 दृष्टिगत हो रहे हैं।







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

श्लेष— जहाँ अर्थभेद के कारण परस्पर भिन्न शब्द उच्चारण सारूप्य के कारण एकरूप प्रतीत हुआ करते हैं वहाँ श्लेष अलंकार होता है। (1)  
साकेत सौरभम् में श्लेष अलंकार बहुत जगह दृष्टिगोचर हुए हैं।

स्पन्देत् सागरवृतो भुवि सर्वतो वा

वन्देत् ताणुण्डपटुः स्वर पण्डितो वा

कामं वराङ्गततिकृन्तन साहसोऽयं

म्लेच्छो दराक्षरमुखः खल राक्षसोऽयम् ।।(साकेत सौ0 —5.30)

अर्थात् उन्हें लगा कि यह समुद्र से घिरे परिक्षेत्र में रहे धरती पर छा जाए कितने भी स्वरों का ज्ञाता और ताण्डव गायन में प्रवीण हो, पर सिर काटने (अथवा व्यभिचार) का साहसी थोड़ा सा पढ़ा लिखा म्लेच्छ बड़ा ही दुष्ट राक्षस है यहाँ पर 'वराङ्ग' शब्द में श्लेष अलंकार है।

अर्थालङ्कार

साकेतसौरभम् में अर्थालङ्कार भी प्रभूत मात्रा में विद्यमान हैं, यथा—

उपमा— एक ही वाक्य में दो पदार्थों के वैधर्म्य —रहित तथा वाच्य सादृश्य को उपमा कहते हैं।(2)

उदाहरणार्थ— हन्तले वेधितो रक्तधाराततिं

गैरिकासार वन्निर्झराभः स्रवन

1. का प्र0 —9.118

2. छन्दोऽलंकार सौरभम् — डॉ० राजेन्द्र मिश्र —पृ०—64

साधर्म्यमुपमा भेदे ।। (काव्यप्रकाशः)

साम्यं वाच्यवैधर्म्यं वाक्यैक्यउपमा द्वयोः !!साहित्य दर्पण ।।







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

लक्षितो वीरबालो मूमूर्षाकुलो

भूतले संलुठन् क्लैशतः संब्रुवन् ।।

हे त्रिलोकीपते! हेतुना केन ते

बाणलग्ना घना प्राणपीडाऽऽययौ

हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जतनुं

नैव कश्चिन्नमस्कर्तुमप्याययौ ।।(साकेत सौ० -4.19)

हृदय की तलहटी में बाण लगने से गेरु मिश्रित झरने की तरह खून के फव्वारे फूट पड़े और लोगों ने देखा कि वीर बालि धरती पर लोटता हुआ मरणासन्न अवस्था में बड़े कष्ट से बोल पा रहा है— हे त्रिलोकीनाथ ! इस बाण की विकट पीड़ा में मुझे क्यों झोंक दिया । आह खून से लथपथ शरीर वाले बालि को कोई नमस्कार तक करने नहीं आया ।

रूपक— निरपहव अर्थात् अवहनव (निषेध) रहित विषय (उपमेय) में रूपित के आरोप को ही कहते हैं । (1)

अर्थात् रामचन्द्रोऽभवच्चन्द्रो वाल्मीकिरुदयाचलः

चकोरा वयमालोकं कलया कलयामहे ।। (साकेत सौ० -1-16)

1. छन्दोऽलंकार सौरभम् —डॉ० राजेन्द्र मिश्र—पृ०— 67

रूपकं रुपितारोपो विषयो निरवहनवे ।। साहित्य दर्पणः ।।

तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः (काव्यप्रकाशः)







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

अर्थात्

वाल्मीकि रुपी उदयाचल से उठकर इतिहास के आकाश पर श्री राम चन्द्रमा से उदित हुए थे हम सभी चकोर की तरह उनकी आंशिक उजास ही सहेज पाते हैं। यहाँ पर रूपक अलंकार है।

उत्प्रेक्षा— किसी प्रकृत अर्थात् प्रस्तुत वस्तु (उपमेय) की अप्रस्तुत वस्तु (उपमान) के रूप में सम्भावना करना ही उत्प्रेक्षा है। (1)

उदाहरणार्थ— अपां सूचीभिरभ्रोऽयं सव्रणं चरणं भुवः

सीव्यतीव जयत्येष दम्पत्योः स्नेह उज्ज्वलः ॥ (साकेत सौ० -4-36)

यह कितना सुहाना दाम्पत्य प्रेम है कि आए दिन (बादलों से ढका हुआ) आकाश पानी की बूँद सी चमकती सूर्यियों द्वारा धरती के पाँव तले की फटी बेवाइयाँ मानों (जोड़कर) सिलता रहता है। यहाँ पर उत्प्रेक्षा अलंकार है।

मीलित— जहाँ अपने स्वाभाविक अथवा आगन्तुक (तिरोधायक तथा तिरोधीयमान दोनों में समान रूप से रहने के कारण) साधारण चिन्ह से किसी के द्वारा वस्तु का आच्छादन कर दिया जाय वह मीलित (अलंकार) कहलाता है। (2)

1. छन्दोलंकार सौरभम् —राजेन्द्र प्रसाद —पृ०-69

भवेत् सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना ॥ साहित्य दर्पणः ॥

सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् ॥ काव्य प्रकाशः ॥

2. समेन लक्ष्मणा वस्तु वस्तुना यन्निगूंसते।

निजे नागन्तुना वापि तन्मीलितमिति स्मृतम् ॥ काव्यप्रकाशः —पृ०-540 ॥







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

सङ्गरे यातुधानीनां विलापै पृष्ठपातिभिः

सिंहनादगिरिः श्रव्या नाभवन् राक्षसां चिरम् (साकेत सौ० -6.8)

अर्थात्— युद्ध में (नवविधवा) राक्षसियों के पीछे से गूजते विलाप के कारण अधिक दिन तक राक्षस वीरों की ललकार नहीं सुनाई पड़ सकी। यहाँ पर मीलित अलंकार है।

सहोक्ति— जहाँ सह (शब्द के ) अर्थ सामर्थ्य से एक पद दो का वाचक (दो पदों से सम्बद्ध ) हो वह सहोक्ति कहलाती है। (1)

त्रयस्ते खगसंगीर्ण वटदुग्धकर्णः समम्

त्रिवेणीस्नातकाः प्रापुरक्षयं यशसो वरम् (साकेत सौ० -2-36)

अर्थात्— तीनों वनपथिकों ने पक्षियों से खचाखच भरे वट वृक्ष की टपकती दूधिया बूँदों के साथ त्रिवेणी -संगम में स्नान कर अक्षय कीर्ति का वरदान प्राप्त किया। यहाँ समम् के योग से एक तरफ टपकती अक्षयवट के वृक्षों से तथा दूसरी तरफ त्रिवेणी संगम में स्नान को दर्शाने के कारण यहाँ सहोक्ति अलंकार है।

विरोधाभास— जाति-जाति , गुण, क्रिया एवं द्रव्य—इन चारों के साथ , गुण—गुण, क्रिया एवं द्रव्य इन तीनों के साथ क्रिया—क्रिया एवं द्रव्य इन दोनों के साथ तथा द्रव्य—द्रव्य के साथ जहाँ विरुद्ध सा भासित ( प्रतीत हो, उसे विरोध अथवा विरोधाभास अलंकार कहते हैं। (2)

1. सा सहोक्तिः सहार्थस्य बलादेकं द्विवाचकम् । । काव्यप्रकाशः — पृ० -506 ।।

2. छन्दोऽलंकार सौरभम् पृ०-87-88

जातिश्चतुर्भिर्जात्याद्यैर्गुणो गुणादिस्त्रिभिः

क्रिया क्रियाद्रव्याभ्यां यद् द्रव्यं द्रव्येण वा मिथः ।।

विसद्वमिव भासेत् विरोधोऽसौ दशाकृतिः ।। साहित्य दर्पण ।।



संस्कृत भाषा में लिखा है

अथर्ववेद में लिखा है

(३३) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३४) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३५) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३६) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३७) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३८) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

(३९) - यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है

यह वेद वेदों में सबसे अधिक प्राचीन है



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

श्रान्तकल्पो नमोयात्री लोकालोक-परायणः

तृतीये प्रहरे जातो लोकालोक-समुत्सुकः ॥ (साकेत सौ० -7.41)

अर्थात्- लोक दर्शन करता हुआ आकाश -पथिक तीसरे पहर कुछ थकता सा लोकालोक पर्वत की ओर पहुँचने के लिए उत्सुक होने लगता है यहाँ पर विरोधाभास है।

अतिशयोक्ति- अध्यवसाय क्या है? विषयी (उपमान) के द्वारा विषय (उपमेय) का निगरण (न्यग्भाव अथवा अधः करण ) करके दोनों के पारस्परिक अभेदज्ञान को ही अध्यवसाय कहते हैं। इस अध्यवसाय के सिद्ध अर्थात् निश्चित होने पर ही अतिशयोक्ति होती है। (1)

पथि निष्ठायुतं सत्यं व्रतं दृष्ट्वा च बिद्रुतम्

स्वं-स्वं हृदयमनिन्युर्विकलां ग्रामवासिनः (साकेत सौ० -2.25)

अर्थात्-

मानों शरीर धारण किए निष्ठा , सत्य और व्रत को मार्ग में भटकता देखकर व्याकुल ग्रामवासियों ने अपने हृदय में बसा लिया। यहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ० त्रिपाठी का शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों के प्रति विशेष आग्रह है।

1. छन्दोडलंकार सौरभम् -डॉ० राजेन्द्र मिश्र-पृ०-71

रूपकातिशयोक्तिः स्यान्नियग्रध्यवसानतः।

पश्य नीलोत्पलद्वन्द्वन्निस्सरन्ति शिताः शराः ॥ चन्द्रलोकः ॥



अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

(अथर्व-संहिता) ॥ अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

(१) ॥ अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

(अथर्व-संहिता) अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता

अथर्ववेद-संहिता



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

---

श्लेष— 5—11, 5—30

यमक— 1—7, 19, 13, 45, 46

उपमा— 2—26, 28, 3—46, 49, 4—19, 22, 25, 8—4

पूर्वोपमा— 1—31, 37, 43, 72

रूपक— 1—2, 16, 6—1, 7—11, 15, 8—42

उत्प्रेक्षा— 1—23, 69, 3—30, 4—36, 40, 5—25 , 6—39, 7—2, 57

मीलित— 6—8

सहोक्ति— 1—40, 2—36

यथासंख्य— 8—33

विरोधाभास—7—41

प्रतीप— 1—50, 2—11 (तीसरी पंक्ति में )

अपहनुति— 1, 52, प्रथम दो चारण, में

सन्देह —1—52 (तृतीय चतुर्थ चरण में)

अतिशयोक्ति — 1—5, 57, 2—9, 11, 25, 38, 42, 5—19

विनोक्ति और विरोधाभास का संकर — 2.44

क्रिया दीपक— 3—4, 4—46







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

**छन्द—** काव्य में सौन्दर्य वृद्धि करने के लिए लय और गति से आवद्ध शब्दों की अभिव्यंजना की जाती है। लय तथा गति के समन्वय से की गई रचना, छन्द कहलाती हैं। संगीत शब्दों में प्राण डालकर मोहक और हृदयग्राही बना देता है छन्दों में शब्दों को क्रम से रखा जाता है, जिससे काव्य-सौन्दर्य द्विगुणित हो उठता है, केवल अक्षर या मात्राओं के अनुरूप रचना किए जाने पर ही वे छन्द नहीं हो जाते जब तक कि उनमें लय तथा गति का संयोजन हो क्रमबद्ध शब्दों का जो लय तथा गति से युक्त हो अर्थात् जो गेय हो, छन्द कहलाता है। नाट्यशास्त्र में छन्द का लक्षण इस प्रकार है वह रचना जिसमें अक्षरों तथा मात्राओं की गणना नियत है यथा स्थान उसमें यति है जो तालयुक्त चरणों में बँधी होती है, वह छन्द कहलाती है। (1)

छन्द की गणना वेद के छः अंगों में होती है। इसे वेद का चरण बताया गया है— छन्दः पादौ तु वेदस्य(2) (जैसे चरण विहीन व्यक्ति चल फिर नहीं सकता उसी प्रकार छन्द के बिना वेद (अथवा कोई भी काव्यग्रन्थ) गतिशील नहीं हो पाता है। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, तथा छन्द-वेद के, इन षड्गों में परिगणित होने के कारण छन्दशास्त्र तथा छन्द की प्राचीनता स्वतः सिद्ध हैं। वेदों में प्रायः सर्वत्र, त्रिष्टुप, जगती और विराटस्थाना आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है। यजुर्वेद के स्थलों को छोड़कर वेद संहिताओं का अधिकांश छन्दों में ही व्यवस्थित है। (3)

1. नियताक्षरे सम्बन्धे छन्दो यति यम्मिन्वितम्।

निबद्धन्तु पदं ज्ञेयं सतालयतनात्मकम्— ना०शा० -32, 39

2. छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पद्यते।

ज्योतिषामयनं चक्षुनिरक्तं श्रेत्रमुच्यते॥

शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरण स्मृतम्।

तस्मात् सागमधीष्वैव ब्रह्मलोके महीयते ॥ पाणिनीय शिक्षा॥

3 छन्दोऽलंकार सौरभम् —डॉ० राजेन्द्र प्रसाद—पृ०-5



1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100 101 102 103 104 105 106 107 108 109 110 111 112 113 114 115 116 117 118 119 120 121 122 123 124 125 126 127 128 129 130 131 132 133 134 135 136 137 138 139 140 141 142 143 144 145 146 147 148 149 150 151 152 153 154 155 156 157 158 159 160 161 162 163 164 165 166 167 168 169 170 171 172 173 174 175 176 177 178 179 180 181 182 183 184 185 186 187 188 189 190 191 192 193 194 195 196 197 198 199 200 201 202 203 204 205 206 207 208 209 210 211 212 213 214 215 216 217 218 219 220 221 222 223 224 225 226 227 228 229 230 231 232 233 234 235 236 237 238 239 240 241 242 243 244 245 246 247 248 249 250 251 252 253 254 255 256 257 258 259 260 261 262 263 264 265 266 267 268 269 270 271 272 273 274 275 276 277 278 279 280 281 282 283 284 285 286 287 288 289 290 291 292 293 294 295 296 297 298 299 300 301 302 303 304 305 306 307 308 309 310 311 312 313 314 315 316 317 318 319 320 321 322 323 324 325 326 327 328 329 330 331 332 333 334 335 336 337 338 339 340 341 342 343 344 345 346 347 348 349 350 351 352 353 354 355 356 357 358 359 360 361 362 363 364 365 366 367 368 369 370 371 372 373 374 375 376 377 378 379 380 381 382 383 384 385 386 387 388 389 390 391 392 393 394 395 396 397 398 399 400 401 402 403 404 405 406 407 408 409 410 411 412 413 414 415 416 417 418 419 420 421 422 423 424 425 426 427 428 429 430 431 432 433 434 435 436 437 438 439 440 441 442 443 444 445 446 447 448 449 450 451 452 453 454 455 456 457 458 459 460 461 462 463 464 465 466 467 468 469 470 471 472 473 474 475 476 477 478 479 480 481 482 483 484 485 486 487 488 489 490 491 492 493 494 495 496 497 498 499 500 501 502 503 504 505 506 507 508 509 510 511 512 513 514 515 516 517 518 519 520 521 522 523 524 525 526 527 528 529 530 531 532 533 534 535 536 537 538 539 540 541 542 543 544 545 546 547 548 549 550 551 552 553 554 555 556 557 558 559 560 561 562 563 564 565 566 567 568 569 570 571 572 573 574 575 576 577 578 579 580 581 582 583 584 585 586 587 588 589 590 591 592 593 594 595 596 597 598 599 600 601 602 603 604 605 606 607 608 609 610 611 612 613 614 615 616 617 618 619 620 621 622 623 624 625 626 627 628 629 630 631 632 633 634 635 636 637 638 639 640 641 642 643 644 645 646 647 648 649 650 651 652 653 654 655 656 657 658 659 660 661 662 663 664 665 666 667 668 669 670 671 672 673 674 675 676 677 678 679 680 681 682 683 684 685 686 687 688 689 690 691 692 693 694 695 696 697 698 699 700 701 702 703 704 705 706 707 708 709 710 711 712 713 714 715 716 717 718 719 720 721 722 723 724 725 726 727 728 729 730 731 732 733 734 735 736 737 738 739 740 741 742 743 744 745 746 747 748 749 750 751 752 753 754 755 756 757 758 759 760 761 762 763 764 765 766 767 768 769 770 771 772 773 774 775 776 777 778 779 780 781 782 783 784 785 786 787 788 789 790 791 792 793 794 795 796 797 798 799 800 801 802 803 804 805 806 807 808 809 810 811 812 813 814 815 816 817 818 819 820 821 822 823 824 825 826 827 828 829 830 831 832 833 834 835 836 837 838 839 840 841 842 843 844 845 846 847 848 849 850 851 852 853 854 855 856 857 858 859 860 861 862 863 864 865 866 867 868 869 870 871 872 873 874 875 876 877 878 879 880 881 882 883 884 885 886 887 888 889 890 891 892 893 894 895 896 897 898 899 900 901 902 903 904 905 906 907 908 909 910 911 912 913 914 915 916 917 918 919 920 921 922 923 924 925 926 927 928 929 930 931 932 933 934 935 936 937 938 939 940 941 942 943 944 945 946 947 948 949 950 951 952 953 954 955 956 957 958 959 960 961 962 963 964 965 966 967 968 969 970 971 972 973 974 975 976 977 978 979 980 981 982 983 984 985 986 987 988 989 990 991 992 993 994 995 996 997 998 999 1000 1001 1002 1003 1004 1005 1006 1007 1008 1009 1010 1011 1012 1013 1014 1015 1016 1017 1018 1019 1020 1021 1022 1023 1024 1025 1026 1027 1028 1029 1030 1031 1032 1033 1034 1035 1036 1037 1038 1039 104



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

जैसे व्याकरणशास्त्र के सूत्र पाणिनी , शिक्षाशास्त्र के सूत्र शौनकादि ने काव्यशास्त्र के सूत्र वात्स्यायन ने लिखे —ठीक उसी प्रकार छन्दशास्त्र के भी सूत्र महर्षि पिंगल ने लिखे। इसीलिए छन्दशास्त्र को कभी-कभी पिंगलशास्त्र भी कहते हैं। वेदमंत्रों की रचना की गई है— छादयन्ति ह वा एनं पापात् कर्मणः अर्थात् पापकर्म से अर्थात् आच्छादन किसका होता है? उत्तर है— भाव अथवा रसका। कविता चारों चरण काव्य रस की सीमा रेखा होते हैं।

चहि आह्लादने (भ्वादिगण धा० ७०) से भी छन्द शब्द निष्पन्न माना गया है। “चन्दयति आह्लादयति इति छन्दः” अर्थात् जो पाठकों को आह्लादित कर दे। यहाँ चदेरादेश्च छः (उणादि सूत्र) नियम से च का छ हो गया है तथा असुन् प्रत्यय जोड़ दिया गया है।(१)

आचार्य पिंगल छन्दशास्त्र के प्राचीनतम उपलब्ध सूत्रकार है। यद्यपि आचार्य पिंगल ने अपने ग्रन्थ में पूर्ववर्ती छन्दशास्त्र —प्रणेताओं का नाम गिनाया है जैसे काश्यप, सैतव आदि। परन्तु इस समय उनके किसी ग्रन्थ का ज्ञान हमें नहीं है। पिंगल सूत्रों की यादवप्रकाश नामक टीका में प्राप्त एक श्लोक से छन्दशास्त्र के प्राचीन विकास क्रम का परिचय मिलता है। इस विवरण के अनुसार छन्दशास्त्र भगवान शंकर से देवराज इन्द्र को, इन्द्र से दुश्च्यवान को, दुश्च्यवान से वृहस्पति से माण्डव्य को, माण्डव्य से सैतव को, सैतव से यास्क को और यास्क से पिंगल को प्राप्त हुआ।

इस प्रकार महर्षि पिंगल सुव्यवस्थित छंदशास्त्र के प्रथम आचार्य सिद्ध होते हैं।

पिंगलसूत्रों की यद्यपि अनेक टीकाएं की गई परन्तु सर्वाधिक लोकप्रियता हलायुधभट्ट —प्रणीत मृतसंजीवनी 'टीका को मिली।

1. छन्दोऽलंकार सौरभम् —डॉ० राजेन्द्र प्रसाद मिश्र— पृ०-५-६



संस्कृत भाषा में लिखा है

इति श्रीमद्भगवद्गीतायां अष्टाध्यायः समाप्तः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।

अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।

अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।

अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।  
अथ दशमोऽध्यायः ।



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

इस सन्दर्भ में एक विशेष तथ्य यह है कि आचार्य पिंगल का ग्रन्थ प्रायः लक्षणों का ही बोध कराता है। इसी कमी को दूर करने के उद्देश्य से भट्टकेदार ने, लक्ष्य -लक्षण -प्रतिपादक वृत्तरत्नाकर नामक छन्दशास्त्रीय ग्रन्थ लिखा, जो कि अपने ढंग की एक अनूठी कृति है। कालान्तर में इसी परम्परा में कलिदास ने श्रुतबोध, गंगादास, छन्दोमंजरी तथा क्षेमेन्द्र ने सुवृत्ततिलक नामक छन्दशास्त्रीय ग्रन्थ लिखे।(1)

दामोदर मिश्रकृत वाणीभूषण, श्रीकृष्णभट्ट प्रणीत वृत्तमौक्तिक भट्टचन्द्रशेखर -प्रणीत वृत्त मौलिक तथा वेकटेश -प्रणीत वृत्तरत्नावली इस परम्परा के अन्य ग्रन्थ हैं।

इसी प्रकार डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी भी छन्दों के प्रयोग में सिद्ध हस्त हैं। साकेतसौरभम् की छन्दोयोजना कवि की विविध वृत्त रचना की क्षमता से अधिक उचित अवसर पर अनेक प्रयोग से औचित्य की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण हैं। साकेतसौरभम् में सर्वाधिक अनुष्टुप का प्रयोग 238 पद्यों में हुआ है इसके अतिरिक्त भुजंगप्रयातन -11, अतिधृति भेद-1 गीत 53, द्रुतविलम्बित -14, प्रमाणिकता -40, शार्दूलविक्रीडित -16, रिङ्गोहायकु-7,

1. छन्दोज्ञानमिदं भवादभगवतो लेभे सुराणां पतिस्तस्माद दृश्यवनस्ततः

सुरगुरुर्माण्डव्यनामा यतः।

माण्डव्यादपि सेतवस्तत ऋषिर्यास्कस्ततः पिंगल स्तस्येदं यशसा गुरोर्भुवि धृतं  
प्रत्याऽस्ममदाघैःकुतम्

2. छन्दोडलंकार सौरभम् -डॉ० राजेन्द्र प्रसाद -पृ०-7







साकेतसौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

साकेतसौरभम् महाकाव्य की छन्द योजना इस प्रकार है—

### प्रथम सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 6, 7, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21,  
22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 37,  
38, 39, 40, 41, 42, 43, 44, 59, 60, 61, 69, 70, 71, 73

अश्वघाटी— 4, 5

स्रग्धरा— 8

स्राग्विणी— 49, 50, 51, 52, 53, 54, 5, 56, 57, 58

सवैया— 9, 10, 72

द्रुतविलम्बित — 62, 63, 64, 65, 66, 67, 60

वसन्ततिलका— 45, 46

### द्वितीय सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 4, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25,  
25, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 44, 45, 46, 47, 6, 7, 68

स्रग्विणी— 39, 40, 41, 42, 43

वंशस्थ— 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60, 61, 62

द्रुतविलम्बित — 27, 28, 29, 30, 31, 32

भुजंगप्रयाताम्— 66

शार्दूलविक्रीडित— 48, 49, 50, 51, 52, 63, 64, 65

गीत' — 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

### तृतीय सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 9, 20, 21, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34,

35, 36

47, 48, 49, 57, 49, 70, 71, 72

प्रमाणिका— 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19

शार्दूलविक्रीडित— —83, 84, 85

गीत— 60, 61, 62, 63, 64, 65, 6, 67, 68, 69

वसन्ततिलका— 50, 51, 52, 53, 54, 5, 56

शक्वरीभेद— 22, 23, 24, 25, 25, 27

अष्टिभेद — 6.73, 64, 65, 76, 77, 78, 79, 80

### चतुर्थ सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 4, 15, 16, 17, 28, 29, 30, 36, 37, 38, 39, 40,  
41, 42, 43,

44, 45, 46, 47

स्रग्विणी— 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27

गीत— 31, 32, 33, 34, 35

वसन्ततिलका— 48

अष्टिभेद— 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14

### पंचम सर्ग

अनुष्टुप् — 12, 13, 14, 15, 16, 21, 22, 38, 39, 40, 41, 42, 42, 43,

44, 49,







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

शिखरिणी — 1, 3, 4, 5, 6, 7, 8,9, 10

वसन्ततिलका—17, 18, 19, 20, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32,  
33, 34, 35, 36, 37

### षष्ठ सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 19, 20, 31, 32,  
33, 34, 35 36, 37, 38, 46, 47, 48 |

प्रमाणिका — 21, 22, 23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30

रिंगो हायकु— 39, 40, 41, 42, 43, 44, 45

शार्दूविक्रीडित— 14, 15, 16, 17, 18

### सत्तम सर्ग

अनुष्टुप्— 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 8, 9,20, 21, 32, 33, 41, 42, 53, 54, 55,  
56, 57 58, 59, 60, 61

प्रामणिका — 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 22, 23, 24, 25,  
26, 27, 28 29, 30, 31

द्रुतविलम्बित— 69

गीत— 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 43, 44, 45, 46, 47, 48, 49, 50,  
51, 2, 63, 64, 65, 6, 67, 68

### अष्टम सर्ग

अनुष्टुप् — 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 115, 16, 17,  
18, 19, 20, 21, 22, 23, 24, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33,  
44, 45, 46, 47 48, 49, 50, 51, 52, 53







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

भुजंगप्रयातम् — 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41, 42, 43

अतिधृतिभेद— 54

वसन्ततिलका—29, शिखरिणी—10, अष्टिभेदः—18, स्रग्विणी—25,  
जगतीभेद—10, शक्वरीभेद—6, वंशस्थ —10, सवैया, 3, स्रग्धरा—1,  
अश्वघाटी—2, अदि छन्दों का प्रयोग हुआ है।

इस प्रकार छन्दों की दृष्टि से हम यह देख चुके हैं कि साकेतसौरभम् में  
अधिकांशतः श्लोक अनुष्टुप छन्द ही हैं। अतिधृतिभेद, सवैया, वंशस्थ,  
वसन्ततिलका , शिखरिणी, रिगोहायकु आदि छन्द भी आये हैं।

इसी कारण हम यह कह सकते हैं कि साकेतसौरभम् के छन्द विधान  
आयामी भाषा शैली छन्दोयोजना, और अलंकार योजना की दृष्टि से यह  
महाकाव्य का महत्तम आदर्श को प्रस्तुत करता है।







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

(ख) रस एवं भाव सम्पदा— काव्य दृश्य हो या श्रव्य उसका अह्लादक होना आवश्यक है। इसी आह्लादकता के कारण आचार्य मम्मट ने काव्य को विधाता की दृष्टि से और कवि को विधाता से उत्कृष्ट बताया है। (1) काव्य स्रष्टा कवि नियति के नियमों से रहित नव रसों से रुचिर काव्य की रचना करते हुए सृष्टि प्रक्रिया में प्रजापति से श्रेष्ठ सिद्ध होता है। यह विलक्षण काव्य निर्भर सहृदय पाठक को आनन्दमय परिवेश में विभज्जित करता है। इस विलक्षण आनन्दमयता को परिनिवृत्ति कहा जाता है, जो सभी काव्य प्रयोजनों में श्रेष्ठ तथा काव्य पढ़ने के तत्काल पश्चात् रसास्वादन से आविर्भूत होता है। (2) काव्य से अनुभूत अलौकिक आनन्द का नाम ही रस है।

काव्यमीमांसा में रस काव्य की आत्मा कहा गया है। (3) मनुष्य में वासना रूप से वर्तमान रति, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय एवं निर्वेद आदि भाव रसप्रकरण की शास्त्रीय भाषा में स्थायीभाव कहे जाते हैं। इनमें से किसी को आस्वाद की दशा में परिणत करने के लिए अनुरूप विभावों अनुभावों एवं संचारीभावों का कवि संयोजन करता है। कारणभूत नायक, नायिकाएं या प्रतिनायक पात्र तथा उद्दीपन के लिए अनुकूल वातावरणादि विभाव कहे जाते हैं। कार्यभूत, भावोद्बोध का अनुभाव कराने वाली वाणी या अंगों की सात्विकादि चेष्टाएं अनुभाव कहलाती हैं। रह-रहकर आनेवाले मन के निर्वेद, आवेग तथा दैन्य प्रभृति भाव सहकारी होने से व्यभिचारी भाव कहलाते हैं। इन सबके संयोग के साथ ही अनिर्वचनीय रसवर्चणा होती है।

1. नियति कृत नियम रहितं हलादंभयीमनन्य परतन्त्रम्।

नवरस रुचिरां निर्मितिमाद धर्ती भारती कवेर्जयति।। का० प्र० -1.1

2. सकल प्रयोजन मौलिभूतं समनन्तरमेव रसास्वादन समदभूतं विगलति  
वेद्यान्त रमानन्दं प्रभुसम्मितं शब्द प्रधान वेदाधिशस्त्रेभ्यः सुहृत्समितार्थ तात्पर्य -सर्वथा यत्र यत्तनीयम्।"

3. काव्य -मीमांसा -पृ०-6



संस्कृत भाषा में लिखी है

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा में लिखी है - संस्कृत भाषा



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

भावों की रमणीय वर्णना या चारुत्तर अभिनय से ही सम्यग् रस निष्पत्ति होती है। कही कहीं देवादि विषयिणी रति या व्यभिचारी के ही मुख्यतः व्यङ्ग्य होने को अलग से भावध्वनि नाम दिया जाता है, अतः काव्यवृक्ष में अन्तर्नियामक रस की भाँति भावों का भी वैशिष्ट्य होता है। (1)

साकेत सौरभम् में देवविषयकरति से अनुप्राणित भक्तिरस ही अंगी रस में स्वीकारा जा सकता है। कवि ने लगभग सभी पात्रों के नायक राम विषयक अनुरक्ति का अभिव्यंजन पूरी कृति में किया है। अन्य अद्भूत भयानक श्रृंगार रौद्र वात्सल्य वीर आदि रस अंग में अभिव्यजित हुए हैं। देवविषयक रति भाव (भक्ति रस) का उदाहरण लीजिए पाषाणी मूर्ति बनी अहिल्या से राम का चरण छूने पर उसकी व्यथा दूर हो गई और उसके हिलते होठों से वन्दना के स्वर फूट पड़े।

आकल्पकल्पतरु राघवपादपद्यम्

सत्रयक्षयक्षपति —विष्णुविरचितसेव्यम्

वन्देय गेयगुरु सद्गुण सौरभस्य

योषऽपिशापितचरी तदिदं न्यागादीत् ।।

पौरन्दरन्दनुकुलोपमितं चरित्रं

धूर्तञ्चतंचटुलचनचमसो विलासम्

1. नाट्य शास्त्र में रसों एवं भावों का अलग अलग अध्याय में विशिष्ट वर्णन किया गया है। (षष्ठ अध्याय रसाध्याय —सप्तम —भाव व्यंजक) परन्तु यहाँ एक साथ रसों एवं भावों का विवेचन किया जा रहा है।

न भवहीनोऽस्ति रसो न भावो रस वर्जितः। परस्परकृतां सिद्धिस्तयोरमिनये भवेत् ।।

व्यंजनौषधि संयोगो यथान्नं स्वादुतां नयेत्। एवं भावा रसाश्चैव परस्परम् ।। (नाट्यशास्त्र —9-36-37)



सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

विज्ञान की प्रगति के बिना हमारे जीवन में बहुत कुछ संभव नहीं होता।  
जैसे कि बिजली, पानी, वायु, आदि।  
हमारे जीवन में बहुत कुछ संभव है।

(1) 1. सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

हमारे जीवन में बहुत कुछ संभव है।  
जैसे कि बिजली, पानी, वायु, आदि।  
हमारे जीवन में बहुत कुछ संभव है।  
जैसे कि बिजली, पानी, वायु, आदि।  
हमारे जीवन में बहुत कुछ संभव है।  
जैसे कि बिजली, पानी, वायु, आदि।

1. सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर

सामान्य ज्ञान के प्रश्नोत्तर



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

ईशत्वसत्तरहितानमदान विलोक्य

रामस्य मस्यमलुषां कलये नमस्याम् (1)

राज्याभिषेक के सन्दर्भ में सारी जनता गाँव एवं नगर की गलियों में तथा राजमहल के बाहर एकत्र होकर नृत्य करने लगती है। यहाँ भी भक्ति रस की स्पष्ट प्रतीति हो रही —

ययजनाज्जातो दिनकर वंशे

सगरभगीरथ सुकृदवतं से

कुशलो जातश्च शस्त्रदले

रामो भूमितले नव्यो भवतु राजा, रामो भूमितले

रामो भूतले भव्यो, राजा, रामो भूमितले । (2)

इसी प्रकार सम्पूर्ण राज्याभिषेक में सारी जनता राम का ही गुणगान करती है, वनवास के समय अयोध्या को बड़ा दुःख का अनुभव हो रहा था। द्वितीय सर्ग में ही महर्षि भारद्वाज संगम तीर्थ का महत्त्व, राम को बताते हुए त्रिवेणी संगम की स्तुति निम्न पद्यों से करते हैं—

हिमवानचलः सुतरां धवलः

स्रुत निर्मलपावन— शीतजलः

चिरमोषधिसार—समन्वितवारिकणैः सरयम्

गंगायमुने विगलत्कलितं सुखसारमयम्

कुरुतः सततं सरसं सलयं जगती वलयः ॥ (3)

1. साकेत सौरभम् —1/45, 46

2. वही— 2/6

3. वही— 2/39



अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

(1) अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

(2) अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव

(3) अथ यथा तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव तस्यैव



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

तृतीय सर्ग में शरभङ्ग आश्रम में यज्ञ प्रारम्भ करने के समय महर्षियों के बेबस रुदन करते देखकर राम ने राक्षसों का विनाश करना प्रारम्भ कर दिया। यही महात्मा हर्षपूर्वक आए दिन उनकी स्तुति किया करते थे—

अवात्य देवदर्शनं सुधा तृषाऽपि केशिता  
 इहाद्रिवासिनः परं प्रमोदमाशु लेभिरे।  
 अरण्यवीथिकासु जीर्णशीर्ण कीर्ण पल्लवा  
 रुचा समं नवीन— पुष्पसौरमाणि लेभिरे॥ (1)

अर्थात् भूख प्यास से टूटे हुए हम पर्वतीय अंचल के निवासी अपने आँगन में प्रभुदर्शन पाकर आज अत्यन्त आह्लादित हैं। हमारे साथ इन वन वीथियों की जीर्ण—शीर्ण उजड़े हुए पत्र दल भी निखर कर पुष्प सुगन्ध से भर गए हैं।

हनुमान जी ने तो राम के चरणों में अपनी आयु ही समर्पित कर दिये थे—

जटायुः शबरी चैव चिरायुर्वायुसम्भवः  
 स्वायुः समत्यं सीतायाः पत्यु पादौ सिषेविरे॥ (2)

वे सर्वदा राम की ही स्तुति किया करते थे—

हरिं विज्ञातवान् कीशो हरं विज्ञातवान् रामः  
 उभौ सालिङ्गनं बद्धौ समोऽभूत प्रेमपरिणामः  
 सदा सीतापतेर्भक्तौ व्रती दृष्टो महावीरः  
 हरिं श्रीरामनामानं जवन् दृष्टो महावीरः॥ (3)

1. वही— 3/10

2. साकेत सौ० —4/2

3. वही— 4/8







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

पंचम सर्ग में सीता के अन्वेषण में सफल हुए पवनकुमार की सभी वानर एकत्र होकर स्तुति करते हैं—

चिन्तपिशाचीयपनयति तव वन्दनं सुखतिजनान्

हे जानकी सन्देशहर रुद्रावतार विभुर्भवान् ।

सिन्दूरंजित दक्षिणाननमूर्तिमंजुल शुभनिधे

अज्जनानन्दन जनानन्दन जय पवन सुत बल निधे ॥ (1)

सप्तम सर्ग में रामराज्य के वर्णन में डॉ० त्रिपाठी लिखते हैं कि आयु, आरोग्य और युद्ध में विजय दिलाने वाले राम नाम का मंत्राक्षर बनाकर सभी जन विपत्तियाँ पार कर जाते थे। वे आए दिन त्रैलोक्य स्वामी की गुरुमात्राओं वाले स्त्रोत से स्तुति किया करते थे—

सद्वश्यानां देवादीनामेकं ध्येयं वन्दे

सन्धिः सेव्यं कौशल्येयं नित्यं गेयं वन्दे ॥ (2)

उपर्युक्त स्थलों के अतिरिक्त लगभग सर्वत्र देव-विषयकरति दृष्टिगोचर होता है। काव्य में देवविषयकरति दो रूपों में दृष्टिगत होती हैं— एक तो पात्रों के प्रति दूसरी कवि की चरित्र नायक राम के प्रति। पात्रों की पात्रों के प्रति देव विषयारति उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट हो रहा है। इसके अतिरिक्त काव्य में कवि की देव विषयारति का भी बाहुल्य है। (3) कवि कई स्थलों पर राम को विष्णु का अवतार कहते हैं। यथा—

“विनेतु दुर्जनान् नेतुं जनानग्रे जनार्दनः

अपनेतु जगदभारमजन्मा जन्मभागभूत ॥ (4)

1. वही— 5/47

2. वही— 7/62

3. वही— 1/27







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

कवि ने प्रथम सर्ग में ही कह दिया है कि राम कथा ज्यों- ज्यों सुनने में आती है वैसे ही सभी दुःख दूर हो जाते हैं और सुख की लहरें लहराती हैं।

कथा कर्णथायाता श्रीरामस्य यथा-यथा

व्याथाऽपि वितथा जाता प्रथा नव्या तथा तथा (1)

इससे यह सिद्ध होता है कि चरित नायक राम के प्रति डॉ० त्रिपाठी की अपार श्रद्धा है अष्टम् सर्ग में कवि कहता है कि समाज के अगुआ न कालनेमि बने और न दशानन सप्तम विष्णु अवतारी राम की कथा सम्पूर्ण समाज को यही प्रगति पथ बतलाती है—

न नेता कालेनेमि स्यात् प्रजेशो वा दशाननः

सत्पथं प्रथयत्येषा सप्तमस्य हरेः कथा ।। (2)

इस प्रकार से कवि के आराध्य नायक राम के प्रति एवं अन्य पात्रों के प्रति देवविषयारति भाव स्पष्ट हैं। पूरे काव्य का अंगीरस देवविषयारति से अनुप्राणित भक्ति रस निर्विवाद हैं।

श्रृंगार रस —

कामदेव के उद्भेद को —श्रृंग कहते हैं, उसकी उत्पत्ति के कारण, अधिकांश उत्तम प्रकृति से युक्त रस श्रृंगार कहलाता है। (3) इसके दो भेद हैं—विप्रलम्भ और सम्भोग। (4) काव्य में श्रृंगार दोनों ही भेदों का वर्णन है।

1. साकेत सौरभम् -1/17

2. वही- 8/50

3. साहित्य दर्पण- 3/183

4. वही- 3/187







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

सम्भोग श्रृंगार रस— एक दूसरे के प्रेम में पगे नायक और नायिका जहाँ पर परस्पर दर्शन, स्पर्श आदि करते हैं , वह सम्भोग श्रृंगार कहलाता है प्रथम सर्ग मे मिथिला की पुष्प वाटिका में राम सीता को देखते ही अनुराग युक्त होने लगते हैं कवि सीता के रूप का वर्णन करते हुए कहते हैं—

कर्णान्तलोचनां गौरीमरविन्दनिभाननाम्

लक्ष्मणामनां पश्यन् पिप्रिये लक्ष्मणाग्रजः ॥ (1)

राम का मन कुछ इस प्रकार से अनुरागमय है—

राजते मंजुकुंजेडत्र—रागारुणा

यादृशी जानकी लोभनीया नवा

पुष्पभारेण नम्रा लता माधवी

तदृशी भूतले वर्ततां वा न वा ॥ (2)

सम्भोग श्रृंगार के अन्य उदाहरण—

सा सखीभिः समं गोंपिता स्पन्दते

मदृशा तत्समं वाटिका स्पन्दते

जायते चिन्तवृत्तिर्विधे कीदृशी

वत्क्षणे मैथलीशाटिका स्पन्दते ।

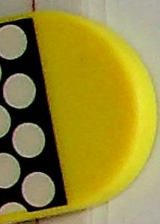
मुग्धायाडयं दुराशाभिरा पाशितः

पार्श्ववतीं युवा वेद्यतां वा न वा

1. साकेत सौ 1/48

2. वही— 1/49







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

पुष्पभारेण नभ्र लता माधवी

तादृशी भूतले वर्ततां वा न वा ॥(1)

यहाँ राम कह रहे हैं कि सीता सखियों के साथ चल रही हैं, पर मुझे ऐसा लग रहा है कि पूरी वाटिका चल रही हैं। चलते समय जैसे साड़ी हिल रही है, उसी प्रकार मेरे मनोभाव भी लहरा रहे हैं। यहाँ सम्भोग श्रृंगार की स्पष्ट प्रतीति हो रही हैं। आठवें सर्ग में भी सम्भोग श्रृंगार का वर्णन है, जब राम सीता का परित्याग करने के बारह वर्ष बाद पुनः मिलन होता है। राम संवेदित होकर कहने लगते हैं—

विप्रलम्भ श्रृंगार—

जहाँ अनुराग तो अति उत्कृष्ट है परन्तु प्रिय समागम नहीं होता उसे विप्रलम्भ (वियोग) कहते हैं। (2) तृतीय सर्ग में रावण छल से सीता हरण कर लेता है। घबराई मछली की तरह इधर उधर भागती जनक—नन्दिनी को उसने तीव्र बल प्रयोग पुष्पक विमान पर चढ़ाया तो वे पपीहरी की तरह करुण विलाप करने लगती हैं।

कोऽयं क्षणः किमभवत् क्व नु यामि चाहं

हा रामभद्र भगवन् भुवनैक बन्धो

अस्यादचित्यनरकाच्छलिनोऽभिषङ्गान्

मां रक्ष राक्षस विमर्दक दीन बन्धे ॥ (3)

राम सीता के बिरह में व्याकुल होकर करुण विलाप करते हैं।

1. साकेत सौ० -1/56

2. साहित्य दर्पण -3/ 187

3. साकेत सौ० -3/50







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

साकेते नो पुरे ज्वलिष्यति निशि देहली –प्रदीपः

तातं हत्वा वधूं जहीर्षति विधराग्रही प्रतीपः ।

कौशल्यायाः पुरः क्षणं हतवदनं कथं करिष्ये

हे सीते! नो त्वया विना पलमपि जीवित धरिष्ये ॥ (1)

राम कहते हैं कि हे सीता ! तुम्हारे बिना अयोध्या में दीपक नहीं जलेगा, लोग कहेंगे कि पिता ने बहू छीन लिया, हे सीता ! मैं तुम्हारे बिना एक पल भी नहीं जी पाऊँगा ।

राम कहते हैं कि प्राणों से भी अत्यधिक है जानकी यदि तुम्हें न पाऊँ तो अकेले अयोध्या लौटने का साहस कभी न जुटा पाऊँगा ।

प्रणोभ्योऽपि परं प्रीते त्वां नो चेद् वल्लभेलभे,

एकलस्तर्हि नायोध्या जातु यातुमहं क्षमे ॥ (2)

राम सीता के विरह में व्याकुल हैं—

टर्-टर् दर्दुरा हवयन्ते

सङ्गीतं वने रचयन्ते

ऋणुयामस्मिन् प्रियारोदनं दूरादहह न सास्त्रचयम्

वर्षतिं टुप् –टुप् जलधारा धक् धक् कुरुते में हृदयम् ॥ (3)

अर्थात् मेढ़क टर् टर् की टेर लगाए हैं, जैसे कोई सामूहिक संगीत चल रहा हो। ऐसे में आँसुओं से प्रिया का भरीया रुदन स्वर दूर से कैसे सुनाई पड़ने लगे? उधर टुप् –टुप् पानी रुकता नहीं इधर मेरी धुक-धुकी और उद्वेग बढ़ने लगी है।

1. वही— 3/62

2. वही— 3/70

3. साकेत सौ० —4/33







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

वियोग श्रृंगार का सांगोपांग वर्णन भला और कहाँ देखने को मिल सकता है—

प्रावृष्यं व्यतीयाय रामो मासद्वयं गिरौ

सलक्ष्मणो रुदन् —मूर्च्छन् पतन् धावन्ततन्द्रितः ॥ (1)

अर्थात्— सीता के विरह में राम वर्षा ऋतु के दो महीने उस पर्वत पर बिताएँ । उन्हे नींद कहाँ आती थी, कभी रोते , मूर्च्छित होकर गिर पड़ते और कभी इधर उधर भागने लगते थे ।

करुण रस— इष्ट के नाश और अनिष्ट की प्राप्ति से करुण रस आविर्भूत होता है । (2)

तृतीय सर्ग में सीता हरण के पश्चात राम सीता का अन्वेषण करते हुए घायल जटायु को देखते हैं—

हा पुत्रि हेतु हिक्कतं रक्ताक्तं गृध्रनायकम्

समालोक्य सृतौ तुल्यां प्राणपीडां स चान्वभूत् ॥ (3)

अर्थात् चोंच हिलने से हाय बेटी हाय जैसी हिचकियाँ भरते खून से लथपथ गीधराज को मार्ग में पड़ा देखकर राम को समतुल्य प्राण पीडा का अनुभव होता । यहाँ करुण रस का बहुत सम्यक् विनियोजन है ।

रौद्र रस—

इसमें क्रोध स्थायी भाव है । इसमें 'आलम्बन' शत्रु होता है और उसकी चेष्टाएँ 'उद्दीपन' होती हैं । मुक्का मारने, गिराने, बुरी तरह काटने, फाड़ देने, युद्ध करने के लिए बेताब होने आदि के वर्णन से रौद्र रस की खूब प्रदीप्ति होती है । (4)

1 वही— -4/42

2. साहित्य दर्पण— 3/27-28

3. साकेत सौ0 —3/72

5. साहित्य दर्पण 3/20-30



संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

(1) संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

(2)

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

(3) संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

संस्कृत भाषा में लिखी गई है

(4)



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

सीता हरण हेतु (बदले की भावना) रावण के द्वारा मारीच को निर्देशित करनेपर रौद्र रस की अनुभूति हो रही है—

प्रतीकाराय पद्भ्राता सीताहरण लालसा

माया चतुर मारीचं निर्दि देश दशाननः (1)

सुग्रीव बालि से युद्ध करने के लिए तत्पर बालि सुग्रीव से कहता है—

जाल्मसुग्रीव उदामराज्य स्पृहो

बन्धुवैरेण दिग्भ्यो दिशः सृष्ट्वरः

एकमुष्टिं मदीया न वै सोदवान्

वेपितः स्विन्नगात्रोऽभवद् गत्वरः

संश्रयं ते पिनाकद्विषो लब्ध्वा

नेष मल्लीभवन् —वेगवानाययौ

हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जत्तनुं

नैव कश्चिन्नमस्कर्तुमप्याययौ(2)

अर्थात् एक अरसे से नासमझ सुग्रीव राज्य हथियाना चाहता था। मेरे वैर से इधर —उधर भागता रहा। मेरे एक घूँसा भी वह नहीं झेल पाया, काँप गया और पसीने —पसीने होकर भाग चला। यह तो शिवधनुष तोड़ने वाले का सहारा पाकर आज ही पहलवान बनकर पुनः आया।

इसी प्रकार रौद्र रस की प्रतीति काव्य में अन्य स्थलों पर भी हो रही है।

वीररस— जब रावण अपना चन्द्र हास लहराता था तो सभी देवता अपना

1. साकेत सौ० —3/36

2. साकेत सौरभम् —4/23, 24, 25, 26



संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ (संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ)  
— संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ —

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

(संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ)

— संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ —

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

(संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ)

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ

संस्कृत भाषा का शास्त्रीय ग्रन्थ



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

अस्त्र शस्त्र फेंक देते थे । पवनदेव भी उदास हो जाते थे, चन्द्रमा अपने आप को अनाथ समझने लगता था और सूर्य भी शक्तिहीन हो जाता था—

शिरः शूली शूली विधिरपि विधेयश्च विपदां

परं वक्री चक्री मरुदथ रुदन् बालक निभः

निशानथोऽनाथाऽभवदपि च दीनो दिनमणि

स्त्रिलोक्यां निस्त्रिशं तरलयति तस्मिन् दशमुखे(1)

यहाँ रावण की वीरता के वर्णन में वीर रस का मंजुल प्रयोग हुआ है।  
चतुर्थ सर्ग में बालि कहता है—

आगमिष्यूद् रणे चेत् समक्षं भवान्

नूनमन्योऽभविष्यन्मिथो निर्णयः

सद्वरार्क्षमात्रात्मको वैरिणः

क्रामितः स्यात् तनौ में बलानां चयः ।

इत्यहो सम्मुखीकृत्य वृक्षावलीं

गात्रमाविध्य में लक्ष्यतामाययौ

हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जतनुं

नैव कश्चिन्नमस्कर्तुमप्याययौ (2)

अर्थात् बालि राम से कहता है— यदि आप सामने युद्ध किए होते तो निश्चय ही

1. वही— 5/5

2. वही— 4/20







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

परिणाम बदल देता । मुझे ऐसा अचूक वरदान है, जिससे ललकार कर लड़ते हुए शत्रु का आधा बल मेरे शरीर में संक्रामित हो जाता । इसीलिए तो पेड़ों की ओट से मुझे घायल कर सामने का साहस किया। यहाँ भी वीररस का स्पष्टतया प्रतीति हो रही है। राम रावण युद्ध के संदर्भ में पूरीतरह से वीररस ही समाया हुआ है—

अपूर्वो भुवने सोऽयं धर्माधर्मरणोऽभवत्

यदस्त्रसङ्कुलव्योमनः शून्यसंज्ञावृथाऽभवत् (1)

अर्थात् यह धर्म और अधर्म की लड़ाई त्रिभुवन में अपने ढंग की निराली थी। फेंक कर मारे जानेवाले हथियारों से खचाखच भर गया था आकाश, जिससे उसका शून्य पर्यायवाची उन दिनों निरस्त हो गया था।

भयानक रस— प्रथम सर्ग में ताड़का के वर्णन में भयानक रस की योजना विश्वामित्र के साथ राम और लक्ष्मण सिद्धाश्रम जा रहे थे, वहीं उन्हें रास्ते में भयभीत कर देने वाली राक्षसी ताड़का मिली जिसके केश अत्यन्त अस्त व्यस्त थे और विशालस्तन घड़ों की तरह आन्दोलित हो रहे थे—

सिद्धाश्रम पथे दृष्टा घटाकार पयोधरा

कर्कशा कीर्णकेशा च राक्षसी कापिताड़का ॥ (2)

इसी प्रकार पंचम सर्ग में लंका दहन के अनन्तर —

लंका ज्वालावलीढाङ्का वीक्ष्य कङ्कालशेषिताः

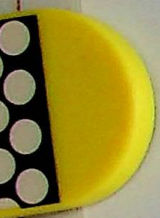
कान्तिशीकाः कुलाङ्गारे कां कां कालिम् न चिक्षिपुः । (3)

1. साकेत सौ0 -6/20

2. वही— -1/41

3. वही— 5/41







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

अर्थात् हर ओर से लपटों में घिरी लंका देखकर कहीं भागने का रास्ता न पाते हुए, हड्डी का ढाँचा बने अधजले राक्षसों ने कुल के अङ्गारे रावण को आक्रोशपूर्वक क्या क्या गालियाँ दे डाली।

वीभत्स रस— वीभत्स रस का स्थायीभाव जुगुप्सा है। (1) राम रावण युद्ध में इसकी प्रतीति होती हैं जब वह माया से घृणित दृश्य दिखलाता है वह कभी चर्बी में कीट से सने हुए अस्थिजाल बरसाता था, कभी खौलता हुआ तेल उड़ेल देता था कभी कटे बदन दिखाता था, कभी सीता का कटा हुआ सिर दिखाता था। यथा—

तदीयमायया रणे वभूव रोमहर्षणम्

विभिन्नकीटमेदुरं वसाऽस्थिजालवर्षणम्।

चिराय शोणितं किरन् न लज्जितो दशाननः

प्रकामलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः

क्वर्ष पावकं ततः प्रतप्ततैल विप्रुषः

पुनः समीरबाणतो व्यसर्पयत्तरात्विषः॥

पिशाचमायया निशां खेः पुरः प्रदर्शयन्

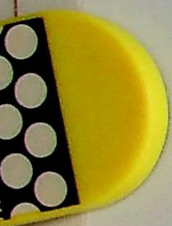
निकृत्य तानकीशिरः प्रभोः पुरः प्रदर्शयन्॥ (2)

अद्भूत रस— साकेतसौरभम् महाकाव्य में अद्भूत रस का भी मंजुल परिपाक हुआ है प्रथम सर्ग में ही अद्भूत रस की योजना दृष्टिगत होती है—

1. साहित्य दर्पण— 3/239

2. साकेत सौ० —6/25, 26, 28







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

रघुवरं धनुरध्वरजित्वरं

निमिकुलोद्भवया च वृत्तं वरम्

स्वकुल दीपकमालयन् प्रगे

रसमयं समयं व्यतनोद् रवि ॥ (1)

अर्थात् विवाह के दिन धनुष यज्ञ जीतकर जानकी के जीवन-संगी बनने वाले श्री राम को अपना कुल दीपक मानकर सूर्य ने बड़े भोर से ही आनन्दमय वातावरण बना दिया।

इसके निदर्शनार्थ अन्य पद्य भी द्रष्टव्य हैं—

जलदचित्रलपूर्वदिगचला—

दथशनैरुदियाय दिनेश्वरः

चलतमश्च पिशङ्गिगमवेष्टितं

विरुरुचे रुरुचेष्टितमग्रतः (2)

अर्थात् तीतरवर्णी बदलियों वाली पूर्व दिशा से धीरे-धीरे दिनमणि निकलने लगे और पीली किरणों में लिपटकर भागता हुआ अन्धकार चौकड़ी भरते हिरण जैसा प्रतीत हुआ।

वात्सल्य रस— प्रकट चमत्कारक होने के कारण कोई वात्सल्य रस भी मानते हैं। इसमें वात्सल्य स्नेह स्थायी होता है। पुत्रादि इसका आलम्बन और उसकी चेष्टा तथा विद्या, शूरता, दया आदि उद्दीपन विभाव होते हैं।

(3) प्रथम सर्ग में राम जन्म के समय वात्सल्य रस का मंजुल विनिवेश किया

1. वही— 1/62

2. वही— 1/66

3. साहित्य दर्पण— 3-251-253







साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

गया है। यथा—

रत्नसौधेषु चत्वारः क्रीडन्तो जानुपाणिभिः

कपिकोटिसमाकीर्ण चित्रकूटमदर्शयन् ॥ (1)

अर्थात् — रत्नखचित महल में घुटने तथा हथेलियों पर चलते खेलते चारों भाई करोड़ो वानरों से भरे चित्रकूट का दृश्य उपस्थित कर देते थे।

इसी प्रकार अष्टम् सर्ग में—

स च मुग्धमुखाम्भोजौ स्निग्ध संहननौ सुतौ

समीक्ष्य कृतकृत्याऽभूत प्रस्नुता मेदिनीसुता ॥

कापिभिः कोकिलैः कीरैः शैशवै शिखिभिः समम्

प्लुतं गीतधीतञ्च नृत्त ताभ्यां तपोवने (2)

अर्थात् — भोले भोल मुखमण्डल और अतिशय स्निग्ध शरीर वाले को निहारकर चुभचुभाते दूध से भूमिसुता सीता भी धन्य हो गई। वे तपोवन में वानरों के साथ उछलते कोयलों के संग गाते तोंतों के साथ पढ़ते और मोरों के संग बचपन की अठखेलियाँ कर लेते थे।

शान्तरस —

शान्तरस का स्थायीभाव शम, आश्रय उत्तमपात्र वर्ण कुन्द पुष्प तथा चन्द्रमा आदि के समान सुन्दर शुक्ल और देवता भगवान नारायण हैं। अनित्यत्व दुःख मयत्व आदि रूप से सम्पूर्ण संसार की असारता का ज्ञान अथवा परमात्मा का स्वरूप इस रस में आलम्बन होता है।

1. साकेत सौ0 -1/31

2. साकेत सौ0 -8/12-13



संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

(1) 11. संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है

संस्कृत भाषा में लिखी गयी है



साकेत सौरभम् का शिल्प विधान एवं भाव प्रवणता

और ऋषि आदि को पवित्र आश्रम, हरिद्वार आदि पवित्र तीर्थ, रमणीय एकान्त वन तथा महात्माओं का संग आदि उद्दीपन विभाव होते हैं। रोमांच आदि इसके अनुभाव होते हैं। निर्वेद, हर्ष, स्मरण, मति, प्राणियों, पर दया आदि इसके संचारी भाव होते हैं। (1)

साकेतसौरभम् के संकल्प सर्ग में शान्त रस का मंजुल परिपाक हुआ है। शरभङ्ग आश्रम से राक्षसों को भगाते हुए श्री राम और लक्ष्मण को सन्निकट देख महात्मा लोग उनकी स्तुति करने लगे। यथा—

अवाप्य देवदर्शनं क्षुधा तृषाऽपि कर्षिता

इहाद्रिवासिनः परं प्रभोदमाशु लेभिरे।

अरण्यवीथिकासु जीर्णशीर्णकीर्णपल्लवा

रुचा समं नवीन — पुष्प सौरमाणि लेभिरे ॥ (2)

अर्थात् भूख—प्यास से टूटे हुए हम पर्वतीय अंचल के निवासी अपने आँगन में प्रभु —दर्शन पाकर आज अत्यन्त आह्लादित हैं। हमारे साथ इस वन—वीथियों के जीर्ण—शीर्ण उजड़े हुए पत्र दल भी निखर कर पुष्प—सुगन्ध से भर गए हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस काव्य में कवि द्वारा रसानुरंजन निर्विवाद रूप से प्रशंसनीय है।

1. साहित्य दर्पण —3—45—248

2. साकेत सौ० —3/10















## पञ्चम् अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् –तुलनात्मक समीक्षा

(क) वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के भाव पक्ष  
की तुलना

(ख) वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की शिल्प  
दृष्टि से तुलना







अध्याय-5 वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा  
 (क) वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के भाव पक्ष की तुलना—  
 संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्यगत स्थायी संचारी और सात्विक भावों अर्थात् मानसिक—शारीरिक संवेदनों के अर्थ में भाव का सर्वाधिक प्रयोग हुआ। इनमें भी बाद में सात्विक भावों के अन्तर्गत रखकर स्थायी संचारी के अर्थ में ही भाव 'शब्द का प्रयोग प्रचलित हो गया। भरत ने चित्तवृत्ति मात्र के अर्थ में तो भाव का प्रयोग किया ही नहीं था, वे इसी कुछ अधिक—काव्यार्थ तथा भावित करने वाला मानते थे। कुछ विद्वानों ने तो भरत के द्वारा भाव शब्द का प्रयोग विभावादि समग्र रस—सामग्री के लिए स्वीकार किया है। धनिक ने भावक या सहृदय के अनुभूयमान सुख—दुःख को ही भाव मान लिया था और अभिनव गुप्त ने उसे स्पष्ट ही चित्तवृत्ति का बोधक मानते हुए विभावनुभाव और रस सामग्री के लिए इस शब्द के प्रयोग का विरोध किया।<sup>(1)</sup> मम्मट, विश्वनाथ आदि आचार्यों ने इसी मत को पुष्ट किया।

आधुनिक काल के चिन्तकों में सबसे मनोवैज्ञानिक विवेचना आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया। उन्होंने इसके अन्तर्गत स्थायी के अतिरिक्त संचारी भाव, अनुभाव तथा सात्विक भावों का भी अन्तर्भाव किया, दूसरी ओर उसमें मानव—मन अन्तस्संज्ञा में प्रवृत्ति या संस्कार—रूप में वर्तमान वासनाओं को भी समाविष्ट किया है।<sup>(2)</sup> आचार्य शुक्ल के अनुसार भावों के तीनों अंगों की व्याख्या निम्नांकित है<sup>(3)</sup>—

(अ) वह अंग जो प्रकृति या संस्कार रूप में अन्तस्संज्ञा में रहता है अर्थात् वासना।

1. भाव शब्देन तावचित्तवृत्ति विशेषा एवं विविक्षताः। .....ये त्वेते ऋतुमात्यादयो विभाव बाह्याश्च वाष्प प्रभृतियों अनुभावा.....तेन भाव शब्द व्ययदेश्याः।
2. डा/0 रामलाल सिंहः आचार्य शुक्ल के समीक्षा द्विन्त - पृ० 346
3. रस मीमांसा -पृ० 164



...



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

(ब) वह अंग जो विषय बिम्ब के रूप में चेतना में रहता है और भाव का प्रकृत स्वरूप है अर्थात् आलम्बन आदि की भावना ।

(स) वह अंग जो आकृति या आचरण में अभिव्यक्त होता है और बाहर देखा जा सकता है अर्थात् अनुभाव और नाना प्रयत्न ।

इस प्रकार वे भाव को केवल भावना या मनोविकार न मानकर प्रत्यक्ष बोध अनुभूति और वेगयुक्त प्रवृत्ति इन तीनों के गूढ़ संश्लेषण के रूप में ग्रहण करते हैं। (1) बाबू गुलाबराय मनोविज्ञान एवं साहित्य के भावों में भिन्नता स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार साहित्य में भाव से अभिप्राय मन के उस विकार से होता है, जिसमें सुख-दुःख अनुभव के साथ कुछ क्रियात्मक प्रवृत्ति भी रहती है। मनोवेग के इस व्यापक रूप में हल्के गहरे मन्द और तीव्र सभी प्रकार के भाव शामिल रहते हैं। उनके अनुसार इसकी व्यापकता में भाव का क्रियात्मक पक्ष भी वर्तमान रहता है। अनुभाव भी तो भाव ही कहलाते हैं। (2) दूसरे शब्दों में संस्कृत साहित्य शास्त्र का भाव मनोविज्ञान के 'इमोशन' से अधिक व्यापक शब्द है। (3)

डॉ० नगेन्द्र के अनुसार ब्राह्म जगत के वंदेदनों से मनुष्य के हृदय में जो विकार उठाते हैं, वे ही मिलकर भाव की संज्ञा प्राप्त करते हैं (4) और अन्त में उन्होंने कहा कि इस प्रकार भाव के विषय में अर्थात् आलम्बन भाव का स्वरूप, भाव की शारीरिक प्रतिक्रिया अर्थात् विवेचन में अन्तर्भूत किये गये । भारतीय मनीषियों ने भाव के मानसिक और शारीरिक रूप के पूर्वापर क्रम से शारीरिक रूप का मानसिक परिणाम माना और पश्चिम के विद्वानों के मध्य यह विवाद का विषय रहा। (5)

1. रस मीमांसा - पृ० 168 भाव शब्देन तावचित्वृत्ति विशेष एव विविक्षताः ...

ये त्वेते ऋतुमात्यदयो-

2. रस सिद्धान्त और सौन्दर्यशास्त्र - डॉ० निर्मला जैन: पृ०-262

3. रीति काव्य की भूमिका पृ०-64 : डॉ० नगेन्द्र

4. रीतिकाव्य की भूमिका पृ०-64-डॉ० नगेन्द्र

5. वही पृ०-65







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

भारतीय साहित्यशास्त्र की परम्परा में रस की साहित्य सर्जना का प्रमुख उद्देश्य माना गया है। इस निष्पत्ति के लिए आचार्यों ने स्थायी भाव के साथ विभाव, अनुभाव और संचारी क संयोग आवश्यक माना है। आदि आचार्य भरतमुनि ने मानसिक अवस्थाओं के व्यञ्जक तत्व को भाव माना है।<sup>(1)</sup> अर्थात् 'भावः कवि हृदय में स्थित वह अर्थ है जो नाना अभिनयों द्वारा काव्य में अभिव्यक्त होता है और उसमें सर्वत्र व्याप्त रहता है, मुनि ने नौ स्थायी और तैंतीस संचारी भाव माने हैं। उनका यह वर्गीकरण मुख्यतः रंग मंच की दृष्टि से है। इसीलिए इनके टीकाकार भट्ट लोल्लट ने कहा है कि रस और भाव तो अनन्त होते हैं। मुनि ने तो केवल व्यापारिक दृष्टि से ये स्थायी और संचारी माने हैं। (2)

डॉ० मनमोहन शुक्ल के अनुसार—काव्य में वर्णित मूलभूत कारण ही स्थायी भाव कहे जाते हैं। ये भाव उपादान कारक होते हैं और अतिशयता के कारण जब इनका उद्रेग सामाजिकता के अन्तः करण में हो जाता है, जिसका चर्वणा में वह निमग्न हो जाता है तो वह स्थायी रस की संज्ञा को प्राप्त हो जाता है यदि कोई स्थायी भाव अपने रस को छोड़कर अन्य रसों के साथ आता है तो वह स्थायी न होकर व्यभिचारी हो जाता है, (3)

हमारे भीतर स्थिति भावों के सहायक विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव परिवेश से उद्दीप्त होकर तदनुसार उस स्थायी भाव की पुष्टि करते हैं, किन्तु इनमें जब बाधा उत्पन्न हो जाती है, तो वांछित रस की पूर्णता बाधित होती ही है साथ ही उससे सम्बन्धित स्थायी भाव भी कुण्ठित हो जाता है। रस का परिपाक न होने पर तत् सम्बन्धी स्थायी भाव कुण्ठा के रूप में ग्रंथिबद्ध हो जाता है तथा विसर्जन हेतु साहित्य में अनेक छद्मकारी नाम एवं रूप प्राप्त करता है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्थायी भाव का जब हम मनोवैज्ञानिक धरातल पर मूल्यांकन करते हैं, तो वह मूल प्रवृत्ति में ही स्थापित होता है। जिस प्रकार मनोविज्ञान की मान्यता में मूल प्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं, उसी प्रकार शिशु के जन्म से

1. वही पृष्ठ संख्या —65

2. कवेन्तर्गतं भाव भावयन् भाव उच्यते। अभिनव भारती: पृ०—345

3 कुण्ठा एवं साहित्यसर्जना —पृ०175—डॉ० मनमोहन शुक्ल







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

लेकर उसके विकास क्रम के साथ स्थायी भावों का रूप भी स्थापित होता है, स्थायी भावों का भी अंकुर व्यक्ति के मन में जन्मजात होता है, जो सहज क्रियाओं की भाँति विभाव, अनुभाव एवं संचारियों के माध्यम से पूर्णतः को प्राप्त होता है। (1)

स्थायी भाव की संख्या का जहाँ तक प्रश्न है प्रारम्भ में आचार्यों ने इसके आठ रूप—रति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा तथा विस्मय बताया था, किन्तु परवर्ती आचार्यों ने इसकी संख्या में शान्त रस के शम तथा निर्वेद का स्थायी भाव जोड़कर नवभेदों का उल्लेख किया। (2) इसके पश्चात् आचार्य विश्वनाथ ने वात्सल्य रस को काव्य में विधिवत् स्वीकृति देते हुए वात्सल्य रस को दसवें भेद में उल्लेखित किया। (3) स्थायी भावों की संख्या में एक भेद की वृद्धि तब हुई, जब श्रीमद्भागवत् के कथन को प्रतिपादित करते हुए आचार्यों ने भक्ति रस को भी रसों में स्थान दिया और इष्ट देव के प्रति प्रेम और भक्ति की मान्यता दिये। इस प्रकार कुल स्थायी भावों की संख्या साहित्य शास्त्र में स्वीकार की गयी हैं। इनके द्वारा क्रमानुसार रति, स्थायी भाव से श्रृंगार रस, हास स्थायी भाव के हास्य रस शोक स्थायी भाव के साथ करुण रस, क्रोध स्थायी भाव के साथ रौद्र रस, उत्साह स्थायी भाव के साथ वीर रस, भय स्थायी भाव के साथ भयानक रस, जुगुप्सा स्थायी भाव के साथ वीभत्स रस, विस्मय स्थायी भाव के साथ अद्भुत रस है। शम या निर्वेद स्थायी भाव के साथ शान्त रस वात्सल्य स्थायी भाव के साथ वत्सल एवं स्नेह रस तथा भक्ति स्थायी भाव के साथ भक्ति रस का परिपाक होता है।

इस बार हम कह सकते हैं कि स्थायी भाव वासना रूप से प्रमाता के चित्र में विद्यमान रहते हैं तथा कारण के अनुपस्थित रहने पर भी उनकी सत्ता बनी रहती है।

1. वही पृ०— 176

2. काव्य प्रकाश— १०-१४/१५ Shri Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

3. साहित्य दर्पण— 3/175







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अतः स्थायी भाव एक स्थिर मनोदशा है और स्थिर रहती है , इसके विपरीत सञ्चारी भाव एक ऐसे भाव हैं, जो कारण के अभाव में अस्तित्वरहित हो जाते हैं।

भाव के अन्तर्गत सञ्चारियों के अनुपस्थित रहने पर भी विभावानुभाव द्वारा अभिव्यक्त स्थायी भाव एवं अप्रधान सञ्चारियों या सञ्चारीवत् आये हुए किसी स्थायी द्वारा पुष्ट तथा विभावानुभाव द्वारा अभिव्यक्त सञ्चारी ये दो भाव स्थितियाँ ही जाती हैं। (1) जीवन की मूल प्रवृत्तियों से सम्बंध होने के कारण स्थायी भाव का सम्बंध पुरुषार्थ चतुष्टय के साथ सहज ही स्थापित हो जाता है। अतः सञ्चारियों की अपेक्षा स्थायी भाव का जीवन के पुरुषार्थ—धर्म, अर्थ, काम , मोक्ष के साथ अधिक प्रत्यक्ष सम्बंध होता है। स्थायी भाव अधिक प्रबल होता है, अविरुद्ध और विरुद्ध भाव उसका नाश नहीं कर सकते, परन्तु सञ्चारी भाव क्षण—क्षण आविर्भूत अथवा तिरोभूत होकर स्थायी भाव की स्थिति जीवन के नैसर्गिक तीव्र और व्यापक मनो—विकारों की हैं, जो मानव स्वभाव के आधारभूत अङ्ग है जिन्हें साधारणतः मूल मनोवेग कहा जा सकता है, उन मनोवेगों के सीधा सम्बंध आत्मा के मूलभूत गुण, राग, द्वेष से है, तथा राग—द्वेष के मिश्रित संघर्षों द्वारा हमारा जीवन गतिशील होता है।

उपर्युक्त विश्लेषण के अनुसार हम कह सकते हैं कि भाव पक्ष हमारी अनुभूतियों का एक ऐसा पुञ्ज है, जो रूपायित होकर काव्य में हमारी अनुभूतियों को मार्ग देता है। इस प्रकार किसी भी साहित्यकार का भावपक्ष उसकी कृति में उसके अभिव्यक्तिकरण का दर्पण होता है।

वाल्मीकि रामायण में भाव पक्ष—

आदिकवि की वाणी पुण्यसलिला

भागीरथी है, जिसमें अवगाहन कर पाठक तथा कवि अपने आपको पवित्र







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

ही नहीं जानते, प्रत्युत् रसमयी काव्यशैली के हृदयावर्जक स्वरूप के समझने में भी कृतकार्य होते हैं। काव्य तथा नाटकों को विषय-निर्देश देने में रामायण एक अक्षुण्ण स्रोत है। रामायण तो वस्तुतः व्यास वाणी का विमल प्रसाद है। सचमुच विचाररत्नों का एक अगाध महार्णव है, जिसमें गोते लगाने वाला कवि आज भी अपने काव्य को चमत्कृत तथा अलंकृत बनाने के लिए नवीन जगमगाते हीरों को खोज निकालता है।

संस्कृत साहित्य में महर्षि वाल्मीकि कृत 'रामायण' आदिकाव्य समझा जाता है। तथा वाल्मीकि आदि कवि माने जाते हैं। कथा प्रसिद्ध है कि जब व्याध के बाण से विधे हुए क्रौञ्च के विलाप करने वाली कौञ्ची का करुण शब्द ऋषि ने सुना, तो मुँह से अकस्मात् यह श्लोक निकल पड़ा।

'जिसका आशय यह है कि हे निषाद! तुमने काम से मोहित इस क्रौञ्च पक्षी को मारा है, अतः सदा के लिए प्रतिष्ठा प्राप्त न करो। महर्षि की कल्याण मयी वाणी सुनकर स्वयं ब्रह्मा उपस्थित हुए और उन्होंने रामचरित लिखने के लिए उनसे कहा। रामायण की रचना इसी प्रेरणा का फल है।

इस छन्द के प्रस्फुटन में कवि के भीतर युक्त रति स्थायी भाव की क्रौञ्च पक्षी जोड़ों में से एक की मृत्यु के कारण जो कौंध उठी, वह विप्रलम्भ श्रृंगार का सुन्दर उदाहरण है—

यद्यपि काममोहित जोड़ों में से एक की मृत्यु के पश्चात् यहाँ शोक स्थायी भाव के कारण करुण रस का उद्रेक हुआ है, किन्तु कवि के मन में राम और सीता के वियोग की जो गाथा पहले से विद्यमान थी, उसमें उद्दीपन विभाव का कार्य किया, तथा क्रौञ्च के मृत शरीर को देखकर सञ्चारियों द्वारा विप्रलम्भ श्रृंगार का भी रसाभास कराया गया, जो रति स्थायी भाव का मूल कारण है।

इसी प्रकार राम के वन जाने की बात माता कौशल्या को ज्ञात होती है, तो उनका वात्सल्य भाव वाल्मीकि के शब्दों में बन पड़ा है—







अथापि किं जीवितमद्य मे वृथा

त्वया बिना चन्द्रनिभाननप्रभ ।

अनुब्रजिष्यामि वनं त्वयैव गौः

सुदुर्बला वत्सभिवाभिकाङ्क्षया ।।(1)

वे कहती है चन्द्रमा के समान मनोहर मुख की कान्ति वाले हे श्री राम तुम्हारे वियोग में यदि मेरी मृत्यु नहीं हो पायेगी तो फिर यहाँ पर मैं अपने व्यर्थ और कुत्सित जीवन क्यों बिताना चाहूँगी जिस प्रकार अत्यन्त दुर्बल होने पर भी गोमाता अपने बछड़े के लोभ से उसके पीछे-पीछे चली जाती है, उसी प्रकार मैं भी तुम्हारे साथ वन में चलूँगी ।

इसी क्रम में कवि ने माता कैकेयी के द्वारा पिता के वचन पालन करने की शर्त पर उनके द्वारा कहे गये वचनों को बताने की बात कहे जाने पर श्री राम उनकी शंका को निर्मूल करते हुए कहते हैं—दे देवि! धिक्कार है कि तुम मुझसे ऐसी बात कह रही हो, मैं पितृ भक्त हूँ, मैं महाराज के कहने पर अग्नि और समुद्र में भी कूद सकता हूँ इसके साथ उनके कहने पर तीक्ष्ण विष भी भक्षण कर सकता हूँ । महाराज मेरे गुरु है और हितैषी राजा को जो कुछ अभीष्ट है वह सब कुछ मुझे बताये, मैं उनकी आज्ञा का शत-प्रतिशत पालन करूँगा । (2) यहाँ पर वाल्मीकि के द्वारा पितृभाव की अभिव्यक्ति देखते ही बनती है ।

1. अयोध्याकाण्ड -20/54

2. अहो धिङ्.नार्हसे देवि वक्तुं मामीदृशं वचः ।

अहं हि वचनाद् राज्ञः पतेयमपि पावके ।।

भक्षेयम् विषं तीक्ष्णं पतेयमपि चार्णवे ।

नियुक्तो गुरुणा पित्रा नृपेण च हितेन च ।।

तद ब्रूहि वचनं देहि राज्ञो यदभिकाङ्क्षितम् ।

करिष्यते प्रतिज्ञाने च रामो द्विर्नाभिभाषते ।। (अयोध्याकाण्ड -18/28,29,39)







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इसी प्रकार कवि राम सीता के मिलन के अवसर पर श्रृंगार रस की उत्पत्ति होती है जिसमें भाव के दोनों रूप आलम्बन और उद्दीपन स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं। यहाँ राम आदि एक दूसरे की प्रीति के आलम्बन रूप कारण हैं, क्योंकि सीता को देखकर राम के मन में और राम को देखकर सीता के मन में प्रेमभाव या रति की उत्पत्ति होती है। इसीलिए वे दोनों एक दूसरे के आलम्बन एवं आश्रय विभाव होकर परस्पर रति भाव प्रेम की उत्पत्ति के कारण होते हैं।

सीता के पतिव्रत्य गुण से श्री राम के हृदय में उनके प्रति अधिकाधिक प्रेम बढ़ता रहता था, इसीलिए सीता के हृदय में भी उनके पति श्रीराम अपने गुण और सौन्दर्य के कारण द्विगुण प्रीतिपात्र बनकर रहते थे। इस प्रीति या रति को उद्बुद्ध करने वाली चाँदनी, उद्यान—नदीतीर आदि सामग्री को उद्दीपन विभाव कहा जाता है, क्योंकि वे पूर्वोत्पन्न रति आदि को उद्दीप्त करने वाले हैं। इस प्रकार आलम्बन और उद्दीपन मिलकर स्थायी भाव (रति) को व्यक्त करता है राम जी सीता के रूप को देवाङ्गनाओं के समान और मूर्तिमती लक्ष्मी—सी प्रतीत बताते हैं। जैसे लक्ष्मी के साथ देवेश्वर भगवान विष्णु की शोभा होती है, उसी प्रकार उन सीता देवी के साथ राजर्षि दशरथ कुमार श्री राम परम प्रसन्न रहकर बड़ी शोभा पाने लगे। (1) इसी प्रकार श्री राम द्वारा सीता को चित्रकूट की शोभा दिखते हुए प्रकृति का बड़ा ही मनोहारी वर्णन किया गया है, जब

1. रामश्च सीता सार्धं विजहार वह्नूतून् ।  
मनस्वी तद्गतमनास्तस्या हृदि समर्पितः ।  
प्रिया तु सीता रामस्य दाराः पितृकृता इति ।  
गुणाद्रूपगुणाच्चापि प्रीति भूयोऽभिवर्धते ॥  
तस्याश्च भर्ता द्विगुणं हृदये परिवर्तते ।  
अन्तर्गतमपि व्यक्तमायाति हृदयं हृदा ॥  
तस्य भूयो विशेषेण मैथिली जनकात्मजा ।  
देवताभिः समा रूपे सीता श्रीरिव रूपिणि ॥  
तया स राजर्षिसुतोऽभिकामया समेयिवानुत्तमराज कन्यया ॥ (बालकाण्ड—77,25,26,27,28,29)







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

श्रीराम-सीता और लक्ष्मण के साथ पहुँचते हैं, उस समय चित्रकूट की शोभा दिखाते हुए राम सीता से कहते हैं कि हे कल्याणि चित्रकूट के इस पर्वत पर दृष्टिपात तो करके देखो, नाना प्रकार के असंख्य पक्षी यहाँ कलरव कर रहे हैं, अनेक प्रकार के धातुओं से मण्डित इसके गगनचुम्बी शिखर मानो आकाश को वेध रहे हैं। विभिन्न धातुओं से अलंकृत इनमें से कोई चाँदी के समान चमक रहे हैं कोई लोहू की लाल आभा का विस्तार कर रहे हैं, कोई मणियों के समान कोई पुखराज के समान कान्ति वाले हैं तथा कुछ प्रदेश नक्षत्रों और पारे के समान प्रकाशित होते हैं। (1) यहाँ पर वाल्मीकि जी द्वारा प्रकृति वर्णन की मनोहारी छटा का वर्णन रोमांचकारी है, जो सभी प्रेमी-प्रेमिकाओं के मन को आह्लादित करता हो, ऐसा भाव चित्र किन दुखियों के दुःख को दूर न करता होगा। ऐसा जान पड़ता है कि यह चित्रकूट पर्वत पृथ्वी को फाड़कर ऊपर उठ आया है। चित्रकूट का शिखर सब ओर से सुन्दर दिखायी देता है।

इसी क्रम में सीता हरण के पश्चात् रामचन्द्र जी के विलाप का प्रसङ्ग है। राम का सीता के लिए विलाप करने से प्रिलम्भ श्रृंगार की उत्पत्ति है तथा करुण रस का भी आभास होता है। करुण तथा विप्रलम्भ श्रृंगार की स्थिति के विषय में कभी-कभी भ्रम हो जाता है। इनकी सीमा अलग अलग है। भ्रम की सम्भावना मुख्यतः प्रेमियों के वियोग की अवस्थाओं में रहती हैं। प्रेमियों का वियोग दो प्रकार का होता है 1. स्थायी वियोग 2. अस्थायी वियोग । दोनों प्रेमियों के जीवनकाल में जो वियोग किसी भी कारण होता है, वह अस्थायी वियोग होता है और वह विप्रलम्भ श्रृंगार की सीमा में आता है, किन्तु दोनों प्रेमियों में से किसी एक की मृत्यु

1. पश्येमचलं भद्रे नाना द्विजगणायुतम् ।

शिखरैः खभिवोद्विद्धैर्धातुमदि भर्विषितम् ॥

केचिद् रजतसंकाशाः केचित् क्षतजसंनिभाः ।

पीतमञ्जिष्ठवर्णाश्च केचिन्मणिवरप्रभाः ॥

पुष्पार्ककेतकाभाश्च केचिज्ज्यो तीरसप्रभाः ॥

विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य देशा धातु विभूषिताः ॥ (अयोध्याकाण्ड-94,4,5,6)







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

हो जाने पर जो वियोग होता है, उसमें मिलने की कोई आशा या सम्भावना नहीं रहती है। इसमें स्थायी भाव शोक होता है। यह करुण रस की सीमा में आता है। (1)

राम सीता को आश्रम में देखकर करुण विलाप करते हुए लक्ष्मण से कहते हैं कि सीता आश्रम में नहीं है सारी सामग्री बिखरी हुई है आश्रम की ओर दृष्टिपात करते ही राम तेजी से विलाप करते हुए एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष के पास दौड़ते हुए पर्वतों, नदियों के किनारे घूमने लगे। शोक से समुद्र में डूबे हुए श्री राम जी विलाप करते हुए वृक्षों से पूछते हैं—  
कदम्ब ! मेरी प्रिया सीता तुम्हारे पुष्प से अत्यन्त ही प्रेम करती थी क्या तुमने उसे देखा है मुझे सीता का पता बताओ उसके अङ्ग सुस्निग्ध पल्लवों के समान कोमल है तथा शरीर पर पीले रंग की रेशमी साड़ी शोभा पाती है। हे बिल्व! मेरी प्रिया के स्तन तुम्हारे ही समान हैं। हे अर्जुन के वृक्ष मेरी प्रिया जीवित है या नहीं, यह तुम मुझे बता सकते हो। क्योंकि तुम्हारे फूलों से मेरी प्रिया को विशेष अनुराग था। हे अशोक —सब के शोक दूर करने वाले मुझे मेरी प्रियतमा के दर्शन कराकर शीघ्र ही अपने जैसा नाम वाला बना दो, मुझे भी (अशोक) शोक हीन बना दो। (2)

1. काव्य प्रकाश —पृ०— 128

2. वृक्षाद् वृक्षं धावन स गिरीश्चापि नदीनदम्।

बभ्राम विलपन् रामः शोकपङ्कपार्णवप्लुतः॥

अस्ति कच्चित्त्वया दृष्टा सा कदम्बप्रिया प्रिया।

कदम्ब यदि जानीषे शंख सीतां शुभाननाम्॥

स्निग्धपल्लव संकाशां पीकौशेयवासिनीम्।

शंसस्व यदि सा दृष्टा बिल्व बिल्वोपमस्तनी॥

अथवार्जुन शंस त्वं प्रियां तामर्जुनप्रियाम्।

जनकस्य सुता तन्वी यदि जीवति वा न वा॥

अशोक शोकपनुद शोकोपहत चेतनम्।

त्वन्नामानं कुरु क्षिप्रं प्रियासंदर्शनेन माम् — अरण्यकाण्ड—60/11,12,13,14,17







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इस प्रकार के उदाहरण में जिनमें मृत्यु नहीं हुई है बल्कि पुनः मिलने की आशा हो जाने से विप्रलम्भ श्रृंगार भाव कहा जा सकता है। इसमें सीता आलम्बन विभाव है और रामचन्द्र का विलाप करना अनुभाव है। क्योंकि सीताहरण के बाद भी सीता और राम का वियोग हुआ पर करुण नहीं अपितु विप्रलम्भ ही हैं। इसमें रामचन्द्र को सीता से मिलने की आशा थी।

तदन्तर करुण रस का उदाहरण प्रस्तुत प्रसंग में करते हुए वाल्मीकि जी ने रामायण में वर्णन किया है। इस प्रसंग में राम ने बालि को मार डाला है और तारा का करुण-क्रन्दन हो रहा है। इसमें दो प्रेमियों में एक की मृत्यु हो जाने पर जो वियोग होता है, इसमें मिलने की कोई आशा या सम्भावना नहीं रहती है। इसीलिए इस प्रसंग में स्थायी भाव शोक होता है। वह करुण रस की सीमा में आता है। इस प्रकार जहाँ तक प्रेमियों का वियोग का सम्बंध है, इसमें करुण रस की सीमा रेखा मृत्यु है। मृत्यु के बाद पुनः मिलने की सम्भावना समाप्त हो जाती है। इसलिए ऐसे प्रसंग में शोक स्थायीभाव की उत्पत्ति होकर करुण रस का प्रवाह मिलता है।

इस प्रसंग में राम के वाण से मृत्यु शय्या को प्राप्त किए हुए बालि की ओर दृष्टिपात करती हुई शोक सागर में डुबी हुई तारा स्वामी का आलिंगन करके रोने लगती है यह दृश्य ऐसा लगता है कि जैसे कटे हुए महान वृक्ष से लिपटी हुई लता हो और वह लता की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़ी और विलाप करते हुए कहती है कि मेरे स्वामी सृहद् स्वामी और स्वभाव से प्रिय थे पतिहीन नारी भले ही पुत्रवती एवं धन-धान्य से समृद्ध हो, किन्तु पतिहीन नारी को लोग विधवा ही कहते हैं। (1)

1. ततस्तु तारा व्यसनाणवप्लुता

मृतस्य भर्तुर्वदनं समीक्ष्यसा।

जगाम भूमिं परिरम्भवालिनं

महाद्रुमं छिन्नमिवाश्रिता लता॥

पतिहीना तुया नारी कामं भवतु पुत्रिणी।

धनधान्य समृद्धापि विधवेत्युच्यते जनैः॥ —किष्किन्धाकाण्ड-22.23/32,12







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इस वर्णन में कवि ने जो भाव चित्र प्रस्तुत किये हैं, उसे देखकर या पढ़कर कोई भी व्यक्ति द्रवित हो सकता है।

इसी प्रकार विप्रलम्भ श्रृंगार के अभिलाषा या पूर्वाग भेद का उदाहरण प्रस्तुत हैं। सीता का पता चलने के उपरान्त वर्षा ऋतु आ जाती है और राम सीता के वियोग से उत्कण्ठित हो रहे हैं। वे कहते हैं कि जैसे पृथ्वी ग्रीष्म ऋतु के धूप से तप गयी थी, वह वर्षा की नूतन जल से भीगकर नम हो रही है वैसे ही मिथिलेश नन्दिनी सीता भी वियोग के सूर्य की किरणों से तपकर और फिर आँसूओं से भीग कर अपने वियोग को कमकर रही होगी। हे सुमित्रानन्दन ! इस पर्वत के शिखर पर लिखे हुए कुटज कैसी शोभा पाते हैं? कहीं तो पहली बार वर्षा होने से भूमि से निकले हुए भाप से ये व्याप्त हो रहे हैं और कहीं वर्षा के आगमन से हर्षोत्फुल्ल दिखायी दे रहे हैं। मैं इसी प्रकार प्रिया विरह के शोक से पीड़ित हूँ और ये कुटज पुष्प मेरी प्रेमाग्नि को और अधिक उदीप्त कर रहे हैं। (1)

विप्रलम्भ श्रृंगार में उन व्यक्तियों के राग या अभिलाष से है जिनको समागम का अवसर प्राप्त नहीं हुआ है समागम हो जाने के बाद जो कदाचिद् समागम का अभाव हो जाता है उसको 'विरह' कहते हैं। यह 'विरह' उन दोनों में से एक के अनुराग शून्य होने पर भी हो सकता है इन सबका अन्तर्भाव 'विरह' के भीतर ही होता है। प्रवास हेतु और शाप हेतु शीघ्रतर विरह के उस नाम को विप्रलम्भ श्रृंगार कहते हैं। (2)

यहाँ पर भी कवि ने विप्रलम्भ श्रृंगार का सागोपांग चित्रण किया है।

1. एषा धर्मपरिक्लिष्टा नवारिपरिप्लुता।

सीतेव शोकसंताता मही वाअपं विमुञ्चति॥

क्वाचिद् वाष्पभिसंरुद्धान वर्षागमसमुत्सुकान्।

कुटजां पश्य सोमित्रे पुष्पितान् गिरिसानुषु।

मम् शोकभिभूतस्य कामसंदीपनान् स्थितान्॥ (किष्किन्धाकाण्ड-28/7,14)

2. काव्य प्राकश-पृ०-124







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इसी प्रकार जब हनुमान जी सारी लंका जला देते हैं तो लंका नगर निवासी दीनभाव से तुमुल नाद करते हुए फूट-फूटकर रो रहे हैं कि घोड़ा, हाथी, पशु-पक्षी-वृक्ष तथा कितने राक्षसों सहित लंकापुरी सहसा दग्ध हो गयी हैं। सभी नगरवासी भय से बोल रहे थे— 'हाय रे बप्पा! हाय बेटा! हा स्वामिन् ! हा मित्र ! हा प्राणनाथ ! हमारे सब पुण्य नष्ट हो गये । इस तरह भाँति भाँति से विलाप करते हुए राक्षसों ने बड़ा भयंकर एवं घोर आर्तनाद किया है। (1)

यहाँ पर भयानक रस का स्थायीभाव भय का वर्णन किया गया है। यहाँ हनुमान जी लंका को जला रहे हैं। लंका को जलती देखकर लंका की प्रजाओं का भय स्थायी भाव है। हनुमान आलम्बन विभाव है हनुमान का लंका में घर, नगर को जलाना उद्दीपन विभाव है। दीनभाव से तुमुल नाद करके फूट-फूटकर रोना आदि अनुभाव है। विषाद चिन्ता सञ्चारिभाव है। इस प्रकार रस के सभी अंगों के साथ प्रकृति के भयानक रूप को स्निग्ध चित्रों के माध्यम से चित्रित करने में कवि सफल हुए हैं।

इसी प्रकार वाल्मीकि जी ने रामायण के युद्ध काण्ड में इन्द्रजीत और वानरदलों का युद्ध वर्णन भी किया है। इस तरह में इन्द्रजीत ने वानर दलों को मारकर हताहत कर दिया है। इस प्रसंग में भी रौद्र रस के साथ युद्ध कौशल भाव का सुन्दर वर्णन किया गया है।

इसी प्रकार का एक कौशल का भावपूर्ण चित्रण महाकवि वाल्मीकि ने उस प्रसंग में किया है जब इन्द्रजीत ने रात की सेना पर भयंकर आक्रमण करता है, तथा अग्नि देव की आराधना के द्वारा अपने को वन एवं श्रोणित

1. ततस्तु लंका सहसा प्रदग्धा ।

स राक्षसा साश्वरथा सनागा ।

सपक्षिसद्यसमृगा सवृक्षा

सरोददीना तुमुलं सशब्दम् ।।

हा तात हा पुत्रक कान्त मित्र

हा जीवितेशाङ्ग हतं सुपुण्यम्

रक्षोभिरेवं बहुधा ब्रूवादिभिः

CCO. Mahatishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.

शब्दः कृतो घरोतरः सुभीमः । — सुन्दरकाण्ड-54/39-40







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

युक्त ज्वालाओं से घिरे हुए अग्नि से आवृत्त दिखाई देता हैं ऐसी स्थिति में यज्ञ विधान के कारण प्रकृति का यह भयंकर रूप देखकर राक्षस दल कर्तव्य विमूढ़ होकर खड़े हो गये। (1)

युद्ध के कारण उत्साह भाव की उत्पत्ति से राम-रावण के युद्ध में वीर रस का अद्भुत चित्रण कवि के द्वारा किया गया है। इस प्रसंग में कवि ने राम-रावण के युद्ध कौशल के साथ ही दोनों योद्धाओं को भाव चित्र प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की हैं दोनों योद्धाओं द्वारा प्रयोग में लाये गये असंख्य बाणों की चमक से आकाश इस प्रकार से प्रकाशमान हुआ मानों वहाँ कोई दूसरा आकाश दिखाई पड़ने लगा हो। (2)

इसी प्रकार राम के वाण वर्षा एवं युद्ध कौशल के साथ ही रावण के युद्ध कौशल का भी बड़ा सशक्त चित्रण किया गया है—

भाव चित्रण की दृष्टि से वाल्मीकि ने कोई भी पक्ष अछूता नहीं रखा है। राम के आदेशानुसार सीता को लक्ष्मण के द्वारा वाल्मीकि आश्रम में छोड़े जाने का प्रसंग भी बड़ा ही मार्मिक भाव चित्रण प्रस्तुत करने में सफल हैं। इस प्रसंग में एक ओर प्रकृति में मयूरों, पक्षियों के स्वर गूँजते हैं, तो दूसरी ओर सीता के विलाप का स्वर भी पारस्परिक भाव चित्र का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है—

1. जद्यान कपिशार्दूलान् सुबहून् दृढविक्रमः  
शूलैरशनिभिः खड्गैः पट्टिशैः शूलमुदगैः  
निकुम्भिलामधिष्ठाय पावकं जुहेन्द्रजित्।  
यज्ञभम्यां ततो गत्वा पावकस्तेन रक्षसा।  
हूयमानः प्रजज्वाल होमशोणितभुक तदा।  
सार्चिः पिनद्धो ददृशे होमशोणिततर्षितः।  
संध्यागत इवादित्यः सुतोव्रोऽग्निः समुत्थितः  
अथेन्द्रजिद् राक्षससभूतये तु  
दृष्ट्वा व्यक्तित्तन्त चराक्षसास्ते  
जुहाव हव्यं विधिना विधानवित्।  
महासमूहेषु नयानयज्ञाः। — युद्धकाण्ड '82/18,24,25,26,27,28
2. विमुच्य राघव रथं समन्ताद् वानरे बले।  
सायकैरन्तरिक्षं च चकार सुनिरन्तरम्  
मुमोच च दशग्रीवो निःसङ्गनान्तरात्मना।  
व्याययच्छमानं तं दृष्ट्वा तत्परं रावण रणे॥  
प्रहसन्निव काकुत्स्थः संदधे निशिताच्छरान्।  
स मुमोच ततो बाणाञ्छतशोऽध सहस्रशः॥  
तान दृष्ट्वा रावणश्चक्रे स्वशरैः खं निरन्तरम्।  
ताभ्यां नियुक्तेन तदा शरवर्षेण भास्वता॥  
शरबद्धमिवाभाति द्वितीयं भास्वदस्वरम्।







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

सं गत्वा चोत्तरं तीरं शोकभारमन्वितः ।।

सम्मूढ इव दुःखेन रथमध्यारुहद् द्रुतम् ।

मुहुर्मुहुः परावृत्य दृष्ट्वा सीतामनाथवत् ।।

चेष्टन्तीं परतीरस्थां लक्ष्मणः प्रययावथ

दूरस्थं रथमोलोक्य लक्ष्मणं लक्ष्मणं च मुहुर्मुहुः ।

निरीक्ष्यमाणां तूद्विग्नां सीतां शोकः समाविशत्

सा दुःख भारावनता यशस्विनी

यशोधरा नाथमपश्यती सती

रुरोद सा बर्हिणनादिते वने

महास्वनं दुःखपरायणा सती ।। (1)

इसी प्रसंग में आगे चलकर सीता का रसातल में प्रवेश का प्रसंग भी बड़ा ही मार्मिक है। राम द्वारा सीता को पवित्र पता कर ले जाने वाली बात सीता का धरती माता से अपने प्रविष्ट कराने की बात भाव चित्रों के शसक्त उदाहरण है—

रसातलं प्रविष्टायां वैदेहनां सर्ववानराः ।

चुक्रुशु साधुसाध्वीति मुनयोः रामसंनिधौ ।।

दण्डकाष्ठम्वष्टभ्य बाष्पव्याकुलितेक्षणः ।

अवाविशरा दीनमना रामो ह्यासीत् सुदुःखितः

अभूतपूर्वं शोकं मे मनः स्प्रष्टुमिवेच्छति ।

पश्यतो मे यथा नष्टा सीता श्रीरिव रुपिणि ।(2)

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि वाल्मीकि का भाव पक्ष बड़ा ही शसक्त है। उसमें कहीं सौन्दर्य चित्रण के भाव हैं तो कहीं विभिन्न रसों को अभिभूत करने वाली चमत्कारी चित्र है प्रकृति चित्रण में तो कवि को महारत हासिल है। मानव एवं मानवेतर प्रकृति क तादात्म्य करके कवि ने अपने भाव पक्ष को गति दी है जिसके अन्तर्गत अनेक भावों के साथ रसा भास के विविध पत्र मिल जाते हैं मानव मन एवं मानव प्रकृति के अन्तर्गत

1. उत्तरकाण्ड — 48/23, 24, 25, 26

2. उत्तरकाण्ड—98/1,2,4





*[Faint, mirrored text from the reverse side of the page, likely bleed-through. The text is mostly illegible due to fading and mirroring.]*



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

आने वाले जितने भी भाव है, जितनी भी रसानुभूतियाँ है वे सभी मानव कवि के समक्ष हाथ जोड़े खड़ी रहती है। कवि का ऐसा चित्रण भावों को एक नया रूप देने में समर्थ है।

### साकेतसौरभम् का भाव पक्ष

महाकवि वाल्मीकि के भावपक्ष का विवेचन करते हुए हमने देखा कि किस प्रकार से कवि ने विविध भावों और सौन्दर्य चित्रण में सफलता प्राप्त की हैं, उसी प्रकार साकेतसौरभम् का समीक्षण करते हैं तो यह पाते हैं कि डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी ने भी भाव चित्रण में भी बड़ा ही सफलता प्राप्त की है इन्होंने प्रसंगों की दृष्टि से अनेक ऐसे चित्र प्रस्तुत किये हैं जो भाव की दृष्टि से बड़े ही महत्वपूर्ण हैं।

नारी के विभिन्न भाव चित्रों के साथ ही उसके भयानक स्वरूप का चित्रण करते हुए कवि स्पष्ट रूप से कहता है कि नारी यदि भयानक होकर पाप का स्रोत बन जाए तो वह करुणा के योग्य नहीं रह जाती यही कारण था कि श्री राम ने ताड़का का बध किया।<sup>(1)</sup>

इसी प्रकार दूसरे प्रसंग में श्री राम के चरण कमल छूने मात्र से पाषाणी मूर्ति बनी अहिल्या की व्यथा दूर होने तथा भावात्मक रूप से हिलते ओंठों से वन्दना के स्वर फूटने का प्रसंग भी बड़ा ही मार्मिक है। जहाँ भक्तिरस की रसधारा स्वतः बहती दिखाई देती है—

आकल्प कल्पतरु राघवपादपद्मं  
सत्र्यक्षयक्षपति—विष्णुविरचिंसेव्यम्  
वन्देय देयगुरु सदगुण सौरभस्य  
योषाऽपि शापितचरी तदिदं न्यगादीत् । (2)

1. नारी भयानका काचित् पापकारणतां गता  
नात्र कारुण्ययोग्येति हता रामेण ताडका ॥ (साकेतसौरभम् -1/42)
2. साकेतसौरभम् -1/45



...  
...  
...  
...

... ..

...  
...  
...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...  
...  
...



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इसी प्रकार संस्कार प्रसंग में कवि ने शेषावतार (1) कछपावतार (2) के माध्यम से भौगोलिक संस्कृति के प्रति अपने भावों को व्यक्त करता है। वह स्पष्ट रूप से उद्घोषणा करता है कि—

लोके दम्भमये बुभूषति जनो नेताऽथवा भूपतिः  
सर्वाङ्ग स्पृहणीयसुन्दरवपु सुस्निग्धमिष्टाशनः  
नेदं न्याय्यमसौ कदापि भवतात् कोलोऽपि संवाव्रती  
सेयं शाङ्गर्धनुर्भूता भगवता सन्दर्शिता संस्कृतिः ॥ (3)

इसी प्रकार इस प्रसंग में प्रकृति के सौन्दर्य के माध्यम से भी संस्कृति के भावात्मक स्वरूप को व्यक्त करने में सफलता प्राप्त की है—

‘प्रादुर्भय गृह्यन्तराल—घटितस्तम्भान्नृसिंहाकृतिः  
सत्यं द्योतितवान् करालवदनोगात्रेण सौम्योभवान्  
आकाशे धरणीतले नरि पशौ वृक्षे शिलायाञ्च वा  
लोकेऽस्मिन् सचराचरे मम चितिः सङ्कीर्त्यते संस्कृति । (4)

भिक्षु वेष में राक्षस रावण के द्वारा सीता के अपहरण का प्रसंग भी प्रिलम्भ शृंगार एवं करुण रस के आभास के सुन्दर उदाहरण है। (5)

मैथिली के करुण क्रन्दन के उदाहरण प्रस्तुत प्रसंग में आर्विभूत हुआ है—

“कोऽयं क्षणं किम भवत् क्व नु यामि चाहं  
हा रामभद्र भगवान् भुवनैक बन्धो  
अस्मादचिन्त्यरकाच्छलिनोऽभिषङ्गान—  
मां रक्ष राक्षसविमर्दक दीनबन्धो ॥ (6)

1. वासुवासुके —तत्पर्वेल्लिततनुर्नान्योऽस्ति मान्यः स्वयं  
क्षीरोदनवति सेवितः कमलया नैवाद्य विश्राम्यति  
भूभारं भवताऽचिरं तिरयितुं कान्तारसञ्चारिणी  
स्वीचक्रे चलदभ्रवि भ्रमवती सेयं तनुर्मानवी ॥ (साकेतसौरभम् -2/48)
2. पापैराकुलिता यदा वसुमती वात्यासु पत्रायते  
माद्यदगन्धजार्दि तेव तरणिः सिन्धौ च दोलायते  
कूर्मीभूय तदा स्वपृष्ठफलके सन्धार्यते श्रीमता  
पुण्योदकमयी दिगन्तवितता भौगोलिका संस्कृतिः (साकेत सौ0 -2/50)
3. साकेतसौरभम् -2/51
4. साकेत सौ0 -2/52
5. कातरा शफरी कल्पा विद्रवन्ती विदेहजा  
बलादारोपिता याने रुराव कुररीरवा ॥ (साकेत सौ0 -3/49)
6. वही- 3/50







अर्थात् क्या क्षण ? मैं जा रही कहाँ ? प्राणेश्वर राम त्रिभुवन के दीनबन्धु हे ! प्राणेश्वर राम! कपटी का संग नरक है प्राणेश्वर राम! राक्षस —रिपु आप बचा लें प्राणेश्वर राम!

“कस्त्वां विहाय विपिने भविता सहायो

दुर्भाग्यदारक पिनाक विदारकस्त्वम्

जेगीयते तव यशो जनता जगत्याः

सम्पत्ति कारक विपत्ति निवारकस्त्वम् ।।

अर्थात् — आपके बिना निराश्रिता प्राणेश्वर राम दुर्दिन का शिव —धनुष तना प्राणेश्वर राम् करते गुणगान है सभी प्राणेश्वर राम सुख देते दुःख काटते प्राणेश्वर राम ।

“कीदृक् चरित्रमिदमस्ति चराचरस्य

क्रूरग्रहा असमयेऽभिमवन्ति लोकान्

केचिद् वदन्ति विदुरा निगमागमानां

दित्सन्ति ते विविधकर्म विपाकभोगान् ।।(1)

अर्थात्— त्रिभुवन की रीति देख ली प्राणेश्वर राम! ग्रह असमय घिर आते प्राणेश्वर राम! वेदशास्त्र—पाठी कहते प्राणेश्वर राम! दुष्कृत की यातना मिले प्राणेश्वर राम! इसी प्रकार सीता के वियोग में राम का विलाप भी कवि चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ हुआ है। वे किंकर्तव्यविमूढ़ होकर जल, जंगल और अनल में स्वयं को समाहित कर लेने के लिए उद्धृत हो जाते हैं और सीता के बिना न जीने की बात करते हैं। (2)

इसके पूर्व जनक पुरी की वाटिका में एक दूसरे से मिलने के प्रसंग में

1. वही — 3/51-52

2. क्वचित् कान्तामनुध्यायन् ध्यामनेत्रः स्वलदगतिः

किंङ्ककर्तव्यविमूढोऽसौ चिरं चक्रन्द कानने ।।

कान्तारे वा जलेऽनले क्वचिदधुना चिरं शपिष्ये,

हे सीता! नो त्वया बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये ।।

मामत्यतं खलीकरिष्यति तव मैथिली धरित्री

राजर्षीणां तपोऽवनी सुचरितयोषितं सवित्री ।

वैदेहानामहं निरन्तरुदितं कथं सहिष्ये

हे सीते! नो त्वया बिना पलमपि जीवितं धरिष्ये ।। साकेत सौ0 —3/59, 60,61







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

कवि भाव चित्र श्रृंगार रस को सुशोभित कर रहा है। सीता का रूप सौन्दर्य अनुपम है। कमल सदृश मुख की कांति कानों तक फैले हुए नेत्र, हंसिनी की गति वाली मैथिली को देखते ही श्रीराम का मन अनुराग से भर जाता है।

“कर्णान्तलोचनां गौरीमरविन्दनिभाननाम्

लक्ष्मणागमनां पश्यन् पिप्रिये लक्ष्मणाग्रजः ॥ (1)

यह दृश्य इतना मनोहर है कि श्रीराम को सखियों के साथ चलने वाली सीता के साथ सम्पूर्ण वाटिका ही चलती दिखाई दे रही हैं। मन्द-मन्द गति से चलते हुए वायु द्वारा हिलने वाले सीता के वस्त्र को देखकर श्रीराम के लहराते हुए भावों का चित्र देखते ही बनता हैं। (2)

डॉ० त्रिपाठी की साकेतसौरभम् में कैकेयी के सपत्नीडांह का भी चित्र भाव पक्ष का सुन्दर उदाहरण है—

पूर्व प्रतिश्रुता वने कैकेयी सुतशासनम्

वने चतुर्दशाब्देभ्यः किञ्च राम विवासना ॥ (3)

अर्थात् — पहले से दो इच्छा वरदान पाई हुई रानी कैकेयी ने उसी समय भरत का राज्याभिषेक और चौदह वर्षों के लिए राम का वनवास माँगा।

इसी प्रकार वन में वनवासियों के द्वारा प्रभु श्रीराम के दर्शन पाने का चित्र तथा उस समय का प्रकृति चित्रण भी मनोरम हैं। (4)

1. साकेत सौ० —1/48

2. मां सकृद वीक्ष्य होराव्ययायेऽपि सा  
सम्मुखं नैव तेने दृशौ पक्ष्मले  
सा विजानाति मां सन्नताङ्गी प्रिया  
तामहं केवलो वेधि भूण्डले ॥ (सा० सौ०—1/58)

3. साकेत सौ० —2/15

4. अरण्यवीथिकासु—जीर्णशीर्णपल्लवा  
रुचा समं नवीन—पुष्पसौरभाणि लेभिरे ॥  
इमे य आदिवासिनस्त एव वै तपस्विनः  
अरण्यवासिनः समे भवन्ति वै मनस्विनः ।  
तपो विधाय ते चिरं चराचरं सिषेविरे  
इहाद्रिवासिनः परं प्रमोदमाशु लेभिरे ॥ (साकेत सौ०—3/11,12)



सर्वप्रथम ज्ञान के प्रकाशमान हो जाने पर  
हम सब लोग १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम

सर्वप्रथम ज्ञान के प्रकाशमान हो जाने पर

(१) १३ को १३ देखिये कि का नाम

हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम

(२) १३ को १३ देखिये कि का नाम

हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम

- १३ -

सर्वप्रथम ज्ञान के प्रकाशमान हो जाने पर

(३) १३ को १३ देखिये कि का नाम

हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम

(४) १३ को १३ देखिये कि का नाम

हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम  
हम सब १३ को १३ देखिये कि का नाम



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अपने पुत्र अंगद की रक्षा के लिए बालि का प्रलाप पितृ भाव एवं वात्सल्य का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है—

नद्ध बाणस्य विद्राणरक्तस्य मे  
 नैव तद पौरुषं दुन्दुभेदारकम्  
 मेदिनीशिलष्टगात्रस्य किञ्च प्रभो  
 तत् प्रयातंबलं रावणोत्सारकम् ।  
 स्निग्धवज्रात्मकं मे वपुः पिंजरं  
 जर्जर काशनीकाशतामाययौ  
 हन्त रक्तस्य पङ्के निमज्जत्तनुं ।।  
 भूपते रक्षणीयस्तनूलोऽङ्गदः  
 प्रस्खलद वाष्पपूरोऽयमापदगतः  
 चीत्कृतैः कम्पयन्तीह चक्रं दिशां  
 रक्षणीया च तारा विपद्वर्गतः ।। (1)

डॉ० त्रिपाठी ने सहकार सर्ग के अन्तर्गत प्रकृति चित्र के अन्तर्गत श्रीराम के वियोग के साथ प्रकृति का बड़ा ही मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है। सब का सम्पूर्ण उत्तरार्ध ही प्रकृति सौन्दर्य और राम के विप्रलम्भ श्रृंगार का अन्नूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है। (2)

1. साकेत सौ० -4/25/26

क्षितिजा विप्रकर्षार्तो रामोऽभर्षान्वितोद्रवत्  
 स्मृत्वा जनकसुतामिव सर्वगगनमेव सद्यम् ।

2. वर्षासु लोकहर्षासु स्तोकतर्षासु च क्षितेः

वर्षति दुष्प-दुष्प जलधारा धग् धक् कुरुते में हृदयम् ।।

सं सं सरति सत्वरः पवनः

कुञ्जगृहे कृत पल्लवलवनः

सोऽयं न वै वेपयतु तन्वी विपिने वहमानः सरयं

वर्षति दुष्प-दुष्प जलधारा धग् धक् कुरुते में हृदयम् ।।

टर्-टर् दर्दुरा ह्वयन्ते

सङ्गीतकं वने रचयन्ते

शृणुयामस्मिन् प्रियारोदनं दूरादहह न सास्रचयम्

वर्षति दुष्प-दुष्प जलधारा धग् धक् कुरुते में हृदयम् ।। साकेत सौ०-4/30,31,32,33







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

कवि द्वारा राम रावण के युद्ध का सजीव एवं भावपूर्ण चित्रण विक्रम सर्ग में किया गया है। इसके अन्तर्गत राम एवं रावण के शौर्य, पराक्रम एवं दिव्य स्वरूपों का भी विविध चित्रण हैं। राम एवं रावण के युद्ध में प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों के साथ ही लगभग सभी रसों का परिपाक होता हुआ दिखाई देता है—

सर्वस्त्रीनिलये सनातनि तवापाङ्गःश्रितं भूतलं

वात्सल्यात् पवनात्मजाय सकलां त्वं ब्रह्मविद्यामदाः

मह्यं यच्च दशाननं दलयितुं दिव्यायुधानां व्रजं

तत् कात्यायनि का कथा मम् नमो ब्रूयुः समे मानवाः ॥ (1)

अर्थात्

कामिनी का रूप ही

आश्रय तुम्हारा

हे सनातन शक्ति!

यह धरती

तुम्हारी एक चितवन पर टिकी है

स्नेहवश तुमने बता दी

पवनसुत को ब्रह्मविद्या

और दशमुख के विनाशक दिव्य आयुध

दिये मुझको

हम करें आभार ज्ञापन

किस तरह कात्यायनी

सारी मनुजता

आज चरणों में झुकी ॥

रावण और कुम्भकर्ण राम बाण के लक्ष्य बन जाने का वर्णन किया गया है —







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

“कुम्भकर्णो मषीवर्णो निद्राच्छद्म —परायणः

स च राम शरव्योऽभूद रावणो लोकरावणः ॥

अपूर्वो भुवने सोऽयं धर्माधर्मरतोऽभवत्

यदस्त्रसङ्कलव्योम्नः शून्यसंज्ञा वृथाऽभवत् ॥

बभौ रजोभिरुज्ज्वलो जनार्दनः सिताननः

प्रकामलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः ॥

अराल धारपट्टिशैरनारतं प्रवेल्लितैः

सुतक्षिणधारखड्ग कैश्च विधुदावेल्लितैः ।

न रामरोम विक्रियामतर्कयद् दशाननः

रोमलोहितः क्षतो रणाजिरे दशाननः ॥ (1)

इसी प्रकार प्रस्तुत प्रसंग में रावण राम से तीस अंगुल धारवाली चन्द्रहास से लड़ता रहा और राम के इकतीसवें बाण से धराशायी हो गया ।

निस्त्रिंशेन रणं कुर्वन् चन्द्रहासेन राक्षसः

एकत्रिंशेन रामस्य बाणेनागान्महीतलम् ॥ (2)

कवि द्वारा इस प्रसंग में असत्य पर सत्य की विजय का भाव पूर्ण चित्रण व्यक्त करने का भावात्मक स्वरूप प्रस्तुत किये गये हैं—

एकवक्त्रेण रामेण दशवक्त्रो निपातितः ।

सत्यं विजयते नित्यं क्वचिदल्पमातन्वित् ॥ (3)

राम ने रावण को मारकर त्रैलोक्य पर सदैव सत्यता का आधिपत्य स्थापित किया था ।

ऋक्षो मन्त्री कपिर्मित्रं शत्रुर्दुर्दत्तराक्षसः

त्रेतायां चित्रमेकाकी त्रिलोकीं राघवोऽजयत् ॥ (4)

अर्थात्— यह त्रेतायुग की एक अपूर्व घटना थी कि रीछ को मंत्री और वानर को मित्र बनाकर, अकेले राम ने विकराल राक्षस रावण को हराया और त्रैलोक्य पर सदा के लिए आधिपत्य पा लिया ।

1. वही — 6/19,20, 21,22

2. साकेत सौ 6/31

3. वही— 6/33

4. वही—6/34







डॉ० त्रिपाठी के साकेतसौरभम् के सातवां और आठवाँ सर्ग भी भाव चित्र की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। नदी और तडागों में लोगों के टहलने और नहाने की बातें, महर्षि गणों द्वारा भूमि वेदिका जलाने का दृश्य, प्रातः कालीन प्रकृति का चित्रण, प्रकृति चित्रण को मनोरम उदाहरण है— (1)

इसी सर्ग में आकाश, पाताल, धरती, सूर्य, नक्षत्र भी प्रातः दोपहर सायंकाल, आदि के विविध चित्र कवि के भावपूर्ण चित्रों का गुलदस्ता बना रहे हैं। प्रकृति के द्वारा होने वाले उदापान तथा सूर्य द्वारा विकसित की जाती हुई सृष्टि का सुन्दर चित्रण कवि ने अपने अभिषेक सर्ग में प्रस्तुत किया है। (2)

अन्तिम सर्ग दिग्विजय में भी कवि ने अनेक भाव चित्रों का निरूपण किया है। तमसा के किनारे कुश और लव प्रशिक्षण अश्वमेघ यज्ञ, राम की सेना से इन दोनों का सयुद्ध आदि प्रसंग अन्तिम सर्ग के भावचित्र के सशक्त उदाहरण है— (3)

1. सरः सरिज्जले जनाः प्रकुर्वतेऽवगाहनम् द्विजाः समित्समिन्धनै रूपासते हुताशनम् ।  
प्रमोदते दिवाकरः निशा क्वचिन्मिलीयते पलायते निशाकरः ॥  
भ्रमिं करोति भूरियं विभाति भानुचेष्टितम् विचित्रराम्बरैरिदं चिदम्बरं हि वेष्टितम् ।  
भूमूर्ध्वः स्वश्च यत् क्रीडा प्राङ्गणं भाति नित्यशः  
बालो दिनमणिः सोऽयं होरया तरुणायते ॥  
तस्मिन् स्नेहाकुला तन्वी मनाङ् नोत्पतितुं क्षमा  
सङ्कोचमञ्जिता एति यत्र तत्र निलीयते ॥  
अयं प्रकाशपुञ्ज एति विद्युदर्बदोपमः स्फुरद्दुरन्त वह्निविस्फुलिङ्गराशिविभ्रमः  
तुषार बिन्दुशीषतः स्रवन्मरन्दसञ्चयम्  
सरोरुहं मधुव्रताश्चिर धयन्ति निर्भयम्  
ततान निर्विशङ्कता महः समुद्यतार्यमः ।  
स्फुरद्दुरन्त वह्निविस्फुलिङ्गराशिविभ्रमः ॥ (साकेत सौ० 7/18,19,20,21,2,23)
2. अद्यापि जनतामध्ये व्यापि रामस्य सद्यशः  
काऽपि नो समता लोके नापि वामा प्रतिक्रिया ॥  
जनः स्वपिति जागर्ति स्नाति भुङ्क्ते विजृम्भते  
श्रवासे श्रवासे स्मरन् रामं निःश्रवासे चान्तिं मे कृती
3. ऋषेर्विव्यदृशः पार्श्वदवात्य निगमागमौ  
अचिरेणैव तौ जातौ सर्वविद्या-विशारदौ ॥  
द्वादशाब्देषु पुनर्विश्वजयोत्सवम्  
तेने रामोऽश्वमेधेन स्वर्णसीतासमन्वितः ॥  
ययुं निगृह्य तौ वीरौ वाहिनीमस्त्रवर्षणैः  
रामञ्च निन्यतुमूर्तच्छाम् साहितीरसवर्षणैः ॥ (साकेत सौ० 8/25, 26,31)



संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

(१) - संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका

संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका  
संस्कृत-संज्ञा-सूचिका



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इस प्रकार हम देखते हैं कि साकेतसौरभम् के प्रणेता डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी ने भावपक्ष पड़ी सफलता पूर्वक प्रस्तुत किया है चाहे वह सौन्दर्य त्रिण हो चाहे भावानुभूति कोई अन्य अनुभूति हो इन सब की अभिव्यक्ति स काय में दिखाई पड़ती है। प्रकृति चित्रण प्रकृति के सौन्दर्य का चित्रण तथा रसानुकूल भावों के चित्रण भी डॉ० त्रिपाठी के इस काव्य में यत्र-तत्र सर्वत्र बिखरे हुए मिल जाते हैं।

इस प्रकार अब हम वाल्मीकि रामायण और साकेतसौरभम् की तुलना करते हैं तो वाल्मीकि रामायण वयं में एक उपजीव्य सिद्ध होता है यह महकाव्य बाद में कवियों के लिए निःसन्देह रूप से एक आधार प्रस्तुत करता है। वाल्मीकि रामायण में जितने भी प्रसंग आये हैं चाहे वह सौन्दर्य चित्रण हो प्रकृति चित्रण हो अथवा भिन्न-भिन्न रसों एवं भावों को व्यक्त करने वाले विशद चित्रण हो वे भी बाद के कवियों के लिए भाव चित्रण का आधार बनते हैं। रामकाव्यपरम्परा अन्यन्य काव्यों के समान "साकेतसौरभम्" के प्रणेता "डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी" ने वाल्मीकि रामायण के भावचित्र वाले प्रसंगों को अपने काव्य में स्थान दिया है, इतना अवश्य है कि प्रसंगानुकूल कथ्य चित्रण में अपनी भाव प्रवणता एवं कल्पनाशीलता के द्वारा साकेतसौरभम् के अनेक प्रसंग कवि द्वारा चमत्कारिक रूप में मार्मिक बना दिये गये हैं। कवि की यही प्रसंगानुकूलता कवि के भाव पक्ष के चित्रांकन को सफल बना देती है।

(ख) वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् में शिल्प दृष्टि से तुलना—

काव्य में प्रयुक्त भाषा, छन्द योजना, अलंकार, उक्ति वैचित्य, उक्ति, लाघव आदि को उस काव्य का 'कलापक्ष' कहा जाता है। आलंकारिक रूप में विद्वान काव्य के कला पक्ष को काव्य का शरीर भी कहते हैं। भाव कल्पना, आदर्श और भाषा इन्हीं आधार स्तम्भों पर खड़ा हुआ साहित्य कला का जो विशाल भव्य भवन कवि की रचनाओं में मिलता है, उसके







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

किसी भी प्रकोष्ठ में या प्रकोष्ठकोण में चले जाइए, सभी स्थानों पर एक सी अनुपम रचना—चातुरी एक सी अतुल सौन्दर्यच्छता अंकित मिलेगी, जो दर्शक—गण को आनन्द मुग्ध कर देती है। कवि की रचनाओं का भाव तत्व, जिसे साहित्यिक परिभाषा में रस अथवा काव्यात्मा कहते हैं, कल्पना की विविध उड़ाने तथा उदात्त आदर्शों से सुन्दर समन्वय पाकर अपना ऐसा अच्छा परिपाक दिखाता हैं जिससे किसी कवि की काव्यकला सर्वश्रेष्ठ बन जाती है।

संस्कृत—काव्यों में शैलियाँ भी अपना एक विशेष स्थान रखती हैं, कवियों को जो विश्व प्रतिष्ठा मिलती है उसका बहुत कुछ श्रेय शैलियों को जाता हैं। कवियों के द्वारा रचित काव्यों में किसी भी प्रकार के नीरस और अशिष्ट कथानक अथवा घटना क्यों न हो, उसे ये अपनी कल्पना प्रसूत अद्भुत सृष्टि—नैपुण्य द्वारा ऐसा भव्य एवं मार्मिक और चमत्कृत पूर्ण बना देते हैं कि वह देखने योग्य होता है।

### वाल्मीकि रामायण में शिल्प दृष्टि—

रामायण में हृदयपक्ष प्राधान्य होने पर भी कलापक्ष की अवहेलना नहीं है। वाल्मीकि की भाषा उदात्त भावों की अभिव्यक्ति का समर्थ माध्यम है। छोटे—छोटे प्रायः समास विहीन पदों में महर्षिने बड़े ही सरस तथा सरल शब्दों के द्वारा अपने भावों की अभिव्यञ्जना की है। शाब्दी सुषमा की ओर महर्षि का ध्यान स्वतः आकृष्ट हुआ है तथा उन्होंने इसका प्रकटीकरण बड़ी सुन्दरता तथा भावुकता के साथ किया हैं। आनुप्रासिक शोभा के लिए एक पद्य का दृष्टान्त पर्याप्त होगा। (1)

विनष्टशीतांबुतुषारपंको महाग्रहग्राह विनष्टपंकः

प्रकाशलक्ष्यम्याश्रयनिर्मलांकोरराज चन्द्रो भगवान शशांकः॥

उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा का सुन्दर प्रयोग वर्ण्य वस्तु के रूप, गुण और



...  
...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
...  
...  
...  
...



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

स्वभाव का स्पष्टीकरण बड़ी रुचिरता के साथ कर रहा हैं। कालिदासीय उपमा अपनी सुषमा के लिए आलोचकों के समादर की भावना बनी हैं, वाल्मीकीय उपमा में कुछ अपना निजी वैशिष्ट्य तथा रुचिर चमत्कार है, जिसकी तुलना अन्यत्र नहीं मिलती। वाल्मीकीय उपमा अपने औचित्य, आनुरूप्य तथा रसानुकूल्य से आलोचकों का ध्यान बरबस खींचती है। उसकी बड़ी मार्मिक विलक्षणता है— मूर्त की अमूर्त पदार्थों से तुलना । अशोक वाटिका के एकान्त में बैठी हुई दयनीय सीता के चित्रण में वाल्मीकि ने उपमाओं का एक भव्य व्यूह खड़ा कर दिया है, जो साहित्य संसार में एकदम अछूती नवीन तथा चमत्कारिणी है। शोक के भार से न्यस्त त सीता धूमजाल से संशक्त अग्नि शिख के समान है। सन्दिग्ध स्मृति, विहत, श्रद्धा, प्रतिहत ,आशा, उपसर्ग (विघ्नबाधा) से युक्त सिद्धि , कलुषित बुद्धि, नवीन अपवाद के कारण विनष्ट कीर्ति के साथ शोकमग्ना सीता की तुलना करने वाला कवि हमारे हृदय में दैन्य की भावना को तीव्र बना रहा है तथा सीता के दशावैषम्य के उत्कर्ष की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट कर रहा है—

“भूमौ सुतनुमासीनां नियतामिव तापसीम् ।

निःश्वासबहुलां भीरुं भुजगेन्द्र बधूभिः ।।

शोकजालेन महता विततेन न राजतीम् ।

संशक्तां धूमजालेन शिखामेव विभावसोः ।।(1)

इसी प्रकार सीता को देखकर हनुमान की बुद्धि सन्देह में पड़ जाती है, जिस प्रकार शास्त्र के अनाभ्यास से विद्या नितान्त शिथिल बन जाती है और पद—पद पर सन्देह पैदा करती है—







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

“तस्य संदिदिहे बुद्धिस्तथा सीतां निरीक्ष्य च ।

आम्नायानामयोगेन विद्यां प्रशिथिलामिव ॥ (1)

अलंकार से विहीन, सुषमा से हीन सीता को देखकर हनुमान जी ने बड़े कष्ट से पहचाना कि यही सीता है, जिस प्रकार संस्कार से हीन तथा अर्थान्तर भिन्न अर्थ में प्रयुक्त वीणा को सुनकर श्रोता बड़ी कठिनता से उसके स्वरूप को पहचानता है—

‘मलपङ्कधरां दीनां मण्डनार्हाममण्डिताम् ।

प्रभां नक्षत्रराजस्य कलामेधैरिवावृताम् ॥

दुःखेन बुबुधे सीतां हनुमानलंकृताम् ।

संस्कारेण यथा हीनां वाचमर्थान्तरं गताम् ॥ (2)

इसी प्रकार उत्प्रेक्षा का प्रदर्शन भी बड़ा चमत्कार पूर्ण है। लंका-दाह के अनन्तर हनुमान अरिष्ट पर्वत के ऊपर जब चढ़ते हैं, उस समय—

सघोषाः समशीर्यन्त शिलाश्चूर्णीकृतास्ततः ।

स तमारुह्य शैलेन्द्रं व्यवर्धत महाकविः ॥ (3)

—जैसा पद कवि की शिल्प प्रवणता का प्रतीक बन जाता है।

वाल्मीकि ने उत्प्रेक्षाओं की झड़ी लगा दी है— एक से एक नवीन चमत्कारी उत्प्रेक्षा जिसे कवि की वाणी ने स्पर्श कर उच्छिष्ट नहीं बना डाला है। पर्वत के श्रृङ्गों से लटकने वाले मेघों के द्वारा प्रतीत होता है कि वह पहाड़ चादर ओढ़ें हुए है—

सोउत्तरीयमिवाम्भोदैः श्रृङ्गान्तरविलम्बिभिः

वोध्यमानमिव प्रीत्या दिवाकरकरैः शुभैः ॥ (4)

1. वही— 15/38

2. वही —15/37,39

3 वही—56/39

4. सुन्दरकाण्ड—56/27



...  
...  
(1) ...  
...  
...  
...  
...  
...  
(2) ...  
...  
...  
...  
(3) ...  
...  
...  
...  
(4) ...  
...  
...  
...  
(5) ...  
...



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इसी प्रकार जल की बाढ़ की गम्भीर गड़गड़ाहट के कारण वह पर्वत अध्ययन करता सा प्रतीत होता है तथा अनेक झरनों के शब्द से वह गीत गाता— सा मालूम पड़ रहा है—

“तोयैधनिः स्वनैर्मन्द्रैः प्राधीतमिव पर्वतम् ।

प्रगीतमिव विस्पष्टं नानाप्रस्रवणस्वनैः ॥ (1)

अलंकारों का यह विन्यास पाठकों के हृदय में केवल कौतुक तथा चमत्कार करने के लिए नहीं किया है, प्रत्युत् यह रसानुकूल है— मूल रस का पर्याप्त रूप से पोषक संबर्धक तथा परिवृंहक है। रूपक की भी छटा कम सुहावनी नहीं है। तात्पर्य यह है कि रामायण में कलापक्ष का विकास भी बड़ी सुन्दरता से किया गया है। वाल्मीकि की प्रतिमा तथा योग्यता की एक महती दिशा तथा सामान्य आलोचनाओं की दृष्टि से ओझल रही हैं। वाल्मीकि हमारे आदि कवि ही नहीं है, प्रत्युत आदि आलोचक भी है।

काव्य का नैसर्गिक रूप क्या होता है, महाकाव्य के भीतर किन उपादानों का ग्रहण होता है? आदि प्रश्नों का उत्तर हमें वाल्मीकि रामायण में उपलब्ध होता है। संस्कृत साहित्य में ‘महाकाव्य’ की कल्पना रामायण के साहित्यिक विश्लेषण का निश्चित परिणाम होता है। रामायण के अन्तरंग तथा बहिरंग की समीक्षा करके हमारे आलोचकों ने साहित्य के सिद्धान्तों को खोज निकाला और उनका उपयोग करके संस्कृत साहित्य को वर्धिष्णु तथा समृद्ध बनाया। (2)

काव्य के अन्तरंग के समीक्षण के प्रसंग में महर्षि की सबसे बड़ी देन आलोचना जगत को है— शोक तथा श्लोक का समीकरण—

“मा निषाद प्रतिष्ठां त्वगमः शाश्वती समाः ।

यत् कौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥ (3)

1. वही—56/28

2. संस्कृत साहित्य क इतिहास — आचार्य बलदेव उपाध्याय—पृ०—36

3. बालकाण्ड— 2/15







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इस महत्वपूर्ण तथ्य की ओर संस्कृत के मूर्धन्य आलोचक आनन्दवर्धन ने तथा महाकवि कालिदास ने समभावेन इंगित किया है। कालिदास की स्पष्ट उक्ति है (रघुवंश) —

निषाद विद्धाण्डजदर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः ।

आनन्दवर्धन की रुचिर आलोचना है (धन्यालोक<sup>1</sup>/5)

काव्यास्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा ।

क्रौञ्चद्वन्द्ववियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः ।।

इस समीकरण का तात्पर्य बड़ा ही गम्भीर है। रसाविष्ट हृदय होने पर ही कविता का उद्गम होता है। जब तक कवि के हृदय को तीव्र भावना आक्रान्त नहीं करती, तब तक वह विशुद्ध कविता का निर्माण नहीं कर सकता । काव्य अन्तश्चेतना की बाह्य अभिव्यक्ति है। जो हृदय स्वतः किसी भाव का अनुभाव नहीं करता , वह किसी दशा में दूसरों के ऊपर इस भाव का प्रकटीकरण नहीं कर सकता एवं रसात्मक कविता के उन्मेष के लिए हृदय को रस दशा में पहुँचाना ही पड़ता है। तीव्रभाव के अन्तः जागरण के साथ ही साथ उसकी शाब्दी अभिव्यक्ति बाहर अवश्वमेव होती है। आलोचना के इस मर्म को वाल्मीकि ने हमें सूत्र रूप में समझाया।

अतः शोक— श्लोक साहित्यिक समीकरण आलोचक वाल्मीकि का महत्वपूर्ण तथ्य संकेत है।

काव्य के बहिरंग रूप के विषय में वाल्मीकि में बहुत सी उपादेय सामग्री अपने विश्लेषण की अपेक्षा रखती है। लवकुश के द्वारा मधुर स्वरों में रामायण का गायन वाल्मीकि की इस मार्मिक आलोचना का भाजन है—

“अहो गीतस्य माधुर्यं श्लोकानांच विशेषतः ।

चिरनिर्वृत्तमप्येतत् प्रत्यक्षमिव दर्शितम् ।। (1)

1. बालकाण्ड— 4-17







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इसी प्रकार किष्किन्धाकाण्ड में हनुमान जी के भाषण की प्रशंसा में रामचन्द्र जी ने जो मार्मिक बातें कहीं हैं वे साहित्य की दृष्टि से मार्मिक हैं। इस प्रकार समीक्षा करने पर वाल्मीकि का आलोचक रूप भी हमारे सामने भली-भाँति प्रकट होता है—

न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा ।

अन्येष्वपि च सर्वेषु दोषः संविदितः क्वचिद् ।।

‘संस्कारक्रम सम्पन्नाभद्भूतामविलम्बिताम् ।

उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्शिणीम् ।। (1)

महर्षि वाल्मीकि ने जब आदर्श गुणों से मण्डित किसी व्यक्ति का परिचय पूछा? तब नारद ने एक मानव को ही उन अनुपम गुणों का भाजन बतलाया—

“तैर्युक्तः श्रूतयां नरः” रामायण नर चरित्र का ही कीर्तन है। भारतीय गार्हस्थ —जीवन का विस्तृत चित्रण रामायण का मुख्य उद्देश्यप्रतीत हो रहा है। आदर्श पिता, आदर्श माता, आदर्श भ्राता, आदर्श पति, आदर्श पत्नी आदि जितने आदर्शों का इस अनुपम महाकाव्य में आदि कवि की शब्द तूलिका में खींचा है। वे सब गृहधर्म के पट पर ही चित्रित किये गये हैं। इतना ही क्यों, राम-रावण का वह भयानक युद्ध भी इस काव्य का मुख्य उद्देश्य नहीं है। वह तो राम-जानकी-पति-पत्नी की परस्पर विशुद्ध प्रीति को पुष्ट करने का एक उपकरण मात्र है और ऐसा होना स्वाभाविक ही है। रामायण को भारतीय सभ्यता ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए प्रधान साधन बना रखा है, और भारतीय सभ्यता की प्रतिष्ठा गृहस्थाश्रम है। अतः यदि इस गार्हस्थ्य धर्म की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए आदि कवि के इस महाकाव्य का प्रणयन किया तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? रामायण तो भारतीय सभ्यता का प्रतीक ठहरा, दोनों में परस्पर







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

उपकार्योपकारण भाव बना हुआ है? एक को हम दूसरी की सहायता से समझ सकते हैं। (1)

इसी प्रकार राम अपने अपराधों के कारण हनन, योग्य व्यक्तियों को बिना मारे नहीं रहते और अवध्य के ऊपर क्रोध के कारण कभी उनकी आँख भी लाल नहीं होती है। (2)

राम का शील कितना मधुर है। वे सदा दान करते हैं, कभी दूसरे से प्रतिग्रह नहीं लेते। वे अप्रिय कभी नहीं बोलते। साधारण स्थिति की बात नहीं प्राणसंकट उपस्थित होने की विषम दशा में भी सत्य पराक्रम वाले राम इन नियमों का उल्लंघन नहीं करते। अपने कुटुम्बियों के प्रति उनका व्यवहार कितना कोमल तथा सहानुभूति पूर्ण है। सीता के प्रति राम का वर्णन करते समय आदिकवि ने मानस-तत्व का बड़ा ही सूक्ष्म निरीक्षण प्रस्तुत किया है। रामसीता के वियोग में चार कारणों से सन्तप्त हो रहे हैं। (3)

राम शारीरिक सुषुमा तथा मानसिक सौन्दर्य दोनों के जीते-जागते प्रतीक थे। राम के सौन्दर्य के वर्णन में वाल्मीकि कह रहे हैं—

‘नहि तस्मान्मनः कश्चित् चक्षुषी वा नरोत्तमात् ।

नरः शक्नोत्यपाक्रष्टुमतिक्रान्तेऽपि राघवे ॥ (4)

रामचन्द्र की अलौकिक सुषुमा का अनुपम इसी घटना से लगाया जा सकता है, कि राम के अत्यन्त दूर चले जाने पर कोई भी मनुष्य न तो

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास —आचार्य बलदेव उपाध्याय—पृ०—38,39

2. नास्य क्रोधः प्रसादो वा निरर्थोऽस्ति कदाचन ।

हन्त्येष नियमाद् वध्यानवध्येषु न कुप्यति ॥ (अयोध्याकाण्ड—4/6)

3. स्त्री प्रणष्टेति कारुण्यात् आश्रितेत्यानुशंस्यतः ।

पत्नी नष्टेति शोकेन प्रियेति मदनेन च ॥ (सुन्दरकाण्ड—15/49)

4. अयोध्याकाण्ड—17/13







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अपने मन को उनसे खींच सकता था और न अपने दोनों नेत्रों को। जो राम को नहीं देखता और जिसे नहीं देखते ये दोनों संसार में निन्दा के पात्र बनते हैं। इतना ही नहीं, उनकी अपनी आत्मा भी उन्हें निन्दा करती है। रामचन्द्र के दिव्य गुणों की यह झाँकी कितनी मधुर तथा सुन्दर हैं—  
(1) वही कवि की माधुर्य शैली का सफल अवदान है।

राम और सीता का निर्मल चरित्र की कोमल काव्य-प्रतिमा का मनोरम निदर्शन है। रामायण हमारा जातीय महाकाव्य है। वह भारतीय हृदय का उच्छवास है। यह मानव जीवन राम दर्शन के बिना निरर्थक है— राम दर्शन उभय अर्थ में — राम —कर्तृक दर्शन (राम के द्वारा देखा जाना) तथा राम—कर्मक दर्शन (राम को देखना) । राम जिसको नहीं देखते, वह लोक में निन्दित है और जो व्यक्ति राम को नहीं देखता, उसका भी जीवन निन्दित है। उसका अन्तः करण स्वयं उसकी निन्दा करने लगता है। (2)

इसी प्रकार इस प्रसंग में साधारण मनुष्य जीवन के साफल्य राज्य के बहिर्भूत होने पर कितना व्यथित तथा आर्त होता है? यह अनुभव से हमें भली भाँति पता चलता है, परन्तु राम के ऊपर इस निर्मम घटना का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। वे महनीय हिमालय के समान अडिग तथा अड़ोल खड़े होकर विपत्ति के दुर्दान्त तरंगों को अपने विशाल वक्षःस्थल के ऊपर सहते हैं, और उनके चित्त में किसी प्रकार का विकार लक्षित नहीं होता— (3)

1. स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं प्रभाषते।

उच्यमानोऽपि परुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते ॥

बुद्धिमान् मधुराभाषी पूर्वाभाषी प्रियंवदः।

वीर्यवान् न च वीर्येण महता स्वेन विस्मितः ॥

न चानृतकथो विद्वान् वृद्धानां प्रतिपूजकः।

अनुरक्तः प्रजाभिश्च प्रजाश्चाप्यनुरज्यते ॥ (2/1-10,11,12,13,14)

2. यश्च रामं न पश्येत्तु यं च रामो न पश्यति।

निन्दितः सर्वलोकेषु स्वात्मप्येनं विगर्हते ॥ (अयोध्याकाण्ड-17/14)

3. न वनं गन्तामस्य त्यजतश्च वसुन्धराम्।

सर्वलोकातिगतस्येव लक्ष्यते चित्तविक्रिया ॥ (अयोध्याकाण्ड-19/33)







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

वाल्मीकि ने राम के राज्य का जो सुखद तथा शुभग चित्रण किया है वह राजनीति शास्त्र की एक अनुपम देन है राम राजनीति के महनीय उपासक थे। उनके समान नीतिमान् राजा दूसरा नहीं हुआ। जनपद में कृषि और गोरक्षा से जीने वाले सुरक्षित तथा धनी प्राणी द्वार खोलकर कभी नहीं सोते थे, दस्यु दानवों के भय से इसीलिए राजा की नितान्त आवश्यकता होती है—

नाराजके जनपदे धनवन्तः सुरक्षितः ।

शेरते विवृतद्वाराः कृषिगोरक्ष—जीविनः ॥ (1)

अयोध्याकाण्ड के 67 वे सर्ग का 'नाराजके जनपदे' वाला लोकगायन भारतीय राजनीति के सिद्धान्तों का प्रकाश एक महनीय वस्तु है। राजा राष्ट्र के धर्म तथा सत्य का उद्भव स्थल है। इसीलिए उसके अभाव में राष्ट्र का कोई भी मंगल न सम्पन्न हो सकता है, न कोई कल्याण कल्पित हो सकता है—

“यथा दृष्टिः शरीरस्य नित्यमेव प्रवर्तते

तथा नरेन्द्रो राष्ट्रस्य प्रभवः सत्यधर्मयोः ॥

राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतां कुलम् ।

राजा माता—पिता चैव राजा हितकरो नृणाम् ॥ (2)

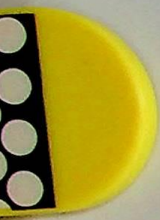
वाल्मीकि आर्य धर्म के रहस्य का उद्घाटन करते हैं, जब वे कहते हैं कि आर्य जीवन धर्म बन्ध से बँधा हुआ है। मानव भारतीय संस्कृति के अनुसार स्वतन्त्र प्राणी तो अवश्य है, परन्तु समग्र मानव एक दूसरे से धर्म सम्बंध में बँधकर एक दूसरे के हितचिन्तन तथा हिताचरण में संलग्न है तथा अपने निर्दिष्ट नैतिक मार्ग से एक पग भी नहीं डिगता । भरत अपने शुद्ध भावों की सफाई देते हुए कह रहे हैं कि धर्म बन्धन के कारण ही मैं बध करने योग्य भी पापचारिणी माता को मार नहीं डालता । (3)

1. अयोध्याकाण्ड—67 / 19

2. अयोध्याकाण्ड—67 / 33-34

3. प्रेषिते मयि यत् पापं मात्रा मत्कारणात् कृतम्  
क्षद्वया तदन्विष्टं मे पश्यीदत भवान् मम ॥ (अयोध्याकाण्ड—106/8)





...  
...  
...  
...  
...  
...

...  
(1) ...  
...  
...  
...  
...

...  
...  
(2) ...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...  
...



वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

राम सत्य तथा प्रतिज्ञा —पालन के महनीय व्रती है। सत्यनिष्ठा तथा प्रतिज्ञा—निर्वाह के महनीय व्रत के कारण वे संसार में महिमा सम्पन्न माने जाते हैं। जाबालि ने राम को अयोध्या लौट जाने तथा सिंहासन पर आसीन होने के लिए किन युक्तियों का व्यूह नहीं रचा, परन्तु राम अपने सत्य से पिता के सामने की गई प्रतिज्ञा से रंचक मात्रा भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने बड़े आग्रह से कहा कि न तो लोभ से, न मोह से, न अज्ञान से मैं सत्य के सेतु को तोड़ूंगा। पिता के सामने प्रतिज्ञा का निर्वाह अवश्य करूंगा।

“नैव लोभन्न मोहाद्वा न धाज्ञानात् तमोऽन्वितः।

सेतुं सत्यस्य भेत्स्यामि गुरोः सत्यप्रतिश्रवः॥ (1)

इसी प्रकार अरण्यकाण्ड में भी राम क्षत्र धर्म के साकार विग्रह है। भारतवर्ष का क्षत्रियत्व राम के नस—नस में व्याप्त हो रहा है। ऋषियों के विशेष आग्रह करने पर राम राक्षसों के मारने की विकट प्रतिज्ञा करते हैं। सीता क्षत्र धर्म सेवन से बुद्धि के मलिन की बात सुनाकर उन्हें इसकार्य से विरत करना चाहिए—

“कदर्यकलुषा बुद्धिर्जायते शस्त्रसेवनात्।

पुनर्गत्वा त्वयोध्यायां क्षत्रधर्मं चरिष्यसि॥ (2)

इसी प्रकार इस प्रसंग में भी राम इस प्रेममय उपालम्भ का तिरस्कार कर डंके की चोट क्षत्रियत्व के आदर्श प्रकट करते हैं कि क्षत्रियों के द्वारा धनुष धारण करने की यही आवश्यकता है कि पीड़ितों का शब्द ही कहीं न हो। जगत् की रक्षा का भार धनुषधारी क्षत्रियों के ऊपर सर्वदा रहता ही है—

“किं नु वक्ष्याम्यहं देवि त्वयैवोक्तमिदं वचः।

क्षत्रियैर्धायते चापो नार्तशब्दो भवेदिति॥ (3)

1. अयोध्याकाण्ड— 109/17

2. अरण्यकाण्ड—9/28

3. वही—10/3







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

सीता के द्वारा बारम्बार क्षत्रधर्मानुकूल प्रतिज्ञा-पालन से पराङ्मुख किये जाने पर राम का क्षत्रियत्व बल उबल उठता है। वे डंके की चोट पुकार हैं— मैं प्राणों को भी छोड़ सकता हूँ, हे सीते! लक्ष्मण के साथ तुम्हें भी छोड़ सकता हूँ, परन्तु प्रतिज्ञा कभी नहीं छोड़ सकता विशेष कर ब्राह्मणों के साथ की गई प्रतिज्ञा तो मेरे लिए नितान्त अपरिहार्य है—

“अत्यहं जीवितं जह्यां त्वां वा सीते सलक्ष्मणाम्।

न तु प्रतिज्ञां संश्रुत्य ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः॥ (1)

इसी प्रकार किष्किन्धाकाण्ड में हनुमान जी के भाषण की प्रशंसा में रामचन्द्र ने जो उपादेय बातें कहीं हैं वे साहित्य की दृष्टि से मार्मिक हैं। इस प्रकार समीक्षा करने पर वाल्मीकि का आलोचक रूप भी हमारे सामने भली-भाँति प्रकट होता है। (2)

भगवती जानकी का चरित्र भारतीय ललना के महान आदर्श का प्रतीक है। रावण के बारम्बार प्रार्थना करने पर भी सीता ने जो अवहेलनासूचक वचन कहा है, वह भारतीय नारी के गौरव को सदा उद्घोषित करता रहेगा। 'इस निशाचर रावण से प्रेम करने की बात तो दूर रही, मैं तो इसे अपने पैर से नहीं—नहीं बायें पैर से भी नहीं छू सकती—

छिन्ना भिन्ना प्रभिन्ना वा दीप्ता वाग्नौ प्रदीपिता।

रावणं नोपतिष्ठेयं किं प्रलापेन वशिचरम्॥ (3)

रावण से युद्ध के समय रामचन्द्र की शौर्यवान् पूर्णतया अभिव्यक्ति पाती है।

वे रावण की भर्त्सना इन शब्दों में करते हैं। (4)

1. अरण्यकाण्ड—10/18

2. न मुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा।  
अन्येष्वपि च सर्वेषु दोषः संविदितः क्वचित्॥  
अविस्तरमसंदिग्धमविलम्बितमव्ययम्।  
उरस्थं कण्ठगं वाक्यं वर्तते मध्ययमस्वरम्  
संस्कारक्रमसम्पन्नम् अद्भूताम् विलम्बिताम्  
उच्चारयतिकल्याणीं वाचं हृदयं हर्षिणीम् ॥ (किष्किन्धाकाण्ड—3/30,31,32)

3. सुन्दरकाण्ड 26/10

4. स्त्रीषु शूरधिनाथासुपरदाराभिमर्शक।  
कृत्वा का पुरुषं कर्म शूरोऽहमिति मन्यसे॥  
भिन्नमर्यादं निर्लज्जं चारित्र्यघनवस्थित।  
दर्पान्मृत्युमुपादाय शूरोऽहमिति मन्यसे॥ (युद्धकाण्ड—105/13,14)







वाल्मीकिरामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

कैलाश को उखाड़ने वाला, ब्रह्मा को परास्त करने वाला देवताओं से भी अपनी सेवा कराने वाला रावण कोई सामान्य मानव नहीं था। जगत को अपने घोर कार्यों से रूलाने के कारण ही तो राम ने उसके साथ जो सद्व्यवहार किया वह शूरजगत् की एक आलोक सामान्य घटना है। रावण की मृत्यु पर शोक करते हुए विभीषण ने ठीक ही कहा—

“गतः सेतुः सुनीतानां धर्मस्य विग्रहः।

गतः सत्त्वस्य संक्षेपः प्रस्तावनां गतिर्गता॥

आदित्यः पतितो भूमौ मग्नस्तमति चन्द्रमाः।

चित्रभानुः प्रशान्तर्चिर्व्यवसायो निरुद्यमः।

अस्मिन् निपतिते भूमौ वीरे शस्त्रभ्रतां वरे। (1)

रावण का यह नितान्त यथार्थ चरित्र—चित्रण है। युद्ध में निहत रावण भूमि पर गिरने वाले आदित्य अन्धकार में धँसे हुए चन्द्रमा, शान्त ज्वाला वाले अग्नि तथा उद्यमहीन उत्साह के समान है। राम ने भी रावण की उचित प्रशंसा की तथा उसमें वर्तमान गुणों के महत्व को समझाया और अन्त में अपने हृदय की विशालता को बड़े ही सुन्दर शब्दों में प्रकट किया है। कवि का यही शब्द विधान, भाषा की मंजुलता, शैली का लालित्य, अलंकार विधान एवं प्रसंगानुकूल छन्द योजना आदि उसके शिल्प विधान के सुदृढ़ स्तम्भ हैं।







### साकेतसौरभम् की शिल्प दृष्टि

इसी अध्याय के पूर्व खण्ड में हमने देखा कि कलापक्ष कवि की ऐसी निर्मित है जो उसकी रचना को एक आकार देकर रूपायित करती है महर्षि वाल्मीकि के शिल्पविधान का विवेचन करते हुए हमने यह देख लिया है कि किसी साहित्यकार के कलापक्ष में मुख्यतया उसकी भाषा, शैली, नैपुण्य विधान, छन्दयोजना, अलंकारसुषमा, उक्तिवैचित्य तथा भिन्न-भिन्न दृश्यों एवं प्रसंगों के चित्रण में एक नया आकार प्रस्तुत कर देना मुख्य रूप से समाहित हैं, इन रूपों के द्वारा हम कवि के रचना संसार का महल सजीव पाते हैं। महर्षि वाल्मीकि की तरह ही डॉ० भास्कराचार्य विरचित साकेत-सौरभम् महाकाव्य भी शिल्प दृष्टि से उल्लेखनीय है। रामकथा के क्रम में लिखा गया यह काव्य भी संस्कृत साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है शिल्प दृष्टि से यद्यपि कवि को वाल्मीकि रामायण का आधार प्राप्त था और कथावस्तु की दृष्टि से भी वाल्मीकि रामायण ही इसका उपजीव्य है, फिर भी डॉ० त्रिपाठी ने इस काव्य में अनेक शिल्पीय परिवर्तन किये हैं जो इसकी न्यूनता को व्यक्त करते हैं इन्होंने भाषा, छन्द, अलंकार शैली, अलंकारयोजना शब्द विधान तथा अभिव्यक्ति की विविधता के द्वारा अपने महाकाव्य को चमत्कार पूर्ण बना दिया है।

डॉ० त्रिपाठी की इस काव्य की भाषा सहज एवं सरल संस्कृतियुक्त है, अपने छन्दों का हिन्दी रूपान्तरण तथा कहीं-कहीं पर पद्यानुवाद इस काव्य की भाषा को और ही मनोरम बना देता है। मिथिला से चारों भाई अपनी पत्नियों के साथ अयोध्या में राजषी पालकियों में जब पहुँचे तो उस समय का चित्रण दर्शनीय है -

वैदही -राघव -नवदम्पती-निवासपुरी

व्यलसद् वैकुण्ठ निभा भूतले कृतास्पदा







विष्णुरत्र रामोऽभवत् प्रेयसी रमा वभूव  
 रुपमाधुरी समन्विता परं प्रियंवदा  
 मण्डवीवृतो रराज केकयीसुतो भरतो  
 येन साधुना मता तृणाय विश्वसम्पदा  
 उर्मिलया लक्ष्मणेऽय शत्रुघ्नः श्रुतकीर्त्या  
 समं क्रमसपर्यया वशंवदो च सर्वदा ॥१॥

पद्यानुवाद— सीता और राम नवदम्पति से निखर उठी  
 वह पावन नगरी वैकुण्ठ बनी लगती थी  
 विष्णु स्वयं राम बने और सुघराई लिए  
 रमा ही सीता बन आई हुई लगती थी  
 माण्डवी के साथ उन्हीं भरत का सुयोग्य मिला  
 विश्व की विभूति जिन्हें तृण समान लगती थी  
 उर्मिला थीं लखन वधू और रिपुसूदन की  
 तन छाया सँवरी श्रुतकीर्ति बनी लगती थी ॥

यहाँ पर भाषा के प्रवाह में पूर्णोपमा का सौंदर्य भी मणिकांचन संयोग पैदा कर रहा है।

इसी प्रकार वर्णात्मक शैली में भाषा का प्रवाह कहीं शिथिल नहीं होता है अपितु भाव एवं छन्द की गति को और भी सरस बना देता है—

नात्युच्चैर्न तु नीचकैरिह सुखी स्यान्मध्यमार्गाश्रितो  
 धर्म शाश्वतमाकलय्य मनुजः सत्यं सदा सेवताम्  
 भूतानामविहिंसनेन मुदिता यत्रोदिता राजते  
 भाव्या ते नवमावतार विततासा सौगती संस्कृतिः ॥







यथा— झषं कूर्म कोलौ जपार्थं न मन्ये  
 नृसिंहे न धीर्वामने जामदग्न्ये  
 तथा कृष्ण बुद्धौ न कल्क्यादयोऽन्ये  
 यथा राम —नामाक्षरे धन्यधन्ये ॥

(साकेत सौरभम् 2/ 64-66)

अपने काव्य की भाषा में कवि ने अनेक सिद्धान्तों लोकोक्तियों एवं मुहावरों को जिस कुशलता से अपनाया है उससे भाषा और भी सरस बन गयी है साथ ही कथानक में कहीं शिथिलता नहीं दिखाई पड़ती ।

“भाग्यं सुताय दुर्भाग्ये रामचन्द्राय वृण्वती  
 स्वकीयमेव सौभाग्यं महिषी स्वयमावृणोत् ॥  
 सुमन्त्राच्च वसिष्ठाच्च राज्ञो दशरथाच्च वा  
 स्त्रीचरित्रं बलीयः स्यादिति लोकेषु चर्चितम् ॥  
 यत् कुग्जाडडजगृहे राज्ञी चुकोप चिखिदे नृपः ।  
 अन्तः काम्येव रामस्य रक्षोनाशाय साऽभवत् ॥  
 अपि जीवेच्चिरं मीनो विना नीरेण पल्वले  
 साकेते न क्षणं जीवेद् विना रामेण लक्ष्मणः ॥

(साकेत सौ० — 2 / 16, 17, 18, 20)

डॉ० त्रिपाठी की भाषा गागर में सागर भरने वाली लगती है, छोटे छन्द में भी इतने बड़े कथानक को भरना उनके लिए सहज है योगिनी का वेष बनाये और वन चलने को तैयार सीता के सामने पार्वती लक्ष्मी और सरस्वती आदि देवियाँ तुच्छ सी लग रही थी उस समय की प्रीति का चित्रण करता हुआ कवि कहता है कि—

‘वात्सल्यसीमा कौशल्या व्यथासीमा न मन्थरा  
 सुमित्रा मित्रतासीमा मानसीमाऽस्ति जानकी ॥’<sup>1</sup>



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ श्रीमद्भगवद्गीता

अध्यायः प्रथमः

अर्जुनसंवादे

॥ अर्जुन उवाच ॥

(१०-१०) \ १ प्रथमः अध्यायः

अर्जुन उवाच ॥ द्रुपदमुनिर्वाक्यं शृण्वन्निजमुखात् ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

(१०-११) \ २ प्रथमः अध्यायः

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥

॥ किं कुरुष्वमहोपाधेयः ॥



वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अर्थात्— कौशल्या से अधिक पुत्र प्रीति मन्थरा से बड़ी पीड़ा सुमित्रा से बढ़कर मैत्री और सीता से अधिक स्वाभिमान की ऊँचाई कहीं देखने को नहीं मिल सकती।

“पथिनिष्ठायुतं सत्यं व्रतं दृष्ट्वा च विद्रुतम्

स्वं स्वं हृदभ्मानिन्युर्विकला ग्रामवासिनः॥ 1

अर्थात्— मनो शरीर धारण किए निष्ठा, सत्य और व्रत को मार्ग में भटकता देखकर व्याकुल ग्रामवासियों ने अपने हृदय में बसा लिया।

इतने विविध वस्तु विषय को छोटे से छन्द में समाहित कर देना लेखक के भाषा की क्षमता द्योतित करती है।

कवि की भाषा की विशेषता ही है कि वह थोड़े में कई अन्तर कथाओं को समेट लेता है। श्री हनुमान को अगूँठी देकर दक्षिण दिशा में भेजने के बाद कवि की कल्पना दर्शनीय है—

“ददौ हनुमते नाम काम मादित्यसूनवे

शबर्यै च निजं धाम रामः कामप्रदः सताम्॥ 2

अर्थात्— श्री राम ने शबरी को अपना धाम दिया, सुग्रीव को मनचाहा काम दिया और हनुमान को श्रेष्ठ नाम दिया। सज्जनों का हर सपना और संकल्प वे ही तो पूरा करते हैं।

महाकाव्य के पंचम सर्ग में रावण और कुम्भकर्ण, शूर्पणखा का राक्षसी स्वभाव पाने की तथा विभीषण को महर्षि विश्रवा का योग्य प्रतिनिधि बताने की कथा को एक छन्द और प्रवाह मयी भाषा में कैसे बाँधा है—

“जनन्याः केशिन्या दुरितमयशीलप्रतिफलै

रिमौ साकं स्वप्ना रजनिचरवृत्तावभवताम्

तृतीयो भ्राताऽभूत् पितुरनुगुणो विश्रवऋषेः

प्रशस्तः पौलस्त्यो विलसदभिधो भीषण इति॥ 3

1. वही— -2 / 25

2. साकेत सौरभम् — 4 / 46

3. साकेत सौरभम् —5 / 3







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अर्थात् — यह माता केशिनी के दुश्चरित्र का प्रतिफल था कि एक बहन और ये दोनों पूर्णतः राक्षस का शरीर और स्वभाव पा गए। इसका तीसरा भाई विभीषण पिता महर्षि विश्रवा और उनके पुलस्तिकुल का योग्य प्रतिनिधि प्रतीत होता था।

भाषानुकूल छन्द शब्दयोजना एवं तत्सम शब्दावली के साथ गम्भीर से गम्भीर प्रसंग को कवि की भाषा में सहज बन गया है। जानकी जी के मुस्कुराहट मात्र से कितना दिव्य शक्ति प्रदर्शन है इसका उदाहरण निम्नांकित छन्द में देखा जा सकता है—

सा देवी स्मितिमाततान चटुलां विद्युच्छटावबन्धुरां  
तेजः शृङ्खया खरान्तकमथानैषीत् स्वकीयान्तिकम्  
तां दृष्ट्वा चकितस्य सप्तमहरेस्तूणीरमस्त्रावली  
तद्दोर्भ्यः प्रविलुप्य सान्द्रमविशद् रक्षोविनाशौषधिः ॥ 1

अर्थात्— जानकी की मुस्कुराहट से विद्युत की छटा रुपी रश्मियाँ विखर जाती है और खर के विनाशक राम चकित है जो सप्तम विष्णु के अवतार वाले श्री राम का तूणीर रिक्त हो गया है क्योंकि उन्होंने वन के समस्त राक्षसों का विलय कर दिया है।

भाषा की प्रवणता तथा परिष्कृत रूप डॉ० त्रिपाठी के काव्य में दिखाई पड़ता है, नित्य कुशलसाक्षी के अनुसार व्यवहार को कवि ने किस प्रकार कहीं है—

“ अजस्त्रं निर्निमेषं वीक्षमाणो लौकिका चारम्  
परिक्रमते रविः साक्षीव कुशलः कृत्स्नसंसारम् ॥  
यथा पुण्यं तथा कान्तिः स्फुरन्ती दृश्यते हस्ते  
जलं हिमशीतलं मधुफेनसारं दृश्यते हस्ते ॥ 2

अर्थात्— सूर्य देव संसार को देखते रहे उनका पलक कभी न झपके—

1. साकेत सौरभम् — 6/15

2. साकेत सौरभम् — 7/37







इस प्रकार हम देखते हैं कि साकेतसौरभम् के प्रणेता डॉ० त्रिपाठी का भाषा में पूर्ण अधिकार है इनके काव्य में भाषा का लालित्य, प्रांजल एवं परिष्कृत रूप, और इसकी भाषा में सरलता एवं सहजता का सौन्दर्य देखते ही बनता है।

शैली:—

शैली की दृष्टि से साकेतसौरभम् की शैली भी रामायण की शैली की ही भाँति वैदर्भी शैली की श्रेणी में आती है, क्योंकि साकेतसौरभम् की शैली में भी भाव एवं भाषा का मंजुल समन्वय दिखायी पड़ता है। इसके साथ ही इसमें सरलता सुबोधता तथा लालित्य का नवीन रूप सन्निहित है। साहित्य की शैलियों की विशेषता यह है कि इस शैली में आने वाले तीनों गुण प्रसाद गुण, ओज और माधुर्य गुण विद्यमान होते हैं। इस सम्बन्ध में रामस्वरूप का भी कहना है—

शास्त्रीय विलसन्ति यत्र विविधाः साकेतकाव्ये विधाः ।

शोभन्ते खलु दर्शनानि निरिवलान्यस्मिन् प्रबन्धे नवे

नानालङ्कृति चारुवृत्तरचना भावाः समुद्यदरसा

आशीर्मङ्गलतो महाकविममुं सर्वेऽभिषिचिन्ति वै ।। 1

इस प्रकार इनका निम्नांकित छन्द दर्शनीय है—

“उन्मुखा कुर्वते चंचुसंचालनं

ते चकोरा विनिश्चत्यं चन्द्रोदयम्

वापिकायां समं पुष्पितं कैरवं

संशयानं विधन्ते च पुष्पान्धयम् । 2

इसी प्रकार ओज गुण के लिए निम्नांकित छन्द देखा जा सकता है—

1. जयतात् कवीन्द्र से उद्धृत — कृतरामस्वरूप (भूमिका साकेत सौरभम् की)

2. साकेत सौरभम् — 1/52 — पृ० 18







“पापैराकुलिता यदा वसुमती वात्यासु पत्रायते  
माद्यदगन्धगजार्दितेव तरिणः सिन्धौ च दोलायते  
कुर्मिभूय तदा स्वपृष्ठफलके सन्धार्यते श्रीमता  
पुण्योदकर्मयी दिगन्तवितता भौगोलिकी संस्कृतिः ॥ 1

अर्थात्— जब पाप कर्मों की आंधी में सूखे पत्तों की तरह उथल पुथल होती धरती महासागर के बीच मतवाले हाथी द्वारा सन्तुलनहीन की गई नाव सी होने लगती है, तब आप ही कच्छप अवतार धारण कर अपनी पीठ पर दसों दिशाओं में फैले भूगोल की संस्कृति सुरक्षित करते हैं।

इसी प्रकार माधुर्य गुण का निम्नांकित उदाहरण देखा जा सकता है—

“सीता यथाऽनुभवति स्म मनः प्रमोदं  
कीशस्तथा कलयति स्म तनुं विशालाम्  
क्षुद्व्याजतः स विविधाः फलयुक्तशाखा  
आत्रोट्य दिक्षु विकिरन् विकटं जगर्ज ॥ 2

अर्थात्—

सीता के अन्तर्मन में जैसे जैसे उल्लास की सम्भावनाएँ बढ़ने लगीं, वैसे वैसे कपिराज के शरीर का आकार बढ़ने लगा। ऊँचा आकार होते ही भूख के बहाने कई फल से लदी डाले तोड़कर चारों ओर फेंकते हुए उन्होंने तीव्र गर्जन किया।”

इसके अन्तर्गत जहाँ जहाँ लालित्य पदावली है वहाँ माधुर्य गुण के साथ ही साथ प्रसाद गुण भी विद्यमान है। समासिकता के कारण स्थान स्थान पर अनेक स्थलों पर स्थानान्तरन्यास की छटों दिखाई पड़ती हैं, तथा नयनाभिराम प्रकृति चित्रण में भी उनकी शैली का लालित्य देखते बनता है —

सं सं सरति सत्वरः पवनः  
कुञ्जगृहे कृतपल्लव लवनः







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

सोऽयं न वै वेपयतु तन्वीं विपिने वहमानः सरयम्  
वर्षति दुष्प दुष्प जलधारा धक् धक् कुरुते में हृदयम् ॥ 1

अर्थात्—

वह रहा है उतावला सनसनाता पवन यह कुंजों में घुसकर सारी नई कोपलें नोच रहा है। कहीं इसके वेग से ठिठुर कर तन्वङ्गी सीता न काँपने लगे उधर टुपटुप पानी रुकता नहीं इधर मेरी धुकधुकी और उद्वेग बढ़ने लगे।

इस प्रकार हम देखते हैं वाल्मीकि रामायण की वैदर्भी शैली के सभी गुण साकेतसौरभम् की शैली में विद्यमान है तथा काव्य के नवीन रूपों के समान्जस्य के कारण उसमें नवता भी दिखाई पड़ती है।

छन्द विधान— छन्द की दृष्टि से हम यह देख चुके हैं कि वाल्मीकि रामायण में अधिकांशतः श्लोक अनुष्टुप छन्द ही है। किन्तु मध्य में कई स्थान पर या सर्ग के अन्त में इन्द्रवज्रा उपजाति आदि छन्द भी आये हैं। किन्तु साकेतसौरभम् का छन्द विधान विविध आयामी है। जिसके सम्बन्ध में पिछले अध्यायों में विवरण प्रस्तुत कर चुके हैं। रामायण की भाँति डॉ० त्रिपाठी ने भी प्रारम्भ में अनुष्टुप छन्दों का प्रयोग किया है—

समत्वं न वरं रामात् क्षमत्वं लक्ष्मणादपि  
ममत्वं भरतादत्र यमत्वं रिपुसूदनात् ॥ 2

अर्थात् —

इस संसार में राम से बढ़कर समता लक्ष्मण से अधिक क्षमता भरत की अपेक्षा उदात्त ममता और शत्रुघ्न से श्रेष्ठ यमता जुड़वें तथा शत्रुविनाशक की गरिमा कहाँ देखने को मिलेगी। डॉ. त्रिपाठी ने अपने सभी सर्गों के प्रारम्भ में इस छन्द का प्रयोग किया है—







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

चिदारामोऽभिरामोऽभूत परामर्षविरामकृत्

रामणीयकवान् रामो रमारामो निरामयः॥ 1

अर्थात् उन दिनों राम के स्वस्थ सुन्दर एवम् उदात्त व्यक्तित्व से सभी लोग बहुत प्रभावित थे । एक मुस्कान से शत्रुओं का वैर-भाव समाप्त करते हुए वे स्वयं विष्णु के अवतार प्रतीत होते थे ।

जानकीविरहोद्भ्रान्तः कान्दिशीको रघूद्वहः

वात्याचक्रतृणाभासो भ्रमिं चक्रे चतुर्दिशम्। 2

अर्थात्— सीता के विरह में लक्ष्यहीन होकर व्यथित और घबराए हुए रघुवीर बवण्डर से उड़ते तिनके की तरह चारों ओर भाग दौड़ करने लगे ।

“अपां सूचीश्मोऽयं सव्रणं चरणं भुवः

सीव्यतीव जयत्येष दम्पत्योः स्नेह उज्ज्वलः॥ 3

अर्थात् — यह कितना सुहाना दाम्पत्य प्रेम है कि आए दिन बादलों से ढका हुआ आकाश पानी की बूँद सी चमकती सुइयों द्वारा धरती के पाँव तले की फटी बेवाइयाँ मानो जोड़कर सिलता रहता है ।

जानकीसविधे प्राप्तः कीश ईषत्प्रयत्नतः

नदीशमपि सन्तीर्थ जानकीशकृपादृशा॥ 4

अर्थात्— श्री राम की कृपा —कोर से नदियों के स्वामी समुद्र को भी पारकर कपिवर हनुमान बड़ी सहजता से सीता के निकट पहुँच गये ।

जले स्थले चपाताले युयुधे स नभस्तले

छले बलेऽतुलो वैरी भिन्नरूपः पले —पले॥ 5

अर्थात् — छल बल में बेजोड़ था शत्रु राजकुमार मेघनाद । वह पल-पल में रूप बदलता और भूतल समुद्र , जल पाताल और अम्बर तल के किसी भी मोर्चे से विकराल युद्ध प्रारम्भ कर देता था ।

1. साकेत सौरभम् -2/2

2. वही- 3/57

3. वही- 4/36

4. वही- 5/16

5. वही- 6/10



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.



वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

“नभोमध्यगतोभानुश्चक्रवर्ती च भूपतिः

वेन लक्षयितुं शक्यौ दरविस्फार चक्षुषा ॥ 1

अर्थात्— गगन केन्द्र में स्थित दिनमणि और चक्रवर्ती सम्राट को तनिक भी आंख तरेर कर कौन देख सकता है।

रामेण सहिता सीता हिता हनुमदादयः

चिराय महिता लोके हितां अन्तर्हिता अपि ॥ 2

अर्थात् — श्री राम के साथ सीता तथा हनुमान् आदि भक्त तभी से लोकवन्दित हैं। वे अदृश्य रहकर आज भी सबका इष्ट साधन करते हैं।

साकेत सौरभम् में अनुष्टुप छन्द के अतिरिक्त अनेक छन्दों के उदाहरण भी हमें दिखाई पड़ते हैं जिनमें स्राग्धरा, द्रुतविलम्बित, वसन्ततिलका, स्रग्विणी, वंशस्थ, भुजंगप्रयात, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी, आदि पूर्व प्रचलित हैं आदि प्रमुख तो है ही साथ ही कुछ नवीन छन्दों का भी प्रयोग डॉ० त्रिपाठी जी ने अपने काव्यों में किया हैं। प्रभाषिका, अश्वघाटी, गीत, अतिधृतभेद, अष्टिभेद, जगती भेद, साम्बरी भेद तथा रिंगोहायकु आदि छन्द नवीन प्रयोगों की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं। जिनमें से कुछ का उदाहरण निम्नांकित है—

द्रुतविलम्बित—

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः नगण, भगण, भगण तथा रगण आयें, उसे आचार्यों के द्वारा द्रुतविलम्बित कहा गया हैं। (3)

1. वही— 7/33

2. वही— 8/46

3. वृत्तरत्नाकर —3/49

‘द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ’ —3/49 (वृत्तरत्नाकर)

“द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ”— 2/10 (छन्दोमंजरी)







उदाहरणार्थ—

रजनिगर्भनिमीलित लोचना  
समनुभूतवती जगती सुखम्  
उषसि तत्कृतुकानि च निन्यिरे  
नववयांसि वयांसि चतुर्दिशम् ॥ (1)

अर्थात्— रात्रि रूपी गर्भ में आँखे बन्द किए जीव जगत् सुख का अनुभव करता रहा । उषः काल आते ही उसके कौतूहल की प्रतिच्छवि बनें नन्हें नन्हें पक्षी चारों दिशाओं में उड़ने लगे ।

वसन्ततिलका—

वसन्ततिलका उसे कहते हैं जिसके प्रत्येक चरण में क्रमशः तगण, भगण, जगण, तथा दो गुरु वर्ण आते हैं । आचार्य काश्यप इसे सिहोन्नता तथा आचार्य सैतव उद्धर्षिणी कहते हैं । 2

उदाहरणार्थ—

‘कीदृक् चरित्रमिदमस्ति चराचरस्य  
क्रूरग्रहा असमयेऽभिभवन्ति लोकान्  
केचिद् वदन्ति विदुरा निगमागमानां  
दित्सन्ति ते विविधकर्म विपाकभोगान् ॥ 3

दूसरा उदाहरण —

“ तेनादितेन स पथा गतवान् हनूमान्  
संप्राप नीपवनिकां मधुसोरभाङ्गकाम्  
प्राज्यैः प्रचेलिमफलैः कपिशीकृताङ्गी  
लंकाहतां सुरवनीमिव नन्दनाङ्काम् ॥ 4

1. साकेत सौरभम् — 1/63 पृ० -27

2 छन्दोऽलकार सौरभम् — डॉ० राजेन्द्र मिश्र — पृ० -25  
“उक्ता वसन्ततिलका तमजा जगौ गः । ॥ 3/79 (वृत्तारत्नाकर)

“ज्ञेयं वसन्ततिलकं तमजा जगौ गः ॥ (छन्दोमंजरी)

3. साकेत सौरभम् — 3/51

4. वही — 5/25 पृ० -127  
CC-0. Mahatma Jyoti Bhatt Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur, MP Collection.







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अर्थात् —विभीषण के द्वारा बतलाए गए मार्ग से हनुमान गए तो शीघ्र ही वासन्ती सुरभि बिखेरती अशोक वाटिका में पहुँच गए। अनेक भाँति के गदराए फलों से लदकर पियराई हुई वह वाटिका लंका में उतरे नन्दन वन जैसी लगती थी।

शिखरिणी— जिस छन्द में रस तथा रुद्र संख्यक अक्षरों के बाद यति वाली तथा क्रमशः यगण, मगण, नगण, सगण, भगण, एक लघु तथा एक गुरु वर्ण से युक्त शिखरिणी होती हैं। 1

उदाहरण —

हिरण्याक्षो दैत्यः सकशिपहिरण्यस्तदनुजः

पुरोजन्मन्यास्तां विहित चिरवैरो मधुजिता

इदानी दुर्दान्तौ पुरमकुरुतां राक्षसतनू

हिरण्यप्राकारामधिजलधि लंका स्ववसतिम् ॥ 2

उदाहरण—

“न पाताले नागा बिलनिलयिनोऽलप्सत सुखं

पृथिव्यां दिङ्नागाः पलमपि मिभीलुर्न नयने

नरेशाः सकलेशा जगृहुरपि कान्तारशरणं

त्रिलोक्यां निस्त्रिशं तरलयति तस्मिन् दशमुखे ॥ 3

भुजङ्गप्रयात— जिस छन्द में चार यगणों (तथा पादान्त यति ) से

युक्त छन्द भुजङ्गप्रयात होता है। 4

उदाहरण— “प्रिया लक्ष्यते मद्भ्रतं शीलयन्ती

श्रिया वै श्रियं नित्यशो मीलयन्ती

1. 'रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी ॥ ( 3/93 —वृत्तरत्नाकर)

छन्दोऽलंकार सौरभम् —राजेन्द्र मिश्र— पृ० —26

2. साकेत सौरभम्— 5/1 पृ० —118

3. साकेत सौरभम् — 5/8 पृ० —121

4. “भुजङ्गप्रयातं भवद्यैश्चतुर्भिः ॥ (3/55 वृत्तरत्नाकर)

छन्दोऽलंकार सौरभम् —डॉ० राजेन्द्र मिश्र— पृ० —23







तया लालितौ श्यामगौरौ न जाने

मनश्चन्द्रिकायाश्चकोरै न जाने ॥ 1

इस उदाहरण में भी भुजंगप्रयातम् छन्द का वर्णन कवि द्वारा किया गया है—

‘झषं कूर्म —कोलौ जपार्थ न मन्ये

नृसिंहे न धीर्वासने जामदग्न्ये

तथा कृष्ण —बुद्धौ न कल्क्यादयोऽन्ये

यथा राम —नामाक्षरे धन्यधन्ये ॥ 2

रिंगोहायकु—

कवि ने साकेतसौरभम् महाकाव्य में रिंगोहायकु एक विदेशी छन्द का भी इन्होंने प्रयोग किया है— यह छन्द हिन्दी साहित्य में आया हुआ नया छन्द है जो 20 वीं शताब्दी के आठवें दशक से कुछ कवियों द्वारा प्रयोग में लाया जाता रहा छन्द के अन्तर्गत प्रायः प्राकृतिक चित्रण अधिक मिलता है—

“गतो रावणः

शमनपरिणतिम्

राक्षसतन्त्रः

फेनिलोदधिः

समुच्छलति ननु

भवनं स्वतन्त्रः ॥ 3

1. साकेत सौरभम् — 8/36 —पृ० 206

2. साकेत सौरभम् — 2/66 —पृ० 57

3. वही — 6/39 पृ० — 153







|         |                      |
|---------|----------------------|
| अर्थात् | गया रावण             |
|         | दूर उसका गया         |
|         | राक्षस तन्त्र        |
|         | सिन्धु फेनिल         |
|         | उछलता सा आज          |
|         | लगे स्वतन्त्र ॥      |
| उदाहरण— | चेलुः स्वैरं मकराः   |
|         | समे च वारिचराः,      |
|         | अप्सु विहारः         |
|         | प्रवर्तते मत्स्यानां |
|         | भूयो निर्यन्त्रः ।   |
|         | फेनिलोदधिः           |
|         | समुच्छलति ननु        |
|         | भवन् स्वतन्त्र ॥ 1   |

अर्थात् —

मगर तिर चले, जलचर मचल रहे है युग्म खेलती चपल मछलियाँ स्वतन्त्र हो गई। अज स्वतन्त्र सिन्धु फेनिल भी उछलता हुआ सा प्रतीत हो रहा है।

अलंकार—विधान— चौथे अध्याय में अलंकारों का विश्लेषण करते हुए हमने यह देखा है कि डॉ० त्रिपाठी के साकेतसौरभम् महाकाव्य में शब्दालंकार और अर्थालंकार के प्रयोग भिन्न—भिन्न हैं।

विशेष रूप से श्लेष, यमक, उपमा, एवं रूपक जैसे अलंकार अधिक मात्रा में दिखाई पड़ते हैं। इनकी विवेचना पहले भी की जा चुकी है यहां केवल







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

इतना ही कहा जा सकता है कि शब्दालंकार के साथ जिन अलंकारों का प्रयोग साकेतसौरभम् में दिखाई पड़ता है उसमें उत्प्रेक्षा, मीलित, सहोक्ति, यथासंख्य, विरोधाभास, प्रतीप, अपनुहुति, सन्देह, अतिशयोक्ति, व्यंग्योक्ति और विरोधाभास का मिश्रित रूप तथा क्रियादीपक जैसे अलंकारों का प्रयोग इनके काव्यों में मिलता है। इनमें से अनेक अलंकारों का उदाहरण हम पहले ही बता चुके हैं कुछ अन्य अलंकारों का उदाहरण निम्नवत् हैं—  
रूपक अलंकार— उपमान और उपमेय में जिनका भेद प्रसिद्ध है उनका सादृश्यातिशयवश जो अभेद वर्णन है वह रूपक अलंकार है। 1

साकेतसौरभम् महाकाव्य के इस प्रसंग में भी उपमान का अभेद उपमेय में भासित होता है—

यथा— “विरेजतुः सितश्यामौ सीतारामौ वरासने

प्रत्यक्षौ रतिकामौ श्री शालग्रामौ नु जङ्गमौ ॥ 2

अर्थात् विवाह —वेदी पर गोरे तथा साँवले रंग के वैदेही और राघव प्रत्यक्ष रति और कामदेव अथवा संचरणशील लक्ष्मी और शालग्राम जैसे लग रहे थे।

यथासंख्य अलंकार — क्रम से कहे हुए पदार्थों का उसी क्रम से समन्वय होने पर यथासंख्य अलंकार होता है। 3

यथा— “जातसंज्ञः सुतौ सीतां वाल्मीकि सहिताः प्रजाः

अश्रुक्लिन्नाः पुरो दृष्ट्वा रामः संवेदितोऽवदत् ॥ 4

1. रूपकं रुपितारोपो विषये निरपहनवे ॥ (साहित्यदर्पणः)

तद्रूपकमभेदो व उपमानोपमेययोः ॥ (काव्यप्रकाशः)

विषयभेदताद्रूप्यरंजनं विषयस्य यत् । रूपकम् तत् त्रियाधिक्यन्यून त्वानुभयोयोक्तिभिः ॥ (चन्द्रालोकः)

2. साकेत सौरभम् — 1/69 पृष्ठ —29

3. यथासंख्यं क्रमेणैव क्रमिकाणां समन्वयः ॥ (काव्यप्रकाशः)

4. साकेत सौरभम् — 8/33 — पृ० 205

266







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

अर्थात्— जब मूर्च्छा हटी तो सामने ही दोनों (संभावित ) पुत्र, देवी सीता तथा महर्षि वाल्मीकि के साथ सारी प्रजा की आँखों में आँसू देखकर राम संवेदित हो उठे, और उनसे पूछने लगे।

प्रतीप— उपमान की सत्ता पर आक्षेप अर्थात् उसकी व्यर्थता का प्रतिपादन करना प्रतीप अलंकार होता है । 1

यथा— “पुष्पभारेण नम्रा लता माधवी ।। 2

सन्देह— उपमेय में अन्य अर्थात् उपमान के चमत्कारोत्पादक संशय को सन्देह अलंकार कहते हैं। 3

यथा— “पुष्पभारेण नम्रा लता माधवी  
तादृशी भूतले वर्ततां वा न वा ।

(साकेत सौरभम् — 1/52 — तृतीय + चतुर्थ चरण में)

अर्थात् — सीता जी पुष्प की सम्पदा से लदी हुई इस तरह दृष्टि में नहीं आती है।

अपहनुति प्रकृत अर्थात् उपमेय का प्रतिषेध करके अन्य अर्थात् उपमान की स्थापना करना ही अपहनुति है। 4

यथा— “शीतला सान्द्रगौरी मधुस्यन्दिनी  
वासरे चन्द्रिका जायतां वा न वा ।।” 5

अर्थात् दिन चढ़े शुभ्र सिहरन भरी चाँदनी कौन जाने यहाँ पास आती नहीं।

शब्द व्याख्या —(क) प्रकृतमुपमेयं निषिध्यासत्यं कृत्वा अन्यत् अप्रकृतमुपमानं

1. आक्षेप उपमानस्य प्रतपमुपमेयता ।

तस्यैव यदि वा कल्प्या तिरस्कारनिबन्धनम् ।। (काव्यप्रकाशः) पृ०— 544

2. साकेत सौरभम् —1/50 (की तीसरी पंक्ति में ) पृ०—17

3. सन्देहः प्रकृतऽन्यस्य संशयः प्रतिभौत्थितः ।। (साहित्य दर्पणः) ।।

स्यात्स्मृति भ्रान्ति सन्देहैस्तदङ्गालङ्कृतित्रयम् ।

पङ्कजं वा सुधाशुर्वेत्यस्माकं तु न निर्णयः ।। (चन्द्रालोकः)

4. प्रकृतं प्रतिषिध्यान्यत्स्थापनं स्यादपहनुतिः ।। (साहित्य दर्पणः)

प्रकृतं यन्निषिध्यान्यत्साध्यते सा त्वपहनुतिः ।। (काव्यप्रकाशः)

शुद्धापहनुतिरन्यस्यारोपार्थो धर्मनिह नवः ।

नयं सुधांसु किं तर्हिः व्योमगंगासरोरुहम् । (चन्द्रालोकः)

5. साकेत सौरभम् —1/52 — प्रथम + द्वितीय चरण में







वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् की तुलनात्मक समीक्षा

यत्साध्यते सत्यतया व्यवस्थात्यते आहार्य निश्चयविषयीक्रियते सा  
अपहनुतिः ॥ (नागेश्वरी टीका)

(ख) किञ्चितपहनुत्य यत् अन्यार्थ प्रदर्शनं सापहनुतिः ॥ (केशवमिश्र)

(ग) यस्मिन्नधिकरणे मुखत्वा देर्निषेधः शब्दतोऽर्थतो वा प्रतिपाद्यते  
तस्मिन्नेवाधिकरणे मुखादौ

उपमेयभूतपदार्थं चन्द्रादेरुपमानस्य तादात्म्यम् आरोप्यमाणम् अपहनुतिः ॥

(रसगंगाधर टीका)

(घ) उपमेय निषिध्य तत्रोपमानीभेदव्यस्थापनम् अपहनुतिः । (विश्वेश्वर पण्डित)

उत्प्रेक्षा— किसी प्रकृत अर्थात् प्रस्तुत वस्तु (उपमेय) की अप्रस्तुत वस्तु  
उपमान के रूप में सम्भावना करना उत्प्रेक्षा अलंकार है । 1

यथा— चतुर्दशः समा रामः सरामः सानुजो वने

चक्रे समाङ्गविधानां कामं प्रासोगिकीमिव । 2

अर्थात्— चौदह वर्षों तक गृहिणी और लघु भ्राता के साथ वन में रहकर  
उन्होंने गुरुकुल में पढ़ी 14 विधाओं में मानो वर्षवार प्रायोगिक कुशलता  
अर्जित कर ली थी ।

साकेतसौरभम् के शिल्प विधान पर दृष्टिपात करने पर हमें यह ज्ञात  
हुआ कि इसकी भाषा अत्यन्त सरल सहज एवं प्रांजल है ।

1. भवेत् सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना ॥ (साहित्यदर्पणः)

सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् । (काव्यप्रकाशः)

सम्भावना स्यादुत्प्रेक्षा वस्तुहेतुफलात्मना ।

उक्तानुक्तास्पदाद्यान् सिद्धाऽसिद्धास्पदे परे ॥ (चन्द्रालोक)

2. साकेत सौरभम्— 7/2 पृ०— 16



18. *[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*

*[Faint text, likely bleed-through from the reverse side]*











## षष्ठम् अध्याय

वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के परिप्रेक्ष्य में  
रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

- (क) वाल्मीकि रामायण में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता  
(ख) साकेतसौरभम् में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता







अध्याय 6—वाल्मीकि रामायण एवं साकेतसौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

(क) वाल्मीकि रामायण में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता —

सम्पूर्ण मानव जाति में रामकथा एक आदर्श एवं अविरल धारा के रूप जानी जाती हैं। यही कारण है कि रामायण को आदिकाव्य एवं वाल्मीकि को आदिकवि के रूप में जाना जाता हैं। इस कथा के उद्गम के सम्बंध में जिस क्रौंच पक्षी की प्रासंगिकता आदिकाव्य के मूलस्रोत की उद्भाविक हैं उसी प्रकार मानव एवं मानवता के संवेदनशील हृदय को दया धारा में प्रवाहित करने में समर्थ हैं।

निषाद को प्रतिष्ठा न प्राप्त करने की घोषणा करने वाले ऋषि वाल्मीकि के भीतर राम एवं सीता के वियोग की कथा पहले से ही थी, जिसके कारण कवि का प्रथम छन्द आर्या के रूप में व्यक्त हुआ। मानवता के विकास में शिव एवं पार्वती की भाँति राम और सीता की कथा ने भी अपना महत्वपूर्ण योगदान किया हैं। यही कारण है कि रामायण की रामकथा की प्रासंगिकता केवल भारतीय मानस में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार की मानवता के लिए आदर्श हैं।

महर्षि वाल्मीकि के रामायण की रामकथा ही वस्तुतः मानस गंगा का गोमुख है, किन्तु अपनी अखण्ड साधना गहन अध्ययन प्रगाढ़ चिन्तन एवं अनवरत तपश्चर्या के बल पर तुलसी ने अपने रामचरित मानस में राम का वहीं रूप चित्रित किया है, जो सभी को सर्वथा अनुकरणीय हैं। घर, वन, प्रेम सम्बंध, रणभूमि, मातृभाव, एवं पति मर्यादा आदि विभिन्न बहुरंगी क्षेत्रों में राम की आदर्श ज्योति प्रभा से परिपूर्ण हैं। आज भी समाज का एक एक घटक राम के आदर्श जीवन से प्रभावित होता है और उन्हीं के कर्तव्य कर्म में उन्हीं की दुहाई देता हैं। यह आकर्षण यह महत्व एवं यह निष्ठा हमें राम के जीवन के सत्पक्ष की ओर खींच ले जाती है यही सत्पक्ष मानव जीवन का आधार और उसके उन्नयन का मात्र एक सोपान हैं।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

आदिकाव्य रामायण परवर्ती रामकथा काव्य रामचरित मानस आज भी पूरे विश्व के लिए आदर्श बने हुए है।

आज मूल्यहीनता का युग मानवता को नष्ट करने के लिए बढ़ रहा है तो हर विवेकवान व्यक्ति की दृष्टि रामकथा के सत्पक्ष की ओर टिकी हुई है। सत्य और असत् की इस लड़ाई का रामत्व का प्रकाश रावणत्व के तिमिर को नष्ट करने के लिए असम्भावी है। रामायण के अनेक प्रसंग ऐसे हैं जो आज की सामाजिक बुराईयों के बीच भय पैदा करते हैं तथा सतवृत्ति के लोगों को आदर्श रूप में स्थापित करते हैं। बालकाण्ड में देवों एवं दैत्यों द्वारा क्षीर समुद्र मंथन, भगवान रुद्र द्वारा विष का हलाहल पान, भगवान विष्णु की सहायता से मन्दराचल का पाताल से उद्धार और उसके द्वारा मंथन, धन्वन्तरि अप्सरा वारुणिक, उच्चैश्रवा, कौस्तुभ, अमृत की उत्पत्ति तथा देवासुर संघार(1) में दैत्यों का संहार जैसे प्रसंग आज असत् वृत्ति द्वारा सत्वृत्ति के पराभव की गाथा कहते हैं, जिससे इनकी प्रासंगिकता आज भी बनी है।

इसी प्रकार रामायण में सामाजिक दृष्टि से समता की दृष्टि से, तथा परोपकार की दृष्टि से अनेक प्रसंग हैं, जो आज भी प्रासंगिक हैं। सीता हरण के लिए रावण द्वारा कहे जाने पर मारीच द्वारा रावण को समझाना (सीता हरण के पश्चात जटायु के द्वारा रावण को दुष्टकृत्य से विरद् होने के लिए समझाना और न मानने पर उससे युद्ध के लिए उद्यत होना तथा रावण से युद्ध करते हुए सीता के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर देना जैसे प्रसंग मानवेतर प्राणियों के द्वारा मानव की सेवा का आज भी आदर्श हैं(2)।

1. रामायण बालकाण्ड— 44/44-1-23, 45-1 से 45

2. प्रमदानां सहस्राणि तव राजन् परिग्रहे ।।

भवस्वदारनिरतः स्वकुलं रक्ष राक्षसान् ।

मानं वृद्धिं चराज्यं च जीवितं चेष्टामात्यनः ।। अरण्यकाण्ड 38/30, 3







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

“ न तत् समाचरेद धीरो यत् परोऽस्य विगर्हयेत् ।  
 यथाऽऽत्मनस्तथान्येषां दारा रक्ष्या विमर्शनात् ॥  
 अर्थ वा यदि वा कामं शिष्टाः शास्त्रेण्ववनागतम् ।  
 व्यवस्यन्त्यनु राजानं धर्मं पौलस्त्यनन्दन ॥  
 राजाधर्मश्च कामश्च द्रव्याणां चोत्तमो निधिः ।

धर्मः शुभं वा पापं वा राजमूलं प्रवर्तते १

इसी प्रकार राजनीति की दृष्टि से भी राजा के कर्तव्यों , प्रजापालन के आदर्शों, माता-पिता भाई बहन तथा मित्र धर्म के पालन के अनेक ऐसे प्रसंग हैं जो आज भी यथावत प्रासंगिक बने हुए हैं।

राजनीति की शाम, दाम दण्ड , भेद जैसे नीति का भी विशद चित्रण करके आज के शासकों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया है।  
 एक पत्नी के वियोग में जिस प्रकार के संवेदनशीलता वाल्मीकि ने प्रस्तुत की है वह आज भी उसी तरह प्रासंगिक है।

सा राम संकीर्तन वीतशोका  
 रामस्य शोकेन समान शोका ।  
 शरन्मुखेनाम्बुदशेष चन्द्रा

निशेव वैदेह सुता बभूव ॥ २

प्रियतम के शोक में डुबी हुई मैथिली जी हनुमान जी के मुख से श्रीराम का चिर प्रतीक्षित समाचार सुनकर हर्षानुभव करती है , किन्तु अपने वियोग के कारण पति को बेहद शोक संतप्त जानकर सीता का प्रफुल्ल मुख फिर म्लान हो जाता है उनकी मुख कान्ति शरदकालीन बादलों

1. अरण्यकाण्ड — 50, /8, 9, 10, 51/ 1-46 तक
2. सुन्दरकाण्ड 36/47



॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥

॥ अथ श्रीमद्भगवत्पञ्चविंशोऽध्यायः ॥



वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

के बीच चन्द्रमा जैसी है, जो बादलों के हट जाने से देदीव्यमान एवं बादलों के घिर जाने से कान्तिहीन प्रतीत होती है। आदिकवि के ऐसे अनुपम चित्र प्रारम्भ से आज तक अपनी ओर निरन्तर आकृष्ट करते रहे हैं तथा दाम्पत्य प्रेम के महत्ता को हृदयंगम करने में सहायक होते हैं। रामायण में सभी पुरुषार्थों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के विविध प्रसंग आये हुए हैं। जिनके निर्वाह का मार्ग बताये गये हैं। रामायण के रामकथा नायक ऐसे राजा हैं जिनके यहाँ किसी प्रकार का वर्ग भेद नहीं होता है। ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी के लिए उनके मन में समान भाव हैं। पम्पासरोवर के तट पर मतंग वन में शबरी के आश्रम पर जाकर श्री राम के द्वारा आतिथ्य स्वीकार करना तथा उससे मिलने के लिए स्वयं उसके आश्रम पर जाना उच्च और निम्न वर्ग की सीमा की समाप्ति का सबसे बड़ा उदाहरण हैं उसके आतिथ्य से उसकी पवित्र भावना से और उसके धर्म युक्त वचनों से श्री राम और लक्ष्मण कितने प्रभावित हैं देखा जा सकता है—

धर्मिष्ठं वचन श्रुत्वा राघवः सहलक्ष्मणः

प्रहर्षतुलं लेभे आश्चर्यमिति चाब्रवीत् ।।

उसके मुख से आचार्य ही नहीं निकला उन्होंने अपने सत्कार का सुन्दर फल भी तपस्वनी शबरी को दिया—

तामुवाच् तमो रामः शबरी सेशितव्रताम्

अर्चितोऽहं त्वया भद्रे गच्छ कामं यथासुखम् ।। 1

पद्यानुवाद — तदन्तर श्री राम के कठोर व्रत का पालन करने वाली शबरी से कहा—“भद्रे! तुमने मेरा बड़ा सत्कार किया। अब तुम अपनी इच्छा के अनुसार आनन्दपूर्वक अभीष्ट लोक की यात्रा करो ।।

इत्येवमुक्ता जटिला चीरकृष्णाजिनाम्बरा







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

अनुज्ञाता तु रामेण हुत्वाऽऽत्मानं हुताशने ।।

ज्वलत्पावकसंकाशा स्वर्गमेव जगाम ह ।

दिव्याभरणसंयुक्ता दिव्यमाल्यानुलेपना ।।

दिव्याम्बरधरा तत्र बभूव प्रियदर्शना ।

विराजयन्ती तं देशं विद्युत्सौदामनी यथा ।।

यत्र ते सुकृतात्मानो विहरन्ति महर्षयः ।

तत् पुण्यं शबरी स्थानं जगामात्मसमाधिना ।। 1

इस प्रसंग में श्री रामचन्द्र जी की आज्ञानुसार अपने मस्तक पर जटा और शरीर पर चीर एवं काला मृगचर्म धारण करने वाली शबरी ने अपने को आग में होमकर प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी शरीर प्राप्त किया। वह दिव्य वस्त्र, दिव्य आभूषण, दिव्य फूलों की माला और दिव्य अनुलेपन धारण किये बड़ी मनोहर दिखायी देने लगी तथा सुदाम पर्वत पर प्रकाशित होने वाली बिजली के समान उस प्रदेश को प्रकाशित करती हुई स्वर्ग लोक को ही चली गयी। उस शबरी ने अपने चित्त को एकाग्र करके उस पुण्य धाम की यात्रा की जहाँ उसके वे गुरुजन पुण्यात्मा महर्षि बिहार करते थे। मानवीय संवेदना के एक अनूठा उदाहरण उस समय मिलता है जब जटायु की मृत्यु के पश्चात् राम एवं लक्ष्मण द्रवित हो उठते हैं लक्ष्मण के द्वारा अनेक प्रकार से सान्त्वना दिये जाने पर भी श्री राम का मन परोपकारी जटायु के लिए खिन्न हो जाता है और वे अत्यन्त दुःखी होकर कहते हैं—

राज्यं भ्रष्टं वनेवासः सीता नष्टा मृतो द्विजः

ईद्रुशीयं ममालक्ष्मीर्दहेदपि हि पावकम् । 2

1. अरण्यकाण्ड—74, / 31, 32, 33, 34, 35

2. अरण्यकाण्ड — 67 / 24







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

प्रभु लक्ष्मण से कहते हैं कि देवदुर्लभ अयोध्या के राज्य को छोड़कर वन वन भटकना, पुत्र वियोग न सह सकने के कारण पिता त्रैलोक्य सुन्दरी सीता का अपहरण जैसे दुर्भाग्य एक के बाद एक आते रहे किन्तु बेहद गहरे संकट के क्षणों में निश्चल सहायक जटायु मिले जिनकी अभी बहुत आवश्यकता थी। किन्तु वे भी आखिरी सांसे ले रहे हैं। संसार में अग्नि को अत्यन्त प्रचण्ड कहा गया है, जो सब कुछ जला देने में समर्थ है, किन्तु इस समय प्रभु राम को अपना दुर्भाग्य अग्नि से बढ़कर प्रचण्ड जान पड़ता है। उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा है कि उनके जीवन में बार बार दुर्भाग्य का प्रभाव अग्नि से भी बढ़कर अपनी प्रचण्डता की सिद्धि कर रहा है लगता है कि उनका प्रचण्ड दुर्भाग्य व्यक्ति को ही नहीं अग्नि को भी जला डालेगा।

राज्याभिषेक के पश्चात् लक्ष्मण के साथ आये हुए सुग्रीव को भगवान श्री राम के हृदय से लगाकर राजधर्म का जितना सुन्दर उपदेश दिया है वह आज के प्रशासकों के लिए आदर्श हैं और उतना ही प्रासंगिक हैं।

निषण्णं तं ततो दृष्ट्वा क्षितौ रामोऽब्रवीत् ततः ।

धर्ममर्थं च कामं च काले यस्तु निषेवते ॥

विभज्य सततं वीर स राजा हरिसत्तम् ।

हित्वा धर्मं तथार्थं च कामं यस्तु निषेवते ॥

स वृक्षाग्रे यथा सुप्तः पतितः प्रतिबुध्यते ।

अमित्राणां बधे युक्तो मित्राणां संग्रहेरतः ॥ 1

पद्यानुवाद—

सुग्रीव को हृदय से लगाकर धर्मात्मा श्री राम ने कहा—  
‘बैठो’। उन्हें पृथ्वी पर बैठा देख श्रीराम बोले ‘वीर! वानरशिरोमणे! जो धर्म, अर्थ और काम के लिए समय का विभाग करके सदा उचित







समय पर उनका न्याययुक्त सेवन करता है, वही श्रेष्ठ राजा है किन्तु जो धर्म अर्थ का त्याग करके केवल काम का ही सेवन करता है, वह वृक्ष की अगली शाखा पर सोये हुए मनुष्य के सामान है। गिरने पर ही उसकी आँख खुलती है, जो राजा शत्रुओं के बध और मित्रों के संग्रह में संलग्न रहकर योग्य समय पर धर्म, अर्थ और काम का न्याययुक्त सेवन करता है, वह धर्म के फल का भागी होता है।

इसके अतिरिक्त भी वाल्मीकि कृत रामायण में ऐसे प्रसंग आये हुए हैं जो संस्कृति एवं धार्मिक भावनाओं के ज्वलन्त उदाहरण हैं— अपने कथा के अन्तिम सोपानों में कथाकार ने उत्तरार्द्ध में अनेक प्रकार के भक्ष एवं अभक्ष का अन्तर बताना साथ ही वर्णाश्रम व्यवस्था में आने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के विविध कर्मों का विवेचन किया है उन्होंने जहाँ एक ओर शूद्र शम्बूक का बध करके उसके दुष्कृत्यों का दण्ड दिया है वही दूसरी ओर ब्राह्मण पुत्र की मृत्यु के लिए अधर्मी राजा का होना बताया है। जो हमारी सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के लिए एक सुन्दर संदेश है। इसीलिए आज भी वाल्मीकि रामायण में रामकथा के विभिन्न आधिकारिक प्रासंगिक कथानक रहे होंगे। यही कारण है कि राम कथा के किसी काव्य के लिए वाल्मीकि रामायण आधारभूत स्तम्भ है।

सांस्कृतिक दृष्टि से यह राम राज्य का आदर्श पाप पर पुण्य की विजय, लोभ पर त्याग का प्राबल्य, अत्याचार और अनाचार पर सदाचार की विजय, वानरों में आर्य संस्कृति का प्रसार, यज्ञादि का महत्व, जीवन में नैतिकता, सत्य प्रतिज्ञता और कर्तव्य के लिए बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता है। राजनीतिक दृष्टि से यह राजा के कर्तव्य और अधिकार, राजा—प्रजा सम्बंध, उच्च नागरिकता, उत्तराधिकार, विधान,







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

शत्रुसंहार, पापविनाशन सैन्यसंचालन आदि विषयों पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता हैं रामायण भारतीय संस्कृति नगर ग्रामादि निर्माण सेतुबन्ध वर्णाश्रम व्यवस्था आदि संस्कृति एवं सामाजिक विषयों पर प्रकाश डालने वाला प्रकाश स्तम्भ हैं, जिसके प्रकाश में प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का साक्षात् दर्शन होता हैं। (1)

रामायण मानव जीवन का महाकाव्य है, इसके द्वारा वाल्मीकि जी ने हमारी आध्यात्मिक और भौतिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया है। राम, सीता, भरत, दशरथ, कौशल्या, लक्ष्मण, हनुमान आदि के त्याग, प्रेम, सेवा और कर्तव्यपूर्ण चरित्र हमारे ईर्ष्या-द्वेष, वैर, संघर्ष से जर्जरित समाज के लिए अमृतमयी नवीन जीवनदायिनी औषधि हैं।

रामायण आदिकाव्य मानव जीवन का सर्वांगीण आदर्श प्रस्तुत करता है यह धार्मिक दृष्टि से प्राचीन संस्कृति, आचार, सत्य, धर्म, व्रत पालन, विविध यज्ञों का महत्व आदि का पूरा इतिहास प्रस्तुत करता हैं। सामाजिक दृष्टि से यह पति-पत्नी के सम्बंध, पिता पुत्र के कर्तव्य, गुरु शिष्य का पारस्परिक व्यवहार, भाई का भाई के प्रति कर्तव्य, व्यक्ति का समाज के प्रति उत्तरदायित्व, आदर्श पिता-माता-पुत्र भाई-पति एवं पत्नी का चित्रण, आदर्श गृहस्थ जीवन में अभिव्यक्ति करता हैं। इसमें पितृभक्ति, पुत्र, प्रेम, भातृस्नेह एवं जनसाधारण से सौहार्द का सुन्दर चित्रण हैं। रामायण की कथाधारा में मानव एवं मानवेतर प्राणियों की कर्तव्याकर्तव्य, धर्म-अधर्म सामाजिक मूल्य रीति परम्परा से, धर्मदर्शन, नीति एवं भक्ति भाव के विभिन्न सोपानों का जो एक पूँजी भूत रूप हैं। वह आज के मानव समाज के लिए भी सर्वथा प्रासंगिक अनुकरणीय एवं जीवन दर्शन का मंजुल गुलदस्ता है।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

(ख) साकेतसौरभम् में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता –

वाल्मीकि के पश्चात् रामकथा काव्य की श्रेणी में तुलसीदास का रामचरितमानस की भी प्रासंगिकता एवं आदर्श की दृष्टि से महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। जिसके अन्तर्गत वाल्मीकि रामायण के भिन्न-भिन्न कथाप्रसंग नवीन रूपों में प्रस्तुत हुए हैं। भाषा की मंजुलता के कारण इस काव्य का प्रत्येक प्रसंग जनमानस के हृदय में मानव मूर्ति की भाँति प्रकाशित होता है, यही कारण है कि रामलीलाओं, रामकथाओं तथा विभिन्न-विभिन्न चरित्रों एवं संवादों के माध्यम से इस काव्य की प्रासंगिकता को और भी सार्थक बनाये रखने में मानव समाज सफल हुआ है। इस काव्य के प्रसंग यद्यपि वाल्मीकि रामायण की कथा पर ही आधारित है तथापि भाषा की सहजता वश, यह काव्य प्रासंगिकता की दृष्टि से रामकथा धारा में अधिक प्रकाशित दिखाई पड़ते हैं। वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस से चलती रामकथा काव्यों में भास्कराचार्य त्रिपाठी विरचित साकेतसौरभम् का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है।

इस काव्य में भी वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त अन्य परवर्ती रामकथा काव्यों को आधार बना कर कथा को एक नया रूप दिया गया है। इस काव्य की कथाधारा में भी समसामायिक विषयों को सामाजिक मान्यताओं राजनीतिक एवं सांस्कृतिक बिन्दुओं तथा जीवन मूल्यों को उसी प्रकार समाहित किया गया है, जिस प्रकार वाल्मीकि रामायण में ये प्रसंग आये हैं। इस काव्य में यह बात अवश्य है कि परम्परा से चली आती भाषा शैली एवं छन्दों के रूप बदले हुए हैं। इनमें एक नवीनता है तथा शैली में एक ऐसी विशेषता है कि कवि के द्वारा प्रसंगों को एक नया रूप प्रदान कर दिया गया है, इन रूपों को हम संक्षेप में निम्नांकित बिन्दुओं को आधार बनाकर चित्रित कर सकते हैं।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

महाकवि भास्कराचार्य त्रिपाठी जी भी अपने रामकथा काव्य साकेतसौरभम् में वाल्मीकि रामायण के साथ साथ परवर्ती रामकथा काव्यों को भी प्रासंगिकता की दृष्टि से इस प्रकार समायोजित एवं समाहित किया हैं जो कि आज के सन्दर्भों में भी उसकी प्रासंगिकता ज्यों कि त्यों बनी हुई हैं इन्होंने भी अपनी काव्यधारा में समसामायिक विषयों को, सामाजिक मान्यताओं , राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विशेषताओं को उसी प्रकार से समाहित किया है जैसे महाकवि वाल्मीकि ने रामायण में इन्हें आधार रूप दिया है।

साकेत सौरभम् के संस्कार सर्ग में कहा गया है—

‘पूर्व प्रतिश्रुता वने कैकेयी सुतशासनम्

वने चतुर्दशाब्देभ्यः किंच रामविवासनम्

भाग्यं सुताय दुर्भाग्यं रामचन्द्राय वृण्वती

स्वकीयमेव सौभाग्यं महिषी स्वयमावृणोत् । 1

अपने पुत्र भरत के अच्छे भाग्य एवं श्री राम का दुर्भाग्य चाहने वाली कैकेयी ने अपना ही सौभाग्य अपने से नष्ट कर डाला। जब भरत के नेतृत्व में अवध समाज चित्रकूट के लिए प्रयाण कर रहा था, उस समय कैकेयी के अनुताप को श्री राम ही समझ सकते थे।

जिस मंथरा ने कैकेयी को कुमंत्रणा देकर सर्वस्व लाभान्वित होने के लोभ वश अयोध्या में विषाद भवन का शिलान्यास करना चाहा था, वह आजीवन घोर विषाद वारि में डुबी रही।

कविवर डॉ० भास्कराचार्य जी ने जहाँ कौशल्या को वात्सल्य , सीता को मान एवं सुमित्रा को मित्रता की सीमा माना है, वही मंथरा भी उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हुई, उन्होंने मंथरा को व्यथा की सीमा स्वीकार किया था जिसने सारा षडयंत्र वैयक्तिक सुख के लोभवश किया था, उसे जीवन भर दुःख के अतिरिक्त कुछ और न मिला।







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

“वात्सल्यसीमा कौशल्याव्यथासीमा च मन्थरा

सुमित्रा मित्रतासीमा मानसीमाऽस्ति जानकी ।। 1

डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी की अनुपम काव्य कृति साकेतसौरभम् प्रभावित होकर आधुनिक संस्कृति के मूर्धन्य कविएवं मनीषी डॉ० रेवा प्रसाद द्विवेदी ने अत्यन्त प्रशंसनीय शब्दों में कहा है—

“वृतं रामस्य नो कस्य मनो हर्तुमलं स्वतः ।

किं पुनर्भास्करकवेलालित्य स्निग्ध माश्रितम् ।। 2

वस्तुतः प्रख्यात विद्वान की दृष्टि में साकेतसौरभम् का माँ भारती के श्रृंगार के रूप में मानना एवं सबके मन को हरने वाली रामकथा के सौन्दर्य की स्निग्धता से मण्डित डॉ० त्रिपाठी की चिन्ताकर्षक वाणी में प्रस्तुति अवश्य ही अविस्मरणीय है ।

“अनेकतनुरुपाणां तुल्या प्रस्तावनानटी

तनुयात् सूनृतं किञ्चित् कच्छपीकलझङ्कृतैः ।। 3

साकेतसौरभम् साहित्यिक सौन्दर्य से अभिमण्डित होते हुए अत्यन्त कल्याणप्रद भी है, एतद्विषयक संकेत अत्यन्त संक्षिप्त रूप में डॉ० निलिम्प त्रिपाठी के शब्दों में निरूपित किया गया हैं—

अपने सदन में नवागत शिशु हेरम्ब को दृष्टि पथ में रखते हुए उन्होंने लिखा है—

साकेत सौरभमिदं महनीयकाव्यं

तातेन यद् विरचित रघुनाथभक्त्या

संसार सागर तटे नवरत्नलाभं

तत् सत्वरं निशमितं पठितंचदत्ते । 4

1. साकेत सौ० — 2/23

2. साकेत सौ (स्वस्ति) — रेवा प्रसाद द्विवेदी)

3. साकेत सौ० — 1/2

4. साकेत सौ० —श्लोकायनम् में (निलिम्ब त्रिपाठी जी की कृत)







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

जब गुरु भी शिष्य की योग्यता से हर्षातिरेक का अनुभव करके परमसंतोष का अनुभव करे एवं प्रशंसा के लिए विवश हो जाए, ऐसे मनीषी डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी के वैदुष्य एवं साकेतसौरभम् के काव्य सौन्दर्य की प्रशंसा अनिर्वचनीय है।

प्रख्यात प्रयाग विश्वविद्यालय के वैदुष्य मंडित प्रोफेसर गुरुवर डॉ० चण्डिका प्रसाद शुक्ल जी ने साकेतसौरभम् को लक्ष्य करके उसके रचयिता एवं अपने अत्यन्त प्रिय शिष्य डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी को साक्षात् भास्कर के रूप में ही स्वीकार किया है—

“ धन्यं रामस्य चरितं धन्या देवगवी शुभा

धन्योऽयं भास्करः साक्षाद् धन्या तस्य कृतिर्नवा ॥ 1

श्री राम का दर्शन करने वाले तो धन्य हो ही जाते हैं, किन्तु साकेत सौरभम् में कवि के स्वरो में उन भक्तों को भी धन्य कर दिया, जो अश्रु पूरित नेत्रों से प्रभु का दर्शन लाभ तो नहीं कर सके, किन्तु वन पथ में बरसती धूल में हाथ बढ़ाकर श्री राम के चरण स्पर्श से प्रसन्नता की पराकाष्ठा पा गये—

“धन्यंरामपथेऽवापुः साश्रु संस्तीर्यपाणयः ।

रजोवर्ष पदस्पर्शं प्रहर्षं दर्शनं बिना ॥ 2

नारी के प्रति करुणा की अधिकता कवियों के हृदय में भी होती ही है, किन्तु साकेतसौरभम् के रचयिता ने सीता जी की मिथिला से विदाई के अवसर पर एक श्लोक में सारी करुणा सम्मिश्रित कर दी हैं। समृद्ध अयोध्या त्रैलोक्य सुन्दरी सीता जी के पहुँचने से तो बेहद जगमगा उठी, किन्तु जिस मातृभूमि में धरती की बेटी पलीं, बढ़ी उस मिथिला की एवं वहाँ के निवासियों की दशा क्या हुई, इसके बारे में कवि ने विस्तार से

1. साकेत सौ० —धन्यकृतिः में (डॉ० चण्डिका प्रसाद)

2. साकेत सौ० —2/34







कहना उचित नहीं समझा। त्रैलोक्य सुन्दरी सीता जैसी अपनी अनमोल निधि से विछुडकर मिथिला शिथिला हो गयी अर्थात् उजड़ गयी, अब वहाँ क्या बचा, जिससे धैर्य धारण किया जाए ? यहाँ शिथिला शब्द इतना सटीक प्रयुक्त हुआ है कि मिथिला के साथ न केवल नाद सौन्दर्य की अभिवृद्धि कर रहा है, बल्कि उसकी समग्र व्यथा को अत्यन्त संक्षिप्त रूप में व्यक्त करते हुए युगीन परिप्रेक्ष्य पर भी दृष्टि डालने के लिए विवश कर रहा है। कवि की दृष्टि से हर अयोध्या को जगमगाने के लिए आज भी हर मिथिला शिथिला हो जाती है। अर्थात् कन्या पक्ष के लोग बेहद शिथिल से हो जाते हैं।

पिता के वचन का पालन श्री राम अत्यन्त प्रेम पूर्वक करते हैं चौदह वर्षों के वनवास की तो बात बहुत बड़ी हैं, क्षणभर के लिए भी वन की कल्पना से प्रायः व्यक्ति का हृदय भयाकान्त हो जाता है।

अयोध्या का राज्य छोड़कर नंगे पाँव वन में चलने वाले श्री राम को इतना आत्म संतोष है कि वे पिता के वचन पालन में अनन्त काल तक नरक को भी सहर्ष शिरोधार्य कर सकते हैं। आज के युग में पिता के प्रति उपेक्षा, अशिष्टता एवं हिंसात्मक व्यवहार करने वाले स्वार्थी पुत्रों को प्रकारान्तर से दिव्य प्रेरणा प्रदान करते हुए कवि ने लिखा है—

“पितृवचः परिपालन हेतवे

किमिह सावधि काननवर्तनम्

निरवधि प्रविशेत् सरयूतटी

जनिरयं निरयं रघुनन्दनः॥ 1

यही कारण है कि ऐसे पारिवारिक प्रसंग न केवल प्रेरणा स्त्रोत है, अपितु सर्वथा प्रासंगिक भी है, साकेतसौरभम् में यह प्रदर्शित किया गया है कि







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

वाल्मीकि जैसे महामनीषी ने पिता का अन्तर्मनसे सम्मान करने वाले श्री राम की प्रशंसा में कहा है कि उनका पावन आचरण विश्व में स्तुत्य होगा और भविष्य में वहीं प्रचलित होगा कि राम के समान ही आचरण करना चाहिए, न कि रावण की तरह दुराचरण करना चाहिए।

कौशल्यातनयो विहाय विपुलं साम्राज्य सम्पत्सुखं  
लक्ष्मीशेषसमन्वितोऽद्य भगवन् दृष्टोऽसि वन्यांजले  
यत् किञ्चित् क्रियते स्वकीय जनकं सम्मानितुं श्रीमता  
तन्नूनं भवति भविष्यसमये सनातनी संस्कृतिः॥ 1

साकेतसौरभम् में शबरी को आयुर्वेद (जड़ी-बूटियों) द्वारा आदिवासियों को दवा देने एवं प्रेरणा देने का कार्य करती हैं। परिपाटी से हटकर महाकवि ने आदिवासियों की गरिमा को बढ़ाया है, जो अन्य रामकथा परक महाकाव्यों की शैली से हटकर हैं कवि ने गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा का शबरी को एक प्रबल उदाहरण बताया है और कहा है कि गुरु के निर्देशानुसार कि राम मिलेंगे और इस दृढ़ विश्वास के साथ शबरी राम दर्शन की सुदीर्घ प्रतीक्षा करती रही और अन्ततः भगवद्दर्शन हुए—

“रामं कान्तमिवोशती सतिलकं भालं सदा बिभ्रती  
कुट्यां साश्रुविलोचना बहिरहो सन्तर्जयन्ती वटून्  
त्रैताग्नौ हुतराक्षसा सुरगणान् प्रत्यक्षमाजुहवती  
वैराग्येण वृताऽपि लोक —जननी रागान्विताऽवर्तत। 2

यह प्रसंग वाल्मीकि रामायण में आये हुए शबरी प्रसंग की ही भाँति समाज की दृष्टि से अनुकरणीय ही नहीं है अपितु सर्वथा प्रासंगिक है।

1. साकेत सौ० 2—55

2. साकेत सौ० — 3/ 83







जटायु के प्रकरण में साकेतसौरभम् की मौलिक विशेषता है कि जटायु भगवान राम की ओर देखते ही नहीं और कवि की धारणा है कि उपकारी जटायु कृतज्ञ राम को अपने सामने देखते हुए संकुचित हो रहे हैं कि घर हो या वन ऐहिक दृष्टि हो या आयुष्मिक चिन्तन , युद्ध की भीषणता हो या दाम्पत्य स्नेह सम्बंध का निर्वाह , जीवन के सुखद क्षणों की आनन्दानुभूति हो अथवा विपत्तियों से भरी अत्यन्त क्लेशपूर्ण मकटवी की कथा पाठकों को सर्वत्र अनुप्राणित करता हैं । आदिकवि वस्तुतः वेदों में वर्णित परमतत्त्व का वर्णन रामायण में श्री मन्नारायण तत्त्व के प्रतीक स्वरूप में सम्यक् रूपेण निरूपित है ।

रामायण और साकेतसौरभम् में सुग्रीव और राम की मित्रता होती हैं उसके उपरान्त ही सुग्रीव राम से अपनी मनोदशा का वर्णन करते हुए भगवान श्री राम से स्निग्ध मधुर वाणी में कहते हैं कि मेरे भ्राता बालि ने मेरी पत्नी और राज्य मुझसे छिन लिये हैं, उसी के भय से त्रस्त उद्भ्रान्तचित्त होकर मैं इस आरण्य में निवास कर रहा हूँ। इस प्रकरण को सुनकर भगवान राम ने कहा अहंकारी व्यक्ति संसार में दीर्घायु नहीं होता और बालि का बध भी मेरे तूणीर में संग्रहीत हुए ये सूर्यतुल्य मेरे ये बाण अवश्य गिरेगें, इस प्रसंग के द्वारा जनमानस के लिए लोकमान्यता बन गई कि जो व्यक्ति भाई की सम्पदा लेकर भाई को घर से निर्वासित करता है उसे राम के बाणों का लक्ष्य बनना पड़ता है। मानव इस सृष्टि का सर्वाधिक संवेदनशील प्राणी हैं छोटी-छोटी घटनाएं एक जीव को दूसरे जीव के प्राप्त व्यवहार मनुष्यों के हर्ष-विषाद , लाभ, हानि आदि को शीघ्र प्रभावित करते हैं । समाज में रहने के कारण उसका सम्बंध भी मानव जीवन से लेकर पशु पक्षी तक फैला हुआ है।

रामराज्य सात्विक शक्तियों से सम्पन्न और राज्यसिंहासन पर विराजमान त्रिभुवन-विजयी श्री राम में राजर्षि का गुण गुरुजनों का







वाल्मीकि रामायण एवं साकेत सौरभम् के परिप्रेक्ष्य में रामकथा की वर्तमान में प्रासंगिकता

शासकों से पहले पूजा का विधान बताया है। इसके अन्तर्गत प्राच्य एवं पाश्चात्य नीति सम्बंधी चिन्तन तथा नीति और नैतिकता के अन्तर को स्पष्ट किया गया है। लोक मर्यादा, लोकहित, एवं रामराज्य के सदगुणों का विवेचन करते हुए यह व्यक्त किया गया है कि वैदिक काल से अद्यावधि सत् ही समाज का संरक्षक रहा है सत् ही नीति का मूलाधार है और यह नीति विश्व की पालिका है।

साकेतसौरभम् में महाकवि त्रिपाठी जी को पिता और पुत्र के मध्य युद्ध क्रिया अशोभनीय प्रतीत हुई है इसीलिए इन्होंने अपने दिग्विजय सर्ग में लवकुश राम के मध्य युद्ध का वर्णन नहीं किया है अपितु साहित्य रस रुपी अमृतमयी वाणियों से राम को मंत्र मुग्ध करके मूर्च्छित कर दिया है—

“ययुं निगृह्य तौ वीरौ वाहिनोमस्त्रवर्षणैः

रामञ्च निन्यतुर्मूर्च्छां साहितीर सवर्षणैः॥१

इस रामकाव्य में यह भी उल्लेख किया गया है कि सम्पूर्ण लोकों की प्रजाओं द्वारा आनन्दित सीता और राम की तरह सदगुणी मनुष्य ही भारतवर्ष का नीतिपूर्वक संचालन करके सम्पूर्ण विश्व का कल्याण कर सकेगा। जिस प्रकार राम का नैतिक आचरण रावण के अनैतिक आचरण को परास्त कर दिया था, यह सम्पूर्ण लोकवन्दित राम कथाओं में प्रतिपादित है। राम की कथाएं हमें यही प्रगति पथ बताती हैं कि समाज में कालनेमि और रावण के समान अनैतिकता पूर्ण मानव का शासन सुचारु रूप से नहीं चलेगा। इन प्रसंगों का मंचन करके आज भी हमारे लोक-भाव को विकसित किया जा सकता है। डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी ने राम का वही रूप चित्रित किया है, जो रामकथा के सम्पूर्ण काव्यों में सर्वथा अनुकरणीय हैं। घर हो चाहे वन प्रेम सम्बंध हो अथवा युद्ध की







भीषणता , मातृभाव हो अथवा पति की मर्यादा सभी सम्बंधों में राम का आदर्श प्रस्फुटित होता है। आज भी समाज को एक एक घटक राम के इस आदर्श जीवन से प्रभावित होता है और कर्तव्य कर्म में उन्हीं के जीवन की दुहाई देता है। यह आकर्षण यह महत्व और यह निष्ठा हमें राम जीवन के सत्पक्ष की ओर खींच ले जाती हैं । यही सत् जीवन का आधार है और यही उन्नयन का एक मात्र सोपान भी है।

रामायण मानस एवं साकेतसौरभम् आदि रामकथा रूपी महाकाव्यों के द्वारा मानवता का चरम विकास राम के सार्वभौम नीतियों के सम्यक् निर्वाह से ही सम्भव हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वाल्मीकि रामायण की रामकथा रामकाव्यधारा के लिए एक ऐसे स्रोत का कार्य करती है, जिसकी धारा कभी सूखती नहीं है। आगे चलकर अनेक कवियों एवं साहित्यकारों ने रामकाव्य धारा को आगे बढ़ाया जिसमें रामचरित मानस विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मंचन की दृष्टि से राधेश्याम कथावाचक द्वारा विरचित रामकथाकाव्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है इसी कड़ी में साकेतसौरभम् का भी अपना अद्भुत योगदान है।

वर्तमान समय में वाल्मीकि रामायण की आधार शिला पर बनने वाले जितने भी रामकाव्य हुए हैं वे सभी हमारे समाज एवं संस्कृति को एक नयी दिशा देने में समर्थ हैं । यही कारण है आदिकवि वाल्मीकि से लेकर डॉ० त्रिपाठी द्वारा विरचित साकेतसौरभम् की कड़ी तक के सभी काव्य पूर्णतः प्रासंगिक है अनुकरणीय है और प्रेरक भी है।















## सप्तम् अध्याय

### उपसंहार

(क) उपलब्धि एवं उपसंहार







## अध्याय -7

## उपलब्धि एवं उपसंहार

मानवता जब अपने पन्थ पाथेय से भटक जाये गीत, संगीत मन्द हो जाये तब नवीन एवं प्राचीन कवियों की रचनाएं , साहित्यकार संगीतगीत और काव्य की आवश्यकता होती हैं। जो प्रत्येक समय नूतन आनन्दानुभूति संस्कार सुरभि प्रदान कर सके। आदिकवि वाल्मीकि एवं त्रिपाठी जी सरस्वती के उन वरदपुत्रों में से है जिनकी काव्य कृतियाँ राम के आदर्श रूप को जन जन के हृदय में व्याप्त किया है, जो आज भी हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक रामचरित्र की सदाचारमयी यशोगाथा के रूप में परिव्याप्त है और सब जनमानस एक स्वर में कहते हैं " रामवत् आचरितव्यम् न रावणवत् " जीवन का ऐसा कौन सा क्षेत्र है? जिसका वाल्मीकि जी और त्रिपाठी जी ने स्पर्श न किया हो और उसे आदर्श से मण्डित न किया हो।

एक ओर वे व्यक्ति को नीति की शिक्षा दे रहे हैं तो दूसरी ओर परिवार, समाज , राष्ट्र और समग्र विश्व भी उनके काव्यों द्वारा नैतिक शिक्षा को ग्रहण कर रहा है। शिक्षा, रणक्षेत्र , चतुर्वर्ग सभी से सम्बंधित अमूल्य उपदेश इनके काव्यों में समाहित हैं। ऐसे लोकोत्तर विश्वगुरु कवि का अवगाहन करके प्रत्येक पाठक अपने को सत्त्वस्थ रूप में पहुँचा सकता है।

इस प्रकार इन रामकाव्यों की सहायता से व्यक्ति उर्ध्वारोहण करता हुआ आत्मोत्थान के चरम —शिखर पर पहुँचने में सक्षम हो सकता है। त्याग, संतोष परोपकार, इन्द्रिय निग्रह, आदि सद्गुण हमारे वैयक्तिक विकास में सहायक होते हैं । इन राम काव्यों की भाषा सरल मधुर एवं स्पष्ट हैं। रामायण आदि काव्य को "चतुर्विंशति साहस्री संहिता" कहते हैं अर्थात् इसमें 24 हजार श्लोक हैं, ठीक उतने ही जितने गायत्री के अक्षर है। प्रत्येक हजार श्लोक का पहला अक्षर गायत्री मंत्र के ही अक्षर से क्रमशः







आरम्भ होता है। रामायण हिन्दू स्मृति का वह अंग है जिसके माध्यम से रघुवंश के राजा राम की गाथा कहीं गयी है। रामायण के सात अध्याय हैं जो काण्ड के नाम से जाने जाते हैं। साकेतसौरभम् भी आठ सर्गों में अवतार, संस्कार, संकल्प, सहकार, उद्योग, विक्रम अभिषेक, दिग्विजय में उपनिबद्ध हैं।

साकेतसौरभम् महाकाव्य में सूक्तिपरक वाक्यों का प्रचुर मात्रा में सन्निवेश महाकाव्य को और अधिक रोचकता प्रदान करता है। भाषा सरल, मधुर एवं स्पष्ट है कुछ प्रमुख पात्रों यथा राम, लक्ष्मण, रावण आदि को छोड़कर अन्य पात्रों यथा— सीता, दशरथ, गुरु वशिष्ठ, विश्वामित्र, कैकेयी, कौशल्य, मेघनाद, सुग्रीव विभीषण आदि प्रभृत पात्रों की योजना सूक्ष्म रूप में है। अधिकांश कथानक के संवेदनशील प्रसंगों पर समानान्तर हिन्दी काव्यानुवाद के कारण यह महाकाव्य अत्यन्त लोकप्रियता को प्राप्त हो रहा है। इसमें प्रत्येक घटना इस ढंग से आगे बढ़ती है कि पाठकों की उत्सुकता बढ़ती ही जाती है। शब्दालङ्कार एवं अर्थालङ्कार दोनों की अधिकता काव्य की चारुता में बढ़ावा देता है। इस महाकाव्य का शास्त्रीय सिद्धान्तों की कसौटी पर समीक्षा करने पर परखने पर एक लोकप्रिय, उत्तम एवं उत्कृष्ट रचना सिद्ध होती है।

रामायण और साकेतसौरभम् का शब्द विन्यास अधिक आकर्षक ढांचे में ढाला गया है, जो ओज और माधुर्य का एवं प्रसाद उष्मा और लालित्य का एक आश्चर्य है इन काव्यों की पदावली में केवल कवित्व का सत्य और महाकाव्य की शक्ति ही नहीं है, अपितु विचार भाव या विषय की अनुभूति का अन्तरंग स्पन्दन भी है। दोनों काव्यों में एक उच्च कवि आत्मा और अन्तः प्रेरित प्रज्ञा ही कार्य कर रही हैं, दोनों में ही वेद, उपनिषदों का साक्षात् अन्तर्ज्ञानात्मक मन बौद्धिक कल्पना के पर्दे के पीछे चला गया है।



संस्कृत भाषा

संस्कृत भाषा हि हिन्दु धर्म की मूल भाषा है। इस भाषा में वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थ लिखी गई हैं। यह भाषा भारत के अनेक भागों में प्रचलित है।

संस्कृत भाषा की उत्पत्ति प्राचीन भारत में हुई। यह भाषा अनेक शताब्दों से प्रचलित है। इस भाषा में अनेक ग्रन्थ लिखी गई हैं।

संस्कृत भाषा की विशेषता यह है कि यह भाषा अनेक शताब्दों से प्रचलित है। इस भाषा में अनेक ग्रन्थ लिखी गई हैं।

संस्कृत भाषा की विशेषता यह है कि यह भाषा अनेक शताब्दों से प्रचलित है। इस भाषा में अनेक ग्रन्थ लिखी गई हैं।

संस्कृत भाषा की विशेषता यह है कि यह भाषा अनेक शताब्दों से प्रचलित है। इस भाषा में अनेक ग्रन्थ लिखी गई हैं।

संस्कृत भाषा की विशेषता यह है कि यह भाषा अनेक शताब्दों से प्रचलित है। इस भाषा में अनेक ग्रन्थ लिखी गई हैं।



ये भारतीय महाकाव्य एक अधिक महान पूर्ण राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक कार्य की पूर्ति के लिए रचे गये हैं, इसीलिए इनकी उत्कृष्टता का सबल प्रमाण और क्या हो सकता है कि उच्च और निम्न संस्कृति और सर्वसाधारण दोनों श्रेणियों के लोगो ने इनका स्वागत किया और इन रामकाव्यों का आत्म सात किया हैं।

वस्तुतः रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत तथा अन्य रामकथा की धारा में आने वाले काव्यों का उपजीव्य रहा हैं। रामायण महाकाव्य है और महाभारत इतिहास है तथा श्रीमद्भागवत पुराण है। वाल्मीकि ने मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान रामचन्द्र के आदर्श चरित्र का अंकन रसात्मिका शैली के द्वारा किया है, जिसमें केवल श्रोत सुख देने वाले वर्णों का विन्यास न होकर सहृदयों के हृदयों को मुग्ध करने वाले वाग्विलास ही अधिक हैं।

महाभारत शान्त रस—प्रधान सुहृत्सम्मित काव्य है, जिसमें व्यासदेव ने भारतीय संस्कृति के ग्राह्य, आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक रूप का अंकन पाण्डव कौरव के संघर्ष के ब्याज से लिया हैं, इसी से यह मानवों के लिए सदाचार की सौम्य शिक्षा का विराट कोश है। श्रीमद्भागवत चरित—प्रधान होने से पुराण है, जिसमें मानवों के कल्याण के निमित्त धराधाम पर अवतीर्ण होने वाले भगवान के नाम चरित्रों अवतारों तथा तत्सम्बद्ध कथाओं का मुख्यतया विवरण विन्यस्त है। स्वरूपगत विभेद के अतिरिक्त एक और भी भेद दृष्टिगोचर होता हैं वाल्मीकि रामायण रामचन्द्र के कार्यों का ही मुख्यतया प्रतिपादन होने से कर्म प्रधान है। महाभारत आचार, नीति तथा लोक व्यवहार का विशाल भंडार होने के कारण तथा श्री मद्भागवतगीता जैसे अध्यात्म प्रधान ग्रन्थ हेतु स्फुटतया ज्ञान—प्रधान है। भागवत लोक में न्याय, अन्याय, राग, द्वेष, मैत्री, कलह,



卷之四



के समस्त जागरुक संघर्ष को मिटाने तथा सरस सामंजस्य को स्थापित करने वाली भगवान की मधुर लीलाओं का आगार होने के कारण नितान्त भक्ति प्रधान हैं।

वाल्मीकीय रामायण का महत्व केवल काव्य दृष्टि से ही नहीं है, प्रत्युत वह नाना वैष्णव सम्प्रदायों में एक उपासक धार्मिक ग्रन्थ भी हैं। इसलिए रामायण को आश्रय मानकर अनेक व्याख्या ग्रन्थों की रचना भिन्न-भिन्न युगों में की गई है। डॉ० ओफेक्ट के अनुसार टीकाओं की संख्या 30 हैं। मध्ययुग में रामायण की लोकप्रियता इतनी अधिक थी कि पन्द्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में कम से कम दस टीकाएं लिखी गयीं जो व्याख्या की दृष्टि से बहुत ही आसामान्य गुणों से सम्पन्न हैं।

वाल्मीकि के काव्य की सबसे बड़ी विशिष्टता है उद्घातता । पात्रों के चित्रण में प्रसंगों के वर्णन में प्रकृति के वर्णन में तथा सौन्दर्य की स्फूर्ति में सर्वत्र उदात्तता स्वाभाविक रूप से विराजती है। आदिकवि के इस काव्य मंदिर की पीठास्थली राम तथा जानकी का पावन चरित्र हैं। रामशोभन गुणों के भव्यपुंज हैं। वाल्मीकि ने ही हमें रामराज्य की सच्ची कल्पना देकर संसार के सम्मुख एक आदरणीय आदर्श प्रस्तुत किया। राम कृतज्ञता की मूर्ति है, सम्पूर्ण मानव है, वे आदर्श पति है सीता के प्रति राम का सन्ताप चतुर्मुखी है। स्त्री (अबला) के नाश होने से वे करुण से संतप्त है। आश्रिता के नाश से दया (आनृशंस्य) के कारण, पत्नी (यज्ञ के सहधर्म चारिणी के नाश से शोक के कारण तथा प्रिया (प्रेमपात्री) के नाश प्रेम (मदन) के कारण संतृप्त हो रहे हैं।

‘पत्नी नष्टेति शोकेन प्रियेति मदनेन च॥







आदिकवि की यह रचना संस्कृत वाङ्मय का अत्यन्त अभिराम निकेतन है। सहजता और सरसता इसका सर्वस्व हैं विभिन्न अलंकारों द्वारा रसों की अभिव्यक्ति, प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण, वर्णन की यथार्थता हृदय ग्राहिता इसके अनुपम गुण हैं।

आदिकवि वाल्मीकि की इसी शैली का उदात्त उत्कर्ष हमें महाकवि डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी जी द्वारा प्राप्त होता है। निःसन्देह अपनी काव्यकला को उत्कर्ष की चरम सीमा पर पहुँचने में वाल्मीकि ही त्रिपाठी जी के प्रेरणा स्रोत रहे हैं। त्रिपाठी जी के काव्यों की भाषा इतनी सरल और प्रवाहपूर्ण हैं कि उसे समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। न कहीं क्लिष्ट कल्पना है, न कृत्रिमता। अलंकारों को गढ़ने का प्रयत्न नहीं है। वे स्वाभाविक रूप से आ गये हैं गागर में सागर भरने की अद्भुत क्षमता इस कवि में हैं साकेतसौरभम् के केवल 8 सर्गों में महाकाव्य की परिभाषा में जितने विषय गिनाये गये हैं, उन सबका वर्णन करते हुए कवि ने रघु की 24 पीढ़ियों का वृत्तान्त अत्यन्त सफलतापूर्वक बताया है।

रामकथा काव्य की टीकाओं के भिन्न-भिन्न संस्करण मिलते हैं इनमें से सर्वार्थसार रामायणदीपिका, रामायण भूषण, अमृत कतक अथवा कतक, रामायण टीका, रामायण शिरोमणि, मनोहरा, धर्माकूतम् वरदराजकृत विवेकतिलक, आदि प्रमुख हैं।

इसीक्रम में संस्कृत पत्रकारिता का भी विकास होता रहा जिनमें विशेषरूप से पण्डित (काशी विद्या-सुधानिधि) पत्रिका वाराणसी जून 1866, विद्योदय संस्कृत मासिक पत्र, लाहौर 1869) मंजुभाषिणी-मासिक पत्रिका कोंची 1902, संस्कृतरत्नाकर-मासिक पत्रिका जयपुर 1904,







जयन्ती दैनिक पत्र 1906, संस्कृत चन्द्रिका मासिक पत्रिका कोल्हापुर 1897, मित्र गोष्ठी (काशी), शारदा प्रभात (प्रयाग), पद्यवाणी (कलकत्ता), दूर्वा (भोपाल), अर्वाचीन संस्कृतम् (दिल्ली) इत्यादि विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषा हैं संसार की समस्त परिष्कृत भाषाओं में संस्कृत ही प्राचीनतम हैं। ईरानी भाषा 'अवेस्ता' और भारतीय भाषा 'संस्कृत' समरूप से विकसित भाषाएँ हैं और ग्रन्थ की दृष्टि से ऋग्वेद प्राचीनतम ग्रन्थ है। संस्कृत भाषा में जो एक रूपता दिखाई पड़ती है। यह सब पाणिनी के नियमन का परिणाम है। अष्टाध्यायी के द्वारा इन्होंने संस्कृत व्याकरण को एक सुव्यवस्थित दिशा प्रदान की।

वैदिक काल से लेकर आज तक संस्कृत भाषा की धारा अक्षुण्ण है, प्रायः विद्वानों ने यह माना है भारत का समस्त प्राचीन ज्ञान भण्डार संस्कृत में ही है। भारतीयों के सभी धर्म ग्रन्थ पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृतिग्रन्थ, दर्शन, धर्मशास्त्र, महाकाव्य, काव्य, नाटक, गद्यकाव्य, गीतिकाव्य, आख्यान—साहित्य आदि संस्कृत में ही हैं। इतना ही नहीं व्याकरण, काव्यशास्त्र, गणित, ज्योतिष, नीतिशास्त्र, कामशास्त्र आयुर्वेद, धनुर्वेद, वास्तुकला, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, इतिहास, छन्दशास्त्र और कोश—ग्रन्थ तक संस्कृत में ही हैं। ज्ञान—विज्ञान का ऐसा कोई अंग नहीं है जो संस्कृत भाषा में उपलब्ध नहीं है। यह प्राचीन, ऋषि, महर्षियों, कवियों और तत्त्वज्ञों के अथक परिश्रम का ही फल है कि इतना विस्तृत वाङ्मय संस्कृत में उपलब्ध है।

रामकथा काव्यों में प्रायः वाल्मीकि रामायण, आध्यात्म रामायण तथा रामचरितमानस की कथा वस्तुओं को आधार बनाया गया है। राम सम्बंधी महाकाव्यों की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं मिलता है। रामायण







एवं रामकथा ने भारतीय जन-जीवन को इतना प्रभावित किया है कि कवित्व में गौरव प्राप्ति के लिए मुख्य राम-कथा या उससे संबद्ध कथानक का आश्रय लेना आवश्यक सा हो गया है। वाल्मीकि की प्रौढ़ शैली एवं रामकथा का समन्वय मणिकांचन संयोग सा हो गया है। अतः परवर्ती कवियों नाटककारों और चम्पूकारों ने रामायण को अपना उपजीव्य काव्य माना है तथा अपने दृष्टिकोण से सम्बद्ध अंशों का संकलन किया हैं।

साकेत सौरभम् महाकाव्य में आर्यों का आचार शास्त्र एवं धर्मशास्त्र हैं यह मानव जीवन का सर्वांगीण आदर्श प्रस्तुत करता हैं धार्मिक दृष्टि से प्राचीन संस्कृति , आचार, सत्य धर्म , व्रत -पालन , विविध यज्ञों का महत्व आदि का पूरा इतिहास प्रस्तुत करता हैं। सामाजिक दृष्टि से यह पति पत्नी के सम्बंध , पिता -पुत्र के कर्तव्य , गुरु शिष्य का पारस्परिक व्यवहार , भाई का भाई के प्रति व्यवहार व्यक्ति का समाज के प्रति उत्तरदायित्व , आदर्श पिता-माता -पुत्र -भाई -पति एवं पत्नी का चित्रण तथा आदर्श गृहस्थ जीवन की अभिव्यक्ति करता हैं। इसमें पितृभक्त, पुत्र प्रेम , मातृस्नेह एवं जन साधारण के प्रति सौहार्द का सुन्दर चित्रण है। सांस्कृतिक दृष्टि से यह राम राज्य का आदर्श , पाप पर पुण्य की विजय, लोभ पर त्याग का प्राबल्य, अत्याचार और अनाचार पर सदाचार की विजय वानरों में आर्य संस्कृति का प्रसार, यज्ञादि का महत्व, जीवन में नैतिकता , सत्यनिष्ठा और कर्तव्य के लिए बलिदान का आदर्श प्रस्तुत करता हैं। राजनीतिक दृष्टि से ये ही राजा के कर्तव्य एवं अधिकार, राजा-प्रजा -सम्बंध उच्चनागरिकता, उत्तराधिकार-विधान, शत्रुसंहार, पाप विनाशन, सैन्य संचालन आदि विषयों पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता हैं।

रामकथा काव्यधारा में साकेतसौरभम् एक विलक्षण महाकाव्य है इसकी



CC0. Maharishi Mahesh Yogi Vedic Vishwavidyalaya (MMYVV), Karoundi, Jabalpur,MP Collection.



## उपलब्धि एवं उपसंहार

विलक्षणता , भाव एवं शिल्प दोनों पक्षों में दिखायी पड़ती हैं। डॉ० भास्कराचार्य द्वारा विरचित इस महाकाव्य में भारतीय सभ्यता झलकती है। इसकी रचनाओं में हमारी संस्कृति का विश्व रंगमंच पर भव्य रूप दिखलायी पड़ता है। इस काव्य की वाणी राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है।

राष्ट्रमंडल तथा विश्वकल्याण का मंजुल सामरस्य त्रिपाठी जी के काव्यों में दृष्टिगत होता है इस महाकवि की वाणी में जिस प्रकार आदिकवि वाल्मीकि की रसमयी धारा प्रवाहित होती है, उसी प्रकार उपनिषदों तथा गीता का अध्यात्म भी मंजुल रूप में अपनी अभिव्यक्ति पा रहा है भारतीय ऋषियों के द्वारा प्रचारित चिरन्तन तथ्यों को मनोभिराम शब्दों में भारतीय जगत के हृदय में उतारने का काम त्रिपाठी जी की कविता ने सुचारु रूप से किया। कविता का प्रणयन मानव —हृदय की शाश्वत प्रवृत्तियों तथा भावों का आलम्बन कर दिया गया है। यही कारण है कि इनके भीतर ऐसी उदात्त भावना विद्यमान है जो भारतीयों को ही नहीं, प्रत्युत मानव मात्र को सदा प्रेरणा तथा स्फूर्ति देती रहेगी। यही इस महाकाव्य की विलक्षण स्थिति है।

महाकाव्य की दृष्टि से साकेतसौरभम् का वस्तुविधान भी प्रायः परम्परा से चले आते हुए रामकथा काव्यों तथा वाल्मीकि रामायण के अनुसार ही हैं। इस काव्य के प्रासंगिक एवं आधिकारिक प्रसंगों का स्वरूप पूर्ववर्ती रामकथा धाराओं से अलग नहीं हैं। विषय सम्बंधी कथानक, वर्णन सम्बंधी कथानक के नवीन रूप अवश्य दिखाई पड़ते हैं।

इसी कारण साकेतसौरभम् के कथानक में एक नयापन अवश्य दिखाई पड़ता है ।

साकेतसौरभम् के शिल्प विधान पर अगर हम दृष्टि पात करते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि इसकी भाषा , अत्यन्त सरल, सहज , एवं प्रांजल है।



卷之四



शास्त्रीय दृष्टि से यह काव्य प्रसाद गुण समन्वित वैदर्भीरीति में उपनिबद्ध हैं, इसमें भाव भाषा का समन्वय , सरलता , सुबोधता आदि सभी गुण सन्निहित हैं। इसकी भाषा सुन्दर, सरल, ललित , प्रांजल एवं परिष्कृत हैं। डॉ० त्रिपाठी जी की भाषा पर असाधारण अधिकार हैं वे प्रसंग एवं भावों के अनुरूप शब्दावली का चयन करते हैं, अर्वाचीन महाकाव्य होने पर भी कालिदास आदि की भाषा के तुल्य प्रौढ़ता एवं परिष्कृत परिलक्षित होता है । कथानक के संवेदनशील स्थलों पर समानान्तर हिन्दी काव्यानुवाद के कारण इस प्रबन्ध के अत्याधिक लोकप्रियता का हेतु बनता दिखलाई पड़ता है।

भाव प्रवणता की दृष्टि से साकेतसौरभम् में “भक्ति रस” भी अंगी रस के रूप में दिखाई पड़ता है । कवि ने लगभग सभी पात्रों के नायक राम विषयक अनुरक्ति का अभिव्यंजन पूरी कृति में किया है ,अन्य अद्भूत, भयानक , शृंगार, रौद्र, वात्सल्य, वीर आदि रस अंग के रूप में अभिव्यंजित हुए हैं। डॉ० त्रिपाठी ने अपने काव्य में रसों एवं भावों का विविध चित्रण किया है। चरित्रों के अतिरिक्त प्रकृति चित्रण में भी कवि ने भाव, विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों की ऐसी विलक्षण सृष्टि की हैं जो देखते ही बनती हैं ।

आदिकाव्य रामायण के साथ जब हम साकेतसौरभम् की तुलना करते हैं तो देखते हैं कि कथा विषय की दृष्टि से प्रायः कथानक एक होते हुए भी अनेक प्रसंगों में विविधता एवं नवीनता दिखलाई पड़ती हैं । आदिकवि की वाणी पुण्यसलिला भागीरथी है, जिसमें अवगाहन कर पाठक तथा कवि अपने आपको पवित्र ही नहीं जानते, प्रत्युत रसमयी काव्यशैली के हृदयावर्जक स्वरूप के समझने में भी कृतकार्य होते हैं। काव्य तथा नाटकों







को विषय— निर्देश देने में रामायण एक अक्षुण्ण स्त्रोत हैं । रामायण तो वस्तुतः व्यास वाणी का विमल प्रसाद है। वह सचमुच विचार रत्नों का एक अगाध महार्णव है, जिसमें गोते लगाने वाला कवि आज भी अपने काव्य को चमत्कृत तथा अलंकृत बनाने के लिए नवीन जगमगाते हीरों को खोज निकाला हैं। महाकवि वाल्मीकि का भावपक्ष बड़ा ही सशक्त हैं उसमें कहीं सौन्दर्य चित्रण के भाव है तो कहीं विभिन्न रसों को अभिभूत करने वाली चमत्कारी चित्र हैं, प्रकृति चित्रण में तो कवि को महारत हासिल है। मानव एवं मानवेतर प्रकृति का तादात्म्य करके कवि ने अपने भाव पक्ष को गति दी हैं। जिसके अन्तर्गत अनेक भावों के साथ रसाभास के विविध पत्र मिल जाते हैं । मानव मन एवं मानव प्रकृति के अन्तर्गत आने वाले जितने भी भाव है, जितनी भी रसानुभूतियाँ हैं, वे सभी मानव कवि के समक्ष हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं।

साकेतसौरभम् महाकाव्य के प्रणेता डॉ० त्रिपाठी ने भी अपने काव्य के भाव पक्ष को बड़ी कुशलता से प्रस्तुत किया है चाहे वह सौन्दर्य चित्रण हो चाहे भावानुभूति कोई अन्य अनुभूति हो इन सब की अभिव्यक्ति इस काव्य में दिखाई पड़ती हैं। प्रकृति चित्रण, प्रकृति के सौन्दर्य का चित्रण तथा रसानुकूल भावों के चित्रण भी डॉ० त्रिपाठी के इस काव्य में यत्र—तत्र सर्वत्र बिखरे हुए मिल जाते हैं। वाल्मीकि रामायण और साकेतसौरभम् की तुलना करते हैं तो वाल्मीकि रामायण स्वयं में एक उपजीव्य सिद्ध होता है यह महाकाव्य बाद के कवियों के लिए निः सन्देह रूप से एक आधार प्रस्तुत करता हैं। वाल्मीकि रामायण में जितने भी प्रसंग आये हैं चाहे वह सौन्दर्य चित्रण हो, प्रकृति चित्रण हो अथवा भिन्न— भिन्न रसों एवं भावों को व्यक्त करने वाले विराद चित्रण हो वे सभी बाद के कवियों के लिए भाव चित्रण का एक आधार बनते हैं। रामकाव्य परम्परा अन्यान्य काव्यों के







समान साकेतसौरभम् के प्रणेता डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी ने वाल्मीकि रामायण के भावचित्र वाले प्रसंगों को अपने काव्य में स्थान दिया है, इतना अवश्य है कि प्रसंगानुकूल कथ्य चित्रण में अपनी भाव प्रवणता एवं कल्पनाशीलता के द्वारा साकेतसौरभम् के अनेक प्रसंग कवि द्वारा चमत्कारिक रूप से मार्मिक बना दिये गये हैं। कवि की यही प्रसंगानुकूलता कवि के प्रभाव पक्ष को चित्रांकन को सफल बना देती है।

शिल्प की दृष्टि से भी कवि का शब्द विधान भाषा की मंजुलता , शैली का लालित्य, अलंकार विधान, प्रसंगानुकूल , छन्द योजना के द्वारा साकेतसौरभम् एक विलक्षण काव्य बन गया है। पहले से चले आते हुए शिल्प विधान को नवीन रूप में प्रस्तुत करने में कवि को पूरी सफलता मिली है।

वर्तमान में प्रासंगिकता की दृष्टि से सम्पूर्ण रामकाव्य धारा आज भी सर्वथा प्रासंगिक है। चाहे वाल्मीकि रामायण के चरित्र हो, चाहे अध्यात्मरामायण के, रामचरित मानस के चरित्र हो या साकेतसौरभम् के सभी अपने कथा चरित्र को सर्वथा निर्वहन करने में सफल है। आज हमारे समाज एवं सम्पूर्ण विश्व की मानवता के लिए आज भी राम, लक्ष्मण, सीता जैसे चरित्रों का आदर्श हनुमान जैसे वीर का कथा चरित्र तथा रावण कुम्भकर्ण जैसे अनैतिक आचरण वाले कथा चरित्रों की तुलना करने के लिए हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न कार्यों का आयोजन होता रहता है। तथा उसके माध्यम से हमारे धर्म, हमारी संस्कृति तथा भावी पीढ़ी का आचार विचार भी परिष्कृत होता रहता है , इसीलिए इस प्रकार के रामकथा काव्य हमारे देश धर्म एवं संस्कृति के लिए सर्वथा उपादेय है और रहेंगे भी।







## सन्दर्भ ग्रन्थों की सूची

| क्रमांक | पुस्तक का नाम   | प्रेणता  |
|---------|---|--|
| 1       | वाल्मीकि रामायण (महाकाव्य)<br>(गीताप्रेस —गोरखपुर) सं०2066 छत्तीसवॉ संस्करण पुर्नमुद्रण | आदिकवि वाल्मीकि  |
| 2.      | साकेत सौरभम् महाकाव्य   | डा० भास्कराचार्य त्रिपाठी<br>(नाग, पब्लिशर्स दिल्ली)<br>प्रथम संस्करण 2003 |
| 3.      | जानकीहरण (महाकाव्य)   | (मित्र प्रकाशन , इलाहाबाद,1967)  |
| 4.      | रामचरित (महाकाव्य)  | अभिनन्दनकृत  |
| 5.      | उदारराघव (महाकाव्य)   | मल्लयाचार्य  |
| 6.      | रघुवंश (महाकाव्य)   | कालिदासकृत (पुनर्मुद्रण , दिल्ली)  |
| 7.      | सेतुबन्ध (महाकाव्य)   | राजा प्रवरसेन  |
| 8.      | —   |  |
| 9.      | रामायण मंजरी (महाकाव्य)   | क्षेमेन्द्रकृत   |
| 10.     | दशावतार चरित (महाकाव्य)   | क्षेमेन्द्रकृत   |
| 11.     | जानकी परिणय   | चक्रकविकृत   |
| 12.     | रामलिंगामृत   | अर्द्धत कवि द्वारा   |
| 13.     | संस्कृत साहित्य का इतिहास   | डॉ० वलदेव उपाध्याय   |
| 14      | संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास   | डॉ० कपिलदेव<br>द्विवेदी  |
| 15.     | काव्यप्रकाश   | आचार्य मम्मट   |
| 16.     | साहित्य दर्पण   | आचार्य विश्वनाथ  |
| 17.     | ध्वन्यालोक  | आचार्य आनन्दवर्धन  |
| 18.     | सीता चरितम्   | प्रो० रेवा प्रसाद द्विवेदी<br>चौ० वाराणसी                                  |







- |     |  |  |
|-----|--|--|
| 19. | जानकी जीवनम्   | प्रो० राजेन्द्र मिश्र —अक्षयवट प्रकाशन |
| 20  | रामकथा   | कामिल बुल्के                           |
| 21. | संस्कृत साहित्य का इतिहास  | वरदाचार्य                              |
| 22. | रस सिद्धान्त और सौन्दर्य शास्त्र   | डॉ० निर्मला जैन                        |
| 23. | रीतिकाव्य की भूमिका  | डॉ० नगेन्द्र                           |
| 24. | कुण्ठा एवं साहित्यसर्जना   | डॉ० मनमोहन शुक्ला                      |
| 25. | डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी की संस्कृत<br>काव्य रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन | डॉ० मधुकराचार्य त्रिपाठी               |
| 26. | छन्दोऽलंकार सौरभम्   | डॉ० राजेन्द्र प्रसाद                   |
| 27. | रामचरितमानस  | तुलसीदास (गीताप्रेस गोरखपुर )          |
| 28. | तुलसीदास कालीन राघवोल्लास  | राघवप्रसाद पाण्डेय                     |
| 29. | संस्कृत साहित्य का इतिहास  | मैकडॉनल                                |
| 30. | अरिनाशक दुर्गाशतकम्  | डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी              |
| 31. | मृत्कूटम्  | डॉ० भास्कराचार्य त्रिपाठी              |
| 32. | संस्कृत शिक्षण   | डॉ० रामसकल पाण्डेय                     |
| 32. | संस्कृत परिवेश और मध्य प्रदेश  | डॉ० निलिम्प त्रिपाठी                   |
| 33. | अष्टसिद्धयः  | डॉ० आजाद मिश्र                         |
| 34. | शुभाशंसा   | आचार्य श्री निवासरथ<br>(उज्जयिनी)      |
| 35. | धन्याकृति  | डॉ० चण्डिका प्रसाद शुक्ल<br>(प्रयाग)   |
| 36. | जयतात् कवीन्द्र  | आचार्य रामस्वरूप                       |
| 37. | स्वस्ति  | रेवा प्रसाद द्विवेदी                   |
| 38. | आधुनिक संस्कृत काव्यस्य<br>प्रगतिशीलत्व                                    | देववाणी सुवासः                         |








39. उत्तर रामचरितम् भवभूति
40. सुरभिः कामता प्रसाद त्रिपाठी  
(पीयूष) खैरागढ़
41. श्लोकायनम् सनातन
42. कुसुमांजलि डॉ० रमेश प्रसाद त्रिपाठी
43. रामायण तत्व दीपिका महेश्वर तीर्थ  
(वेकटेश्वर प्रेस से पत्राचार में प्रकाशित)
44. रामायण भूषण गोविन्दराज  
(कृष्णाचार्य द्वारा कृष्णकोर्ण से 1911 में तथा  
बेकटेश्वर प्रेस बम्बई से भी प्रकाशित)
45. अमृत कतक माधवयोगी  
(इस टीका के तीन कांड मैसूर  
विश्वविद्यालय से प्रकाशित है 1960—1971)
46. रामायण का विमर्शात्मकसंस्करण बडौदा विश्वविद्यालय से  
प्रकाशित
47. दि जनेसिस ऑव दि वाल्मीकि दे० सी० बुल्के  
रामायण रिसेन्शन्स
48. इण्डियन एपिक पोइट्री एम०एम० विलियम्स (लंदन)
49. डस रामायण दे० एच० याकोबी
50. जी०टी० हीलर हिस्ट्री आव ए० बेबर  
इण्डिया भाग—2 (लंदन 1869)
51. आनन्द रामायण ए० बेबर (बम्बई 1873)
52. दि रिडिल ऑव दि रामायण सी०वी० वैद्य
53. रामायण बालकाण्ड उण्ड पुराण दे० डब्लू किर्फल







54. पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ इण्डिया राय चौधरी
55. भारतीय इतिहास की रुपरेखा जयचन्द्र विद्यालंकार  
(भाग-1)
56. संस्कृत साहित्य का इतिहास (हिन्दी) वरदाचार्य



















